उच्चतर माध्यमिक पाठ्यक्रम

संस्कृत व्याकरण-३४६

पुस्तक-३

विद्याधनं सर्वधनप्रधानम्

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान

(शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार के अधीन एक स्वायत्त संस्थान)

ए-२४-२५, संस्थागत क्षेत्र, विभाग-६२, नोएडा-२०१३०९ (उत्तरप्रदेश)

वेबसाइट - www.nios.ac.in, टोल फ्री नंबर-१८००१८०९३९३

© राष्ट्रीय-मुक्त-विद्यालयी-शिक्षा-संस्थान National Institute of Open Schooling

प्रथम संस्करण २०२१ First Edition 2021 (Copies)

ISBN (Book 1)

ISBN (Book 2)

सचिव, राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान, ए-२४-२५, संस्थागत क्षेत्र, सेक्टर - ६२, नोएडा - २०१ ३०९ (उत्तरप्रदेश) द्वारा प्रकाशित। ..... द्वारा मुद्रित।

उच्चतर माध्यमिक
संस्कृत व्याकरण (३४६)

सलाहकार समिति

प्रो. सरोज शर्मा
अध्यक्ष
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा, उत्तरप्रदेश-२०१३०९

डॉ. राजीव कुमार सिंह
निदेशक (शैक्षिक)
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा, उत्तरप्रदेश-२०१३०९

पाठ्यक्रम निर्माण समिति

प्रो. अर्कनाथ चौधरी (समिति अध्यक्ष)
उपकुलपति
श्री सोमनाथ संस्कृत विश्वविद्यालय
वेरावल-३६२२६६ (गुजरात)

डॉ. नीरज कुमार भार्गव (समिति उपाध्यक्ष)
सहायक प्राध्यापक (संस्कृत विभाग)
रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द विश्वविद्यालय
बेलुड़ मठ, हावड़ा-७११२०२ (प. बंगाल)

डॉ. हरि राम मिश्र
सहायक प्राध्यापक
संस्कृत एवं प्राच्य विद्या संस्थान
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

स्वामी वेदतत्त्वानन्द
प्राचार्य
रामकृष्ण मठ विवेकानन्द वेद विद्यालय
बेलुड़ मठ, हावड़ा-७1१२०२ (प. बंगाल)

डॉ. विजेन्द्र सिंह
वरिष्ठ प्राध्यापक (संस्कृत)
शिक्षा निदेशालय, दिल्ली सरकार
नई दिल्ली

श्री मलय पोडे
सहायक प्राध्यापक (WBES) (संस्कृत विभाग)
राणीबाँध सरकारी महाविद्यालय
स्थान-राणीबाँध, मण्डल-बाँकुड़ा-७२२१३५
(प. बंगाल)

श्री सुमन्त चौधरी
सहायक प्राध्यापक (संस्कृत विभाग)
सबं सजनीकान्त महाविद्यालय
पत्रालय-लुटुनिया, रक्षालय-सबं
मण्डलम-पश्चिम मेदिनीपुरम-७२११६६
(प. बंगाल)

डॉ. राम नारायण मीणा
सहायक निदेशक (शैक्षिक)
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा, उत्तरप्रदेश-२०१३०९

संपादक मण्डल

डॉ. नीरज कुमार भार्गव
सहायक प्राध्यापक (संस्कृत विभाग)
रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द विश्वविद्यालय
बेलुड़ मठ, हावड़ा-७११२०२ (प. बंगाल)

स्वामी वेदतत्त्वानन्द
प्राचार्य
रामकृष्ण मठ विवेकानन्द वेद विद्यालय
बेलुर मठ, मण्डल-हावडा-७११२०२ (प. बंगाल)

पाठ लेखक

(पाठ १-८)
श्री मलय पोडे
सहायक प्राध्यापक (WBES)
(संस्कृत विभाग)
राणीबाँध सरकारी महाविद्यालय
स्थान-राणीबाँध, मण्डल-बाँकुड़ा-७२२१३५
(प. बंगाल)

(पाठ ९-११)
डॉ. नीरज कुमार भार्गव
सहायक प्राध्यापक (संस्कृत विभाग)
रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द विश्वविद्यालय
बेलुड़ मठ, हावड़ा-७११२०२ (प. बंगाल)

(पाठ १२-२०)
स्वामी वेदतत्त्वानन्द
प्राचार्य
रामकृष्ण मठ विवेकानन्द वेद विद्यालय
बेलुर मठ, मण्डल-हावडा-७११२०२ (प. बंगाल)

(पाठ २१-२७, ३०-३१)
श्री राहुल गाजी
अनुसन्धाता (संस्कृत विभाग)
जादवपुर विश्वविद्यालय
कलकता-७०००३२ (प. बंगाल)

(पाठ २८-२९)
श्री विष्णु पदपाल
अनुसन्धाता (संस्कृत अध्ययन विभाग)
रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द विश्वविद्यालय
मण्डल-हावडा-७११२०२ (प. बंगाल)

अनुवादक मंडल

डॉ. योगेश शर्मा
सहायक प्राध्यापक (संस्कृत विभाग)
संस्कृत, दर्शन एवं वैदिक अध्ययन विभाग
बनस्थली विद्यापीठ, राजस्थान-३०४०२२

श्री गैंदा राम जाट
वरिष्ठ अध्यापक (संस्कृत)
माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान, राजस्थान सरकार

सुश्री प्रियंका जैन
अनुसन्धाता
संस्कृत, दर्शन एवं वैदिक अध्ययन विभाग
बनस्थली विद्यापीठ, राजस्थान-३०४०२२

डॉ. राम नारायण मीणा
सहायक निदेशक (शैक्षिक)
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा, उत्तर प्रदेश-२०१३०९

श्री पुनीत त्रिपाठी
वरिष्ठ कार्यकारी अधिकारी
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा, उत्तर प्रदेश-२०१३०९

पाठ्यक्रम-समन्वयक

डॉ. राम नारायण मीणा
सहायक निदेशक (शैक्षिक)
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा, उत्तर प्रदेश-२०१३०९

रेखा चित्रांकन, मुखपृष्ठ चित्रण तथा संगणकीय विन्यास

मुखपृष्ठ चित्रण
स्वामी हररूपानन्द
रामकृष्ण मिशन
बेलुड मठ
मण्डल-हावडा-७११२०२ (प. बंगाल)

संगणकीय विन्यास
श्री कृष्णा ग्राफिक्स
दिल्ली

आपसे दो बातें...

अध्यक्षीय सन्देश

प्रिय विद्यार्थी,

'भारतीय ज्ञान परम्परा' पाठ्यक्रम के अध्ययन के लिए आपका हार्दिक स्वागत है।

भारत अति प्राचीन और अति विशाल है। भारत का वैदिक वाङ्मय भी उतना ही प्राचीन, प्रशसनीय और महान है। सृष्टिकर्ता भगवान् ही भारतीयों के सम्पूर्ण विद्याओं के प्रेरक है, ऐसा सिद्धान्त शास्त्रों में प्राप्त होता है। भारत के अच्छे विद्वान, सामान्य जनमानस तथा अन्य ज्ञानी लोगों का प्राचीन काल में आदान-प्रदान का माध्यम सस्कृत भाषा ही थी ऐसा सभी को ज्ञात है। इतने लम्बे काल में भारत के इतिहास में जो शास्त्र लिखे गए, जो चिन्तन उत्पन्न हुए, जो भाव प्रकट हुए वे सभी संस्कृत भाषा के भण्डार में निबद्ध हैं। इस भण्डार का आकार कितना, भाव कितने गभीर, मूल्य कितना अधिक इसका निर्धारण करने में कोई भी समर्थ नहीं है। प्राचीन काल में भारतीय क्या क्या पढ़ते थे, वो एक श्लोक के माध्यम से प्रकट होता है -

अङ्गानि वेदाश्चत्वारो मीमांसा न्यायविस्तरः।
पुराणं धर्मशास्त्रं च विद्या ह्येताश्चतुर्दश॥ (वायुपुराणम् ६१.७८)

इस श्लोक में चौदह प्रकार की विद्याएँ बताई गयी है। चार वेद (और चार उपवेद) छः वेदाङ्, मीमांसा (पूर्वोत्तरमीमांस) न्याय (आन्वीक्षिकी) पुराण (अठाहर मुख्य पुराण और उपपुराण) धर्मशास्त्र (स्मृति) ये चौदह विद्या कहलाते हैं। अनेक काव्य और बहुत शास्त्र हैं इन सभी विद्याओं का प्रवाह जल के समान ज्ञान प्रदान करने वाला प्रगति करने वाला और वृद्धि करने वाला लम्बे समय से चल रहा है। समाज के कल्याण के लिए भारत के विद्या दान परम्परा में गुरुकुलो में आध्यात्मिक, मनोवैज्ञानिक, आयुर्वेद, राजनीति, दण्डनीति, काव्य, काव्यशास्त्र और अन्य बहुत से शास्त्र पढ़ते-पढ़ाते थे।

विद्या के शिक्षण के लिए ब्रह्मचारी परिवार को छोड़कर गुरुकुल में ब्रह्मचर्याश्रम को धारण कर जीवन बिताते थे और इन विद्याओं में पारंगत होते थे। इन विद्याओं में आज भी कुछ पारंगत लोग है। प्राकृतिक परिवर्तन के कारण, विदेशी आक्रमण के कारण, स्वदेश में हो रही ऊठा-पटक इत्यादि अनेक कारणों से पहले जैसा अध्ययन-अध्यापन की परम्परा अब छूटती जा रही है। इन पाठ्यक्रमों की परीक्षा प्रमाणपत्र इत्यादि आधुनिक शिक्षण पद्धति के द्वारा कुछ राज्यों में होता है, परन्तु बहुत से राज्यों में नहीं होता है। अतः इन प्राचीन शास्त्रों के अध्ययन, परीक्षण, और प्रमाणीकरण का होना आवश्यक है। इसे ध्यान में रखकर यह पाठ्यक्रम राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान के द्वारा प्रारम्भ किया गया है। लोगों के कल्याण के लिए जितना ज्ञान आवश्यक है वैसा ज्ञान इन शास्त्रों में निहित किया गया और मनुष्य के सामने प्रकट हो, ऐसा लक्ष्य है। जिसके द्वारा सभी यहाँ पर सुखी हो, सभी निरोगी हो, सभी कल्याण दृष्टि से कल्याणकारी हों। किसी को कोई दुख प्राप्त नहीं हो, कोई किसी को दुःख नहीं दे, इस प्रकार अत्यन्त उदार उद्देश्य को ध्यान में रखकर 'भारतीय ज्ञान परम्परा' इस नाम से इस पाठ्यक्रम की रचना की गई है। विज्ञान शरीरारोग्य का चिन्तन करता है, कला विषय मनोविज्ञान को तथा मनोविज्ञान आध्यात्मिक विज्ञान का पोषण करता है। विज्ञान साधनस्वरूप और सुखोपभोग साध्य है। अतः निःसन्देह रूप से कहा जा सकता है कि कला विषय शाखा विज्ञान से भी श्रेष्ठ है। लोग कला को छोड़कर विज्ञान से सुख नहीं प्राप्त कर सकते हैं परन्तु विज्ञान को छोड़कर कला से सुख को अवश्य प्राप्त कर सकते हैं।

यह संस्कृत व्याकरण का पाठ्यक्रम छात्रानुकूल, ज्ञानवर्धक, लक्ष्यसाधक और पुरुषार्थ साधक है ऐसा मेरा मानना है।

इस पाठ्यक्रम के निर्माण में जिन हिताभिलाषी, विद्वांन, उपदेष्टा, पाठलेखक, त्रुटिसंशोधक और मुद्रणकर्ता ने साक्षात् या परोक्षरूप से सहायता की, उनको संस्थान पक्ष से हार्दिक कृतज्ञता ज्ञपित करते हैं। रामकृष्ण मिशन-विवेकानन्द विश्वविद्यालय के कुलपति श्रीमान् स्वामी आत्मप्रियानन्द जी का विशेषरूप से धन्यवाद जिनकी आनुकूलता और प्रेरणा के बिना इस कार्य की परिसमाप्ति दुष्कर थी।

इस पाठ्यक्रम के अध्येताओं का विद्या से कल्याण हो, सफल हो, विद्वांन हो, सज्जन हो, देशभक्त हो, समाज सेवक हो ऐसी हमारी हार्दिक इच्छा है।

अध्यक्ष

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान

आपसे दो बातें...

निदेशकीय वाक्

प्रिय पाठक,

'भारतीय ज्ञान परम्परा' पाठ्यक्रम को पढ़ने की इच्छा से उत्साहित भारतीय ज्ञान परम्परा के अनुरागी और उपासकों का हार्दिक स्वागत करते है। अत्यधिक हर्ष का विषय है, की गुरुकुलों में पढ़ाये जाने वाला पाठ्यक्रम हमारे राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान के पाठ्यक्रम में भी सम्मिलित किया गया है। आशा है की लम्बे समय से हमारी संस्कृति से जो दूरी थी वह अब समाप्त हो जाएगी। हिन्दु जैन बौद्धों के धर्मिक, आध्यात्मिक और काव्यादि वाङ्मय प्रायः संस्कृत में लिखा हुआ है। इस 24 करोड़ मनुष्यों के प्रिय विषयों की भूमिका के माध्यम से प्रस्तुत प्रवेश योग्यता के द्वारा और मन को प्रसन्न करने के लिए माध्यमिक स्तर और उच्चतर माध्यमिक स्तर में कुछ विषय पाठ के माध्यम से सम्मिलित किये गए हैं। जैसे आंग्ल, हिंदी, आदि भाषा ज्ञान के बिना उस भाषा के लिखे गए माध्यमिक स्तरीय ग्रन्थ पढ़ने में और समझ में सक्षम नहीं हो सकते हैं, वैसे ही यहाँ पर प्रारम्भिक संस्कृत को नहीं जानते तो इस पाठ्यक्रम को जानने में समर्थ नहीं हो सकते हैं। अतः प्रारम्भिक संस्कृत तथा हिन्दी भाषा के जानकार छात्र यहाँ इस पाठ्यक्रम के अध्ययन के अधिकारी है ऐसा जानना चाहिए।

गुरुकुलों में अध्ययन करने वाले छात्र आठवीं कक्षा तक जितना अपनी परंपरा से अध्ययन करें। नौवीं, दशवीं कक्षा और ग्यारहवीं तथा बारहवीं कक्षा तक भारतीय ज्ञान परम्परा के इस पाठ्यक्रम का निष्ठा से नियमित अध्ययन करें। इस पाठ्यक्रम से विद्यार्थी उच्च शिक्षा के लिए योग्य होंगे।

संस्कृत के विभिन्न शास्त्रों में किया गया कठिन परिश्रम विद्वान्, प्राध्यापक, शिक्षक और शिक्षाविद् इस पाठ्यक्रम का प्रारूप रचना में, विषय निर्धारण के लिए विषय परिमाण निर्धारण में विषय प्रकट करने का भाषा स्तर निर्णय में और विषय पाठ लिखने में संलग्न हैं। अतः इस पाठ्यक्रम का स्तर उन्नत होना है।

संस्कृत व्याकरण की यह स्वाध्याय सामग्री आपके लिए पर्याप्त सुबोध रुचिकर आनन्दरस को देने वाली, सौभाग्य देने वाली धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, उपयोगी रहेगी ऐसी हम आशा करते हैं। इस पाठ्यक्रम का प्रधान लक्ष्य है की भारतीय ज्ञान परम्परा का शैक्षणिक क्षेत्रों में विशिष्ट और योग्य स्थान स्वीकृत होना चाहिए। वह लक्ष्य इस पाठ्यक्रम के माध्यम से पूर्ण होगा, ऐसा हमारा दृढ विश्वास है। पाठक अध्ययनकाल में यदि मानते है की इस अध्ययन सामग्री में पाठ के सार में जहाँ संशोधन, परिवर्तन और परिवर्धन संस्कार चाहते हैं, उन सभी के प्रस्तावों का हम स्वागत करते हैं। इस पाठ्यक्रम को फिर भी और अधिक प्रभावी, उपयोगी और सरल बनाने में आपके साथ हम हमेशा तत्पर है।

सभी अध्येताओं के अध्ययन में सफलता और जीवन में सफलता के लिए और कृतकृत्य के लिए हमारे आशीर्वचन-

किं बाहुना विस्तरेण। अस्माकं गौरववाणीं जगति विरलाम् सर्वविद्याया लक्ष्यभूताम् एव उद्धरामि॥

सर्वेऽत्र सुखिनः सन्तु सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग् भवेत्॥

दुर्जनः सज्जनो भूयात् सज्जनः शान्तिमाप्नुयात्।
शान्तो मुच्येत बन्धेभ्यो मुक्तश्चान्यान् विमोचयेत्॥

स्वस्त्यस्तु विश्वस्य खलः प्रसीदतां ध्यायन्तु भूतानि शिवं मिथो धिया।
मनश्च भद्रं भजतादधोक्षजे आवेश्यतां नो मतिरप्य हैतुकी॥

निदेशक

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान

आपसे दो बातें...

समन्वयक वचन

प्रिय जिज्ञासुओं

ॐ सह नाववतु। सह नौ भुनक्तु सह वीर्य करवावहै। तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्विषावहै॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

परम्परा को आधार मानकर यह प्रार्थना कि हमारा अध्ययन विघ्नों से रहित हो। अज्ञान का नाश करने वाला तेजस्वि हो। द्वेष भावना का नाश हो। विद्यालाभ के द्वारा सभी कष्टों की शान्ति हो।

भारतीय ज्ञान परम्परा इस पाठ्यक्रम के अङ्गभूत यह पाठ्यक्रम उच्चतर माध्यमिक कक्षा के लिए निर्धारित किया गया है। इस पाठ्यक्रम की अध्ययन सामग्री आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुए मैं परम हर्ष का अनुभव कर रहा हूँ। जो सरल संस्कृत तथा हिन्दी भाषा को जानता है, वह इस अध्ययन में समर्थ है।

संस्कृत व्याकरण का अध्ययन स्तर के अनुसार होता है। इस लिए स्तरों के प्रत्येक पर्व का आरोहण क्रम के अनुसार ही होना चाहिए। अतः पाणिनीय अष्टाध्यायी का विद्वानों ने भिन्न क्रमानुसार व्याख्या किया है। यहाँ भी उसी प्रक्रिया का क्रम है। उसी क्रम को स्वीकार कर यह अध्ययन सामग्री सोपान, पर्व आदि के क्रम में निर्मित है। एक भाग माध्यमिक और अन्य भाग उच्चतर माध्यमिक कक्षा में है। इससे पाणिनीय तंत्र में प्रवेश के लिए छात्र की योग्यता बढ़ती है।

उच्चतर माध्यमिक कक्षा में दिया हुआ पाणिनीय व्याकरण विषय भी अत्यन्त उपकारक है। यह सामग्री पाणिनीय व्याकरण के श्रद्धा सहित अध्ययन में प्रवेश के लिए और मन को शांति देने वाली है। इस ग्रन्थ के आकार पर नहीं जाना चाहिए और न इससे भय होना चाहिए अपितु गम्भीर रूप से अध्ययन करना चाहिए।

सम्पूर्ण पाठ्य पुस्तक तीन भागों में विभक्त है। इसके अध्ययन से छात्र पाणिनीय व्याकरण के मूलभूत ज्ञान को प्राप्त करेंगे।

पाठक पाठों को अच्छी तरह से पढ़कर पाठ में आये प्रश्नों के उत्तरों पर स्वयं विचार कर अन्त में दिए हुए प्रश्नों के उत्तरों को देखें, और उन उत्तरों को अपने उत्तरों से मिलाएं। प्रत्येक पत्र में दिए हुए रिक्त स्थान पर टिप्पणी करना चाहिए। पाठ के अन्त में दिये प्रश्नों के उत्तरों का निर्माण करके परीक्षा के लिए तैयार हो जाएँ। अध्ययन काल में किसी भी कठिनता का अनुभव करते हैं, तो अध्ययन केन्द्र में किसी भी समय जाकर के समस्या के समाधान के लिए आचार्य के समीप जाएँ। या राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान के साथ ई-पत्रद्वारा सम्पर्क करें। वेबसाइट पर भी संपर्क व्यवस्था है। वेबसाइट www.nios.ac.in इस प्रकार से है।

ये पाठ्य विषय आपके ज्ञान को बढ़ाए, परीक्षा में सफलता को प्राप्त करवाए, रुचि बढाए, मनोरथ पूर्ण करे, ऐसी कामना करते हैं।

अज्ञानान्धकारस्य नाशाय ज्ञानज्योतिषः दर्शनाय च इयं में हार्दिकी प्रार्थना.
ॐ असतो मा सद् गमय। तमसो मा ज्योतिर्गमय। मृत्योर्मामृतं गमय॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भवत्कल्याणकामी

पाठ्यक्रम समन्वयक
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान

अपने पाठ कैसे पढ़ें !

बधाई! आपने स्व-शिक्षण की चुनौती स्वीकार की है। एनआईओएस हर कदम पर आपके साथ है और विशेषज्ञों के दल के साथ मिलकर आपको ध्यान में रखते हुए ''संस्कृत व्याकरण'' की यह सामग्री तैयार की गई है। इसमें अपनाया गया प्रारूप स्वतंत्र शिक्षण के अनुकूल है। यदि आप इसमें दिए अनुदेशों का पालन करेंगे तो आप इस सामग्री से अधिकाधिक लाभ ले सकेंगे। इस सामग्री में प्रयुक्त प्रासंगिक आइकॉन आपका मार्गदर्शन करेंगे। इन आइकॉन को आपकी सुविधा के लिए नीचे स्पष्ट किया गया है।

शीर्षक : आपको अंदर की पाठ्य सामग्री का स्पष्ट संकेत देगा।

परिचय : यह आपको पूर्ववर्ती पाठ से जोड़ते हुए पाठ का परिचय कराएगा।

उद्देश्य : ये ऐसे कथन हैं, जिनसे आपको पता चलेगा कि आप इस पाठ से क्या सीखने जा रहे हैं। उद्देश्य आपको यह जांचने में भी सहायता करेंगे कि आपने इस पाठ को पढ़ने के बाद क्या सीखा है। इन्हें अवश्य पढ़ें।

नोट्स : प्रत्येक पृष्ठ पर किनारे के हाशियों में खाली स्थान है, जिसमें आप महत्वपूर्ण बिंदु लिख सकते हैं या नोट्स बना सकते हैं।

पाठगत प्रश्न : प्रत्येक खंड के बाद स्वयं जांच हेतु बहुत छोटे उत्तरों वाले प्रश्न हैं, जिनके उत्तर पाठ के अंत में दिए गए हैं। इनसे आपको अपनी प्रगति जांचने में सहायता मिलेगी। इन्हें अवश्य हल करें। इनको सफलतापूर्वक पूरा करने पर आप जान सकेंगे कि आपको आगे बढ़ना चाहिए या इसी पाठ को दोबारा पढ़ना चाहिए।

आपने क्या सीखा : यह पाठ के मुख्य बिंदुओं का सारांश है। इससे आपको संक्षिप्त में दोहराने में सहायता मिलेगी। इसमें आप अपने बिंदु भी जोड़ सकते हैं।

पाठांत प्रश्न : यह लंबे व छोटे उत्तरों वाले प्रश्न हैं जो आपको पूरे विषय की स्पष्ट समझ प्राप्त करने के लिए अभ्यास करने का अवसर प्रदान करते हैं।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर : इससे आपको यह जानने में मदद मिलेगी कि आपने प्रश्नों के उत्तर ठीक दिए हैं या नहीं।

पुस्तक-१

समास और स्त्री प्रत्यय

१. केवल समास और अव्ययीभाव समास

२. तत्पुरुषसमासः-द्वितीयादितत्पुरुषसमासः

३. तत्पुरुषसमास-तद्धितार्थादितत्पुरुषसमासः

४. तत्पुरुषसमास-कुगतिप्रादिसमास और, उपपदसमास

५. बहुब्रीहिसमास-व्यधिकरणबहुब्रीहि और समान्तप्रत्यय

६. बहुब्रीहिसमास-समासान्तप्रत्यय निपातव्यवस्थादिकम्

७. द्वन्द्वसमास-पूर्वपरनिपात विशेषकार्य और एकशेष

८. प्रकीर्ण समासप्रकरण

स्त्री प्रत्यय

९ स्त्रीप्रत्यय-चाप् टाप् डाप् प्रत्यय

१० स्त्रीप्रत्यय-डाप् डीप् प्रत्यय

११ स्त्रीप्रत्यय-डाप् प्रत्यय

पुस्तक-२

तिङन्त प्रकरण

१२. भ्वादिप्रकरण में - भू धातु के लट् लकार में रूपसिद्धि-१

१३. भ्वादिप्रकरण में - भू धातु के लट् लकार में रूपसिद्धि-२

१४. भ्वादिप्रकरण में - भू धातु के लिट् और लुट् लकार में रूपसिद्धि

१५. भ्वादिप्रकरण में - भू धातु के लृट् और लोट् लकार में रूप सिद्धियाँ

१६. भ्वादिप्रकरण में - भू धातु के लिङ्, लुङ् और लृङ् लकारों में रूप सिद्धियाँ

१७. भ्वादिप्रकरण में - लट् लिट् के सूत्रशेष

१८. भ्वादिप्रकरण में - लिट् लकार का सूत्रशेष

१९. भ्वादिप्रकरण में - लिङ् लुङ् के सूत्रशेष

२०. भ्वादिप्रकरण में आत्मनेपद प्रकरण

२१. अदादि से दिवादि तक - अद्, हु, दिव् धातुएं

२२. स्वादि से रुधाादि तक - सु तुद् रुध धातवः

२३. तनादि से चुरादि तक - तन् कृ क्री चुर् धातवः

पुस्तक-3

णिजन्त प्रत्यय

२४. णिजन्त प्रकरण

२५. सन्नन्त प्रकरण

२६. परस्मैपदात्मनेपद प्रकरण

२७. भावकर्म प्रकरण

तद्धित प्रत्यय

२८. अपत्याधिकार प्रकरण

२९. मत्वर्थीय प्रकरण

३०. रक्ताद्यर्थक प्रकरण

३१. ठञधिकारादि प्रकरण

विषय सूची

पुस्तक-३

णिजन्त प्रत्यय

२४.	णिजन्त प्रकरण	१
२५.	सन्नन्त प्रकरण	२३
२६.	परस्मैपदात्मनेपद प्रकरण	४१
२७.	भावकर्म प्रकरण	५९

तद्धित प्रत्यय

२८.	अपत्याधिकार प्रकरण	७८
२९.	मत्वर्थीय प्रकरण	९४
३०.	रक्ताद्यर्थक प्रकरण	११४
३१.	ठञधिकारादि प्रकरण	१३३
	पाठ्यक्रम का विवरण	१५१
	प्रश्नपत्र का प्रारूप	१५८
	आदर्श प्रश्नपत्र	१५९
	उत्तरमाला	१६३

24

णिजन्त प्रकरण

पूर्व में आपने दस गणों की धातुओं का परिचय प्राप्त किया है। अभी णिजन्त प्रकरण का आरम्भ किया जा रहा है। 'णिच्' यह एक प्रत्यय है। 'णिच्' जिसके अन्त में होता है वह शब्द णिजन्त कहलाता है। णिच् प्रत्यय दो प्रकार का होता है। जो चुरादिगणीय धातुओं से जो णिच् प्रत्यय होता है वह तो प्रकृति (धातु) के अर्थ को ही परिपोषित करता है, अतः इस कारण से स्वार्थिक होता है।

अनिर्दिष्ट अर्थ वाले प्रत्यय स्वार्थ में होते है परिभाषा बल के कारण। यह प्रथम प्रकार का णिच् प्रत्यय हुआ। दूसरा - दसगणीय धातुओं से प्रेरणा (कराना) अर्थ में भी णिच् प्रत्यय होता है। वह ही यहाँ आलोचना का विषय है। जैसे - हिन्दी भाषा में पढ़ना - पढ़ाना, लिखना - लिखाना खाना - खिलाना पीना -पिलाना इत्यादि प्रयोग होते हैं वैसे ही संस्कृत में भी खादति - खादयति, लिखति - लेखयति, पिबति - पाययति इत्यादि प्रयोग होते हैं। यहाँ दस गणों की धातुओं से णिच् प्रत्यय करके प्रेरणावाचक नवीन धातुओं धातु का निर्माण होता है। यथा पठ् - धातु का हिन्दी मे अर्थ है पढ़ना, इस धातु से णिच् प्रत्यय करने पर 'पाठि' यह नवीन धातु होती है, उसका हिन्दी अर्थ पढ़ाना होता है तथा 'पाठयति' यह रूप होता है। णिचश्च (१.३.७४) इसके योग से कर्तृगामी क्रियाफल में आत्मनेपद और अकर्तृऽभिप्राय होने पर शेषात् कर्तरि परस्मैपदम् (९.३.६७) इससे परस्मैपद होता है। यद्यपि कही अकर्तृऽभिप्राय होने पर क्रियाफल में भी आत्मनेपद होता है यथा भीस्म्योर्हेतुभये (१.३.६८) यहाँ। पाठयति यहाँ मूल 'पठ्' इसकी भूवदयो धातवः (१.३.१) इस सूत्र से धातुसंज्ञा होती है। पठि इस णिजन्त की तो सनाद्यन्ता धातवः (३.१.३२) इससे धातुसंज्ञा होती है, यह जानना चाहिए। व्याकरणशास्त्र को सोपान क्रम से पढ़ना चाहिए। इस कारण से ही प्रकरण के लिए भ्वादि प्रकरणादि का ज्ञान आवश्यक है। अतः पूर्व में पढ़े गए पाठों का ज्ञान धारण करके अग्रिम पाठ पढ़ने चाहिए।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप सक्षम होंगे :

- णिच् प्रत्यय का क्या अर्थ होता है तथा प्रयोग को जान पाने में;
- णिच् प्रत्यय विधायक सूत्र के अर्थ का ज्ञान प्राप्त करने में;
- णिच् प्रत्ययान्त रूपों की प्रक्रिया का ज्ञान प्राप्त करने में;
- उन-उन स्थलों में (स्थिति अनुसार) विशेष सूत्रों का ज्ञान प्राप्त करने में;
- णिजन्त पदों को प्रयोग करने का सामर्थ्य प्राप्त करने में।

वाक्य में विविध कारक होते हैं। परन्तु जिसके बिना क्रिया की सिद्धि नहीं होती है वह कर्ता कारक कहलाता है, यह आपके द्वारा कारक - प्रकरणों में पढ़ा गया है, यह विचार करता हूं। जैसे 'रामः पठति' इस वाक्य में पठन क्रिया की सिद्धि राम के विना सम्भव नहीं है। क्रिया में कर्ता ही स्वतन्त्र रूप से विवक्षित होता है। कर्म आदि कारक तो कर्ता की अपेक्षा होने से स्वतन्त्र होने में योग्य नहीं है। जैसे - क्रिया के द्वारा कर्ता के इष्टतम की कर्म संज्ञा, क्रिया में कर्ता के प्रकृष्ट रूप से उपकारक की करण संज्ञा, दान आदि क्रिया के द्वारा कर्ता के अभिप्रेत की सम्प्रदान संज्ञा, कर्ता की अवधि की अपादान संज्ञा, कर्ता के आधार की अधिकरण संज्ञा होती है। इस प्रकार सभी कारकों मे कर्ता विवक्षित होता है। कर्ता तो किसी का भी अधीन नहीं है। अतः स्वतन्त्र रूप से विवक्षित कारक की कर्तृसंज्ञा होती स्वतन्त्रः कर्ता (इस सूत्र के योग से) इस प्रकार से ही कर्ता के प्रेरक की कर्तृसंज्ञा एवं हेतुसंज्ञा का विधान करने के लिए अग्रिम सूत्र का आरम्भ करते हैं।

24.1 तत्प्रयोजको हेतुश्च - (१। ४। ५५)

सूत्रार्थ - कर्ता का प्रयोजक, **हेतुसंज्ञक** और **कर्तृ संज्ञक** हो।

सूत्रव्याख्या - यह संज्ञा सूत्र तीन पदों का है। तत्प्रयोजकः (१। १) हेतुः (१। १) च अव्यय इस प्रकार सूत्रान्तर्गत पदों का विच्छेद है। तत् पद से कर्तृ (कर्ता) पद का ग्रहण किया गया है जो स्वतन्त्रः कर्ता (१.४.५४) इस पूर्व सूत्र से लिया गया है। तस्य = कर्तुः प्रयोजकः तत्प्रयोजकः यहां षष्ठीतत्पुरुष समास है। जो प्रेरित करता है वह प्रयोजक, प्रेरक अथवा प्रवर्तित कहलाता है। जो प्रेरित होता है वह प्रयोज्य, प्रेरित अथवा प्रवर्तित कहलाता है। जैसे - यज्ञदत्तो देवदत्तेन ओदनं पाचयाते (यज्ञदत्त देवदत्त के द्वारा भात पकवाता है। यहाँ पाक क्रिया में यज्ञदत्त के द्वारा देवदत्त प्रेरित होता है अतः वह प्रयोज्य कहलाता है, यजदत्त तो प्रेरित करता है अतः स वह प्रयोजक कहलाता है। इस प्रयोजक की ही कर्तृसंज्ञा और हेतुसंज्ञा का विधान इस सूत्र के द्वारा किया जाता है। हेतु संज्ञा का फल - हेतुमति च (३। १। २६) सूत्र से प्रयोजक के व्यापार में णिच् प्रत्यय की सिद्धि होना। कर्तृ संज्ञा का फल - "लः कर्मणि च भावे चाकर्मकेभ्यः" इस सूत्र से कर्ता

में लङ् आदि की सिद्धि। इस प्रकार कर्ता के प्रयोजक की हेतुसंज्ञा और कर्तृसंज्ञा होती है। यह सूत्र अर्थ प्राप्त होता है।

यहां विशेष (बिन्दु) णिजन्त स्थल में प्रयोजक कर्ता और प्रयोज्य कर्ता दो प्रकार का कर्ता होता है। व्यापारवान् कर्ता प्रयोज्य कर्ता होता है और प्रेरक कर्ता प्रयोज्य कर्ता होता है। देवदत्तः पचति। (देवदत्त पकाता है। तं यज्ञदत्तं प्रेरयति (उसको यज्ञदत्त प्रेरित करता है) – यहाँ पच् धातु का अर्थ है – पाक अनुकूल व्यापार और वह व्यापार देवदत्त में है। अतः देवदत्त पाक के अनुकूल व्यापार करने वाला है, अतः वह कर्ता होता है किन्तु णिजन्त स्थल पर वह प्रयोज्य कर्ता होता है यज्ञदत्त में तो उस प्रकार का व्यापार नहीं है, अतः वह कर्ता होने के योग्य नहीं है। इसलिए 'तत्प्रयोजको हेतुश्च' इस सूत्र से यज्ञदत्त की हेतुसंज्ञा के साथ कर्तृसंज्ञा का भी विधान होता है। अतः णिजन्तस्थल पर वह कर्ता प्रयोजक कर्ता कहलाता है। हेतु संज्ञा का फल 'भियो हेतुभये षुक्' इत्यादि की प्रवृत्ति है। कर्तृसंज्ञा का फल तो प्रयोजक वाच्य होने पर 'लः कर्मणि च भावे चाकर्मकेभ्यः' (३.४.६९) इस सूत्र से कर्ता (अर्थ) में लकार का विधान करना है। अभी हेतुसंज्ञा का फल प्रदर्शित करते है।

24.2 हेतुमति च (३.१.२६)

सूत्रार्थ – प्रयोजक व्यापार में प्रेषणादि वाच्य होने पर धातु से णिच् प्रत्यय हो।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र दो पदों वाला है। हेतुमति – ७/१, च – अव्यय इस प्रकार **सूत्रगत** पदों का विच्छेद है। हेतु (प्रयोजक) मूल रूप से अस्य अस्ति से मतुप् प्रत्यय करने पर हेतुमान्, सप्तमी विभक्ति में 'हेतुमति' 'धातोरेकाचो हलादेः क्रियासमभिहारे यङ्' (३.१.२२) सूत्र से धातोः सत्यापपाश... (३.१.२५) तक णिच् पद का अनुवर्तन होता है। प्रत्यय और परे दोनों को अधिकृत कर लिया है हेतुमत् – शब्द से हेतु का (प्रयोजक का) व्यापार अभिप्रेत है। और वह व्यापार प्रेरणादि है। और इसी प्रकार प्रयोजक कर्ता का प्रेरणादि व्यापार वाच्य में होने पर धातु से णिच् प्रत्यय होता है यह सूत्र का अर्थ सम्पादित होता है। णिच् का णकार और चकार इत्संज्ञक होता है। अतः इकार मात्र ही शेष रहता है। इस सूत्र से णिच् प्रत्यय का विधान होता है।

यहाँ विशेष बिन्दु –

वस्तुतः भ्वादिगण से चुरादिगण के अन्तर्गत जो धातु उनसे णिजन्तधातु पृथक् नहीं है अपि तु उनसे ही णिच् प्रत्यय करने पर नवीन शब्द स्वरूप को प्राप्त करते हैं। इसलिए वे ही णिजन्त कहलाते हैं। णिजन्तधातु का णिचश्च (१.३.७४) इस सूत्र से उभयपद विधान होता है।

उदाहरण – भावयति

सूत्रार्थसमन्वय – भवन्तं प्रेरयति (प्रेरित करती है) इस अर्थ में भू धातु से णिच् प्रत्यय होने पर, णिच् में अनुबन्ध लोप होने पर 'भू इ' होने पर णिचः णित्वात् अचोञ्णिति (७.२.११५) इस सूत्र से अजन्त में लक्षण वृद्धि होने से औकार होने पर 'एचोऽयवायावः' (६.१.७५) इस सूत्र से आव्

टिप्पणियाँ

आदेश होने और वर्णसम्मेलन होने पर 'भावि' यह बनता है। और उस समुदाय की 'सनाद्यन्ता धातवः' (३.१.३२) इस सूत्र से धातुसंज्ञा और कर्तृत्व विवक्षा होने पर वर्तमाने लट् (३.२.१२३) सूत्र से 'लटि भावि ल्' यह स्थिति उत्पन्न होती है। इसके पश्चात् प्रथमपुरुष एकवचन की विवक्षा मंत णिचश्च (१.३.७४१) सूत्र से परस्मैपद आत्मनेपद दोनों की युगपद प्राप्ति होने पर क्रियाफल के परगामी होने पर शेषात् कर्तरि परस्मैपदम् (१.३.७५) इस सूत्र से परस्मैपद का विधान होने पर तिप् तस् (3.४.७८) सूत्र के योग से 'ल' के स्थान पर परस्मैपदसंज्ञक तिबादि नौ प्रत्यय प्राप्त होने पर प्रथम पुरुष एकवचन की विवक्षा होने पर 'तिप्' हुआ, तिप् में अनुबन्ध लोप होने पर 'भावि ति' इस स्थिति में कर्तरि शप् (३.१.६८) इस सूत्र से शप् होकर अनुबन्ध लोप होने पर 'भावि अ ति' होने पर शप् के शित्व होने से तिङ् शित् सार्वधातुकम् (३.४.११३) इस सूत्र से सार्वधातुक संज्ञा होने पर सार्वधातुकार्धधातुकयोः (७.४.८४) इस सूत्र से इगन्त अङ्गसंज्ञक 'भावि' इसके इकार का गुण एकार होने पर एचोऽयवायावः (६.१.७८) इस सूत्र से एकार के स्थान पर अयादेश होने पर 'भाव् अय् अति' होने पर 'भावयति' यह रूप सिद्ध होता है। कर्तृगामी क्रिया फल में तो आत्मनेपद प्रत्यय होता है। उससे 'भावयते' यह रूप भी होता है। इस प्रकार णिजन्तस्थल पर दो प्रकार का रूप होता है, यह सम्यक् रूप से समझना चाहिए।

अब आपको अपने सम्यक् रूप से बोध के लिए प्रत्येक लकार में एक एक उदाहरण नीचे प्रदर्शित करते है –

लिट् लकार में – भावयाञ्चकार – भावयाञ्चक्रे। भवयामास। भावयाम्बभूव।

लुट् लकार में – (परस्मैपद) भावयिता, भावयितारौ, भावयितारः। भावयितसि (आत्मनेपद), भावयिता, भावयितारौ, भावयितारः। भावयितासे।

लृट् लकार में – (परस्मै)। भावयिष्यति। (आत्मने) भावयिष्यते।

लोट् लकार में – (परस्मै) भावयतु – भावयतात्। (आत्मने) अभावयत।

विधिलिङ् लकार में – (परस्मै) भावयेत्। (आत्मने) भावयेत

आशीर्लिङ् में – (परस्मै) भाव्यात्। (आत्मने) भावयिषीष्ट

भू धातु से णिच् प्रत्यय होने पर लुङ् लकार में अट् आगम होने पर 'तिपि इतश्च' (३.४.१००) इस सूत्र से तिप् के इकार के लोप तथा 'च्लि' होने पर 'अ भू इ च्लि त्' यह स्थिति होती है। उसके बाद च्लि के स्थान पर सिजादेश प्राप्त होने पर उसको बाध करके 'णिक्षिद्रुसुभ्यः' (३.१.४८) इस सूत्र से ण्यन्तधातु होने से च्लि के स्थान पर चङ् आदेश होकर अनुबन्ध लोप होने पर 'अ भू इ अत्' होने पर णिचश्च आदेशो न द्वित्वे कर्तव्ये इस परिभाषा से चङि (६.१.१) इस सूत्र से 'भू' के द्वित्व होने पर 'पूर्वोऽभ्यासः' (६.१.५) इस सूत्र से पूर्व भाग की अभ्यास संज्ञा होने पर ह्रस्वः (७.४.५१) इस सूत्र से

प्रथम 'भू' के ऊकार का 'ह्रस्वे अभ्यासे चर्च' (८.५.५४) इस सूत्र से जश्त्व होने पर 'अ वु बू इ अत्' यह हुआ। इसके पश्चात् द्वितीय 'भू' के ऊकार का अचो ञ्णिति (७.२.११५) इसके

योग से वृद्धि 'भौ' होने पर 'एचोऽयवायावः' (६.१.७८) सूत्र से आव् आदेश होने पर 'अ बु भाव् इ अत्' हुआ। उसके पश्चात् णौ चङ्युपधायाः ह्रस्वः (७.४.१) इस सूत्र से 'भाव्' इस उपधाभूत आकार का ह्रस्व होने पर 'अ बु भव् इ अ त्' होने पर णेरनिटि (६.४.५१) इस सूत्र से णिच् के इकार का लोप होने पर 'अ बु भव् अ त्' होने पर सन्वल्लघुनि चङ्परेऽनग्लोपे (७.४.१३) सूत्र से सन् वद् भाव होने पर अग्रिम सूत्र आरम्भ किया जाता है –

24.3 ओः पुयण्ज्यपरे (३.४.८०)

सूत्रार्थ – सन् परे रहते जो अङ्ग है, उसके अवयव अभ्यास के उकार का इत् हो ,पवर्ग–यण्–जकार, अवर्ण परे रहते।

सूत्रव्याख्या – वह विधिसूत्र तीन पदों का है। ओः (६/१) पुयण्जि (७/१), अपरे (७/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। 'पुश्च (पवर्गश्च) यण् च ज् च पुण्यज' इस प्रकार समाहार द्वन्द्व है, सप्तमी में अपरे। यहाँ लोपोऽभ्यासस्य (७.४.५८) यहाँ से 'अभ्यासस्य' इस पद की, भृञामित् (७.४.७६) यहाँ से इत् इस पद की, सन्यतः (७.४.७९) यहाँ से 'सनि' इस पद की अनुवृत्ति होती है। अङ्गस्य (६.४.१) यह अङ्ग 'पुयण्जि' इस विशेष्य का अपरे विशेषण है। ऊकार का षष्ठ्यन्त रूप 'ओः' होता है। इत् इसका अर्थ ह्रस्व इकार है। और सन् परे होने पर जो अङ्ग होता है, उस अवयव अभ्यास ऊकार के स्थान में इकारादेशः हो पवर्ग, यण्, जकार, अवर्ण, परे होने पर। इस सूत्र से इत्व का विधान किया जाता है।

उदाहरणम् – अबीभवत्

सूत्रार्थ समन्वय – तथा 'च अ बु भव् अ त्' होने पर 'ओः पुयण्ज्यपरे' इस प्रकृत सूत्र से 'बु' इसके उकार का इत्व होता है। क्योंकि, यहा अभ्यास में स्थित ऊकार है। और भकार पवर्गीय वर्ण अकार परक है। और यहा अङ्ग सन् परक भी है। तत्पश्चात् दीर्घो लघोः (७.४.९४) इस सूत्र से बि के इकार का दीर्घ होने पर सर्व वर्ण सम्मेलन होने पर 'अबीभवत्' यह रूप सिद्ध होता है। इस सूत्र के अन्य उदाहरण दूसरे ग्रन्थ में देखें।

पाठगत प्रश्न 24.1

1. क्या कर्ता के प्रयोजक की कर्ता संज्ञा होती है?
2. हेतुसंज्ञा किसकी होती है?
3. णिच् प्रत्यय किस अर्थ में होता है?
4. क्या स्वार्थ में णिच् प्रत्यय होता है?
5. हेतुमति च (३.१.२६) सूत्र से हेतुमत् शब्द से क्या विवक्षित है?
6. 'ओः पुयण्ज्यपरे' सूत्र के योग का क्या अर्थ है?
7. ओः पुयण्ज्यपरे सूत्र का क्या उदाहरण है?

टिप्पणियाँ

24.4 अतिह्वीप्लीरीक्नूयीक्ष्माय्याताम् पुग्णौ।। (७.३.३६)

सूत्रार्थ – ऋ, ह्री, व्ली, री, क्नूयी, क्ष्मायी इन धातुओं से और आकारान्त धातुओं से पुगागम होता है, णिच् परे रहते।

सूत्रव्याख्या – यह तीन पदों का विधि सूत्र है। अति (६/३), पुक् – ११, णौ (७/१) यह सूत्रान्तर्गत पदों का विच्छेद है। 'अतिश्च ह्रीश्च प्लीश्च रीश्च क्नूयीश्च क्ष्मायीश्च आच्य, इनका इतरेतरयोग द्वन्द्व होने पर अतिह्रीप्लीरीक्नूयीक्ष्माय्यात:, उनका (षष्ठी विभक्ति होने पर अतिह्रीप्लीरीक्नूयीक्ष्माय्याताम्। द्वीप्लीरीवनूचीमाय्याताम्। पुक् का ककार इत्संज्ञक है, और उकार उच्चारणार्थक है, अत: 'प्' मात्र शेष रहता है। 'कित्वात्' आद्यन्तौ टकितौ (१.१.४६) इस परिभाषा से पुक् अन्तिम अवयव होता है। अङ्गस्य (६.४.१)। और इस प्रकार सत्र अर्थ हुआ – ऋ, ह्री, व्ली, री, क्नूयी, क्ष्मायी, इन धातुओं से और आकारान्त धातुओं से पुक् आगम होता है णिच् प्रत्यय परे रहते। तथा इस सूत्र के द्वारा पुक् आगम का विधान होता है।

उदाहरण – स्थापयाते

सूत्रार्थ समन्वय – इस प्रकार स्था धातु से णिच् प्रत्यय परे रहते 'स्था इ' होने पर प्रकृत सूत्र से पुक् आगम होता है। क्योंकि 'स्था' धातु आकारान्त धातु है, और उसके पश्चात् णिच् प्रत्यय भी विहित है। तत्पश्चात् पुक् का अनबन्ध लोप होने पर 'स्थापि' होने पर सनाद्यन्ता धातव: (३.१.३२) इस सूत्र से धातुसंज्ञा होने पर क्रमश: लट्, तिप्, शप्, हुआ। शप् होने पर गुण होकर एकार आदेश होकर अयादेश होने पर 'स्थापयति' यह रूप सिद्ध होता है। पक्ष में 'स्थापयते' यह भी होता है। अन्य उदाहरण –

'ऋ' गति अर्थ में – अर्पयति, अर्पयते

ह्री लज्जा अर्थ में – ह्रेपयति, ह्रेपयते

प्ली वरण अर्थ में – व्लेपयति, व्लेपयते

री गते एवं टपकना अर्थ में – रेपयति, रेपयते

क्नूयी शब्द मे और आर्द्र करना – क्नोपयति, क्नोपयते।

नीचे स्था धातु के सभी लकार में उदाहरण प्रस्तुत करते हैं।

लिट् लकार – स्थापयाञ्चकार, स्थापयाञ्चक्रे। स्थापयामास। स्थापयाम्बभूव।

लुट् लकार – (परस्मै) स्थापयिता, स्थापयितारौ स्थापयितार:। स्थापयितासि।

(आत्मने) स्थापयिता, स्थापयिता, स्थापयितार:। स्थापयितासे

लोट् लकार – (परस्मै) स्थापयतु – स्थापयतात्। (आत्मने) स्थापयताम्।

लङ् लकार – (परस्मै) अस्थापयत्। (आत्मने) स्थापयेत्

आशीर्लिङ् – (परस्मै) स्थाप्यात्। (आत्मने) स्थापयिषीष्ट

विधिलिङ् – (परस्मै) स्थापयेत्। (आत्मने) स्थापयेत

लृङ् लकार – (परस्मै) अस्थापयिष्यत्। (आत्मने) अस्थापयिष्यत

स्था धातु से क्रमशः लुङ्, णिच्, पुक् आगम होने पर लुङ् लकार में प्रथम पुरुष एकवचन में तिप् होने पर च्लि, च्लि के स्थान पर चङ्, चङ् में अनुबन्ध लोप, णि का लोप होने पर 'अ स्थाप्' 'अ त्' इस स्थिति में विशेष को दिखाने के लिए इस सूत्र का आरम्भ किया जाता है।

24.5 तिष्ठतेरित् (७.४.५)

लृट् लकार – (परस्मै) स्थापयिष्यति। (आत्मने) स्थापयिष्यते।

सूत्रार्थ – उपधा को इकार आदेश हो चङ् परक णि परे होने पर।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र दो पदों वाला है। तिष्ठतेः (६/१) इत् (९/१) यह सूत्रगत पद – विच्छेद है। णौ चङ्युपधायाः ह्रस्वः (७.४.५९) सूत्र से णौ, चङि उपधायाः इन पदों की अनुवृत्ति होती है। उसके द्वारा चङ् परक णिच् प्रत्यय परे होने पर स्था धातु की उपधा को इकार आदेश होता है यह सूत्र का अर्थ सिद्ध होता है।

उदाहरण – अतिष्ठिपत्

सूत्रार्थसमन्वय – यथा – 'अ स्थाप् अ त्' यह स्थिति होने पर 'स्थाप्'। यहाँ उपधाभूत आकार के स्थान पर इकार आदेश होने पर 'अ स्थिप् अ त्' यह स्थिति हुइ। तत्पश्चात् चङि (६.१.११) इस सूत्र से स्थिप् के द्वित्व होने पर 'हलादिः शेषः' (७.४.६०) सूत्र के बाधक 'शर्पूर्वाः खयः (७.४.६१) सूत्र के द्वारा थकार शेष होने पर तथा चर्त्व होने पर 'अ ति स्थिप् अ त्' यह स्थिति होने पर 'आदेशप्रत्ययोः' (८.३.५९) इस सूत्र के द्वारा सकार के स्थान पर षकार करने पर 'अतिष्ठिपत्' यह रूप सिद्ध होता है।

ज्ञानार्थक और ज्ञापनार्थक चुरादिगणीय ज्ञप् धातु से कर्तृत्वविवक्षा में 'सत्यापपाशरूपवीणातूल श्लोकसेनापत्योमत्वचवर्गवर्णचूर्णचुरादिभ्यो णिच्' इससे स्वार्थिक णिच् होने पर पुनः 'हेतुमति च' से णिच् होने पर ज्ञप् इ इ हुआ। तत्पश्चात् णेरनिटि (६.४.५१) सूत्र से स्वार्थक णिच् का लोप होने और उपधा वृद्धि होने पर 'ज्ञाप इ' यह हुआ। वहा ज्ञप् मिच्च इस निर्देश से ज्ञप् धातु का मित्व होना अतिदेश होता है। उसके द्वारा ज्ञप् धातु मित् होती है। अब मित् करण फल प्रदर्शित करने के लिए अग्रिम सूत्र का आरंभ करते हैं –

24.6 मितां ह्रस्वः (६.४.९२)

सूत्रार्थ – घट् आदि और ज्ञप् आदि की उपधा का ह्रस्व हो, णिच् परे रहते।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र दो पदों का है। मिताम् (६/३), ह्रस्वः – (१/१) यह सूत्रगत विच्छेद है।

टिप्पणियाँ

उदुपधाया गोहः (६.४.८९) इससे 'उपधायाः' इस पद का और दोषो णौ (६.४.९०) इससे 'णौ' इस पद की अनुवृत्ति होती है। यहां जो मित् है, वे धातुपाठ में परिगणित हैं। ज्ञापादि और घटादि मित् होते हैं इसलिए धातुपाठ में दिखाई पड़ते हैं। वहां मित्व अतिदेश होता है न कि जिस धातु का भकार इत्संज्ञक हो वह धातु मित् हो। जैसे 'घट चेष्टायाम्' इस धातु में 'घटादयो मितः' इससे मित्व अतिदेश होता है। किञ्च ज्ञप् मिच्च इस कथन से ज्ञप् धातु में मित्व अतिदेश होता है। सूत्र का अर्थ होता है – घटादि और ज्ञपादि की उपधाया का ह्रस्व हो, णिच् परे। मित्व का एक फल तो 'मितां ह्रस्वः' (६.४.९२) यह है। दूसरा तो 'चिण्णमुलोदीर्घोऽन्यतरस्याम्' (६.४.९३) इस सूत्र से विकल्प से दीर्घादेश का विधान होता है। अघाटे – अघाटि इत्यादि।

उदाहरण – घटयति। ज्ञापयति

सूत्रार्थसमन्वय – इस प्रकार 'ज्ञाप् इ' होने पर मित्व के अतिदेश हाने पर ह्रस्व आदेश होने पर 'ज्ञपि' यह हुआ। तत्पश्चात् 'ज्ञपि' इस समुदाय दी सनाद्यन्ता धातवः (३.१.३२) इससे धातुसंज्ञा होने पर लट्, तिप्, शप् होकर गुण होने तथा अयादेश होने पर ज्ञपयति यह रूप होता है। लुङ् लकार में च्लि चङ्, द्वित्व, णि लोप, सन्वद्भाव होने पर 'सन्यतः' इससे इत्व होने पर 'अजिज्ञपत्' यह रूप हुआ।

इस प्रकार 'घटयति' यहाँ भी जानने योग्य है। लुङ् लकार में तो 'दीर्घो लघोः' (७.४.९४) इस सूत्र की प्रवृत्ति होती है। उसके द्वारा 'अजीघटत्/अजीघटत' रूप सिद्ध होता है।

नीचे ज्ञप –धातु के सभी लकारों में उदाहरण प्रदर्शित करते हैं –

लिट् लकार – ज्ञापयाञ्चकार – ज्ञपयाञ्चक्रे। ज्ञापयामास। ज्ञापयाम्बभूव

लुट् लकार – (परस्मे) ज्ञपयिता, ज्ञपयितारौ, ज्ञपयितारः। ज्ञपयितासि।

(आत्मने) ज्ञपयिता, ज्ञपयितारौ, ज्ञपयितारः। ज्ञपयितासे।।

लृट् लकार – (परस्मै) ज्ञपयिष्यति। (आत्मने) ज्ञपयिष्यते।

लोट् लकार – (परस्मै) ज्ञपयतु –ज्ञपयतात् (आत्मने) ज्ञपयताम्।

लङ् लकार – (परस्मै) अज्ञपयत्। (आत्मने) अज्ञपयत।

विधिलिङ् लकार – (परस्मै) ज्ञपयेत् (आत्मने) ज्ञपयेत।

आशीर्लिङ् लकार – (परस्मै) ज्ञप्यात् (आत्मने) ज्ञपयिषीष्ट।

लृङ् लकार – (परस्मै) अज्ञपयिष्यत् (आत्मने) अज्ञपयिष्यत।

लुङ् लकार – (परस्मै) अजिज्ञपत् (आत्मने) अजिज्ञपत।

पाठगत प्रश्न 24.2

1. तिष्ठतेरित् इस सूत्र का क्या अर्थ है?
2. अर्तिह्वीप्लीरीक्नूयीक्ष्माय्यातां पुङ्णौ (७.३.३६) इस सूत्र से क्या विधान किया जाता है?
3. 'घटयति' यहा उपधा का ह्रस्व किस सूत्र से होता है?
4. 'मितां ह्रस्वः' इसका क्या अर्थ है?
5. ज्ञप् धातु से मित्व कैसे होता है।
6. टु ओ श्वि गति वृद्धि धातु से णिच् परे रहते लुङ् परे होने पर क्या होता है?

24.7 णौच संश्चङोः (६.१.३१)

सूत्रार्थ – सन्परक और चङ्परक णि परे रहते श्वि धातु को संप्रसारण होता है विकल्प से।

सूत्रार्थव्याख्या – यह विधिसूत्र तीन पदों का है। णौ – (७/१) च (अव्यय), संश्चङोः (७/२) यह सूत्रगत आए पदों का विच्छेद है। 'सन् च यङ् च संश्चङौ' तयोः संश्चङोः इति इस प्रकार इतरेतरयोगद्वन्द्व समास हुआ। 'विभाषा श्वैः (६.१.३०) इस सूत्र की और ष्यङः सम्प्रसारणम् (६.१.१३) यहाँ से 'सम्प्रसारणम्' इस पद की अनुवृत्ति होती है। और इस प्रकार सन्परक और चङ्परक णिच् होता है यह अर्थ है। अतः सन्परक णि परे रहते अथवा चङ्परक णि परे रहते श्वि धातु का विकल्प से सम्प्रसारण होता है। श्वि धातु का वकार सम्प्रसारणी है, उसका सूत्र से सम्प्रसारण का विधान वैकल्पिक होता है। श्वि धातु का वकार सम्प्रसारणी है, उसका में सम्प्रसारण मे उकार होता है, 'ततः सम्प्रसारणाच्च' (६.१.१०८) इस सूत्र से पूर्वरूप एकादेश होने पर 'शु' हुआ, यह ध्यान योग्य है।

उदाहरण – अशूशवत्।

सूत्रार्थसमन्वय – इस प्रकार अश्वि इ अ त् इस अवस्था में वृद्धि और सम्प्रसारण दोनों की एक साथ प्राप्ति होने पर 'सम्प्रसारणं तदाश्रयं च कार्यं बलवत्' इस परिभाषा से पूर्व में सम्प्रसारण ही होता है, अतः 'णौ च संश्चङोः' इससे विकल्प से सम्पसारण करने पर 'अ शु इ इ अ त्' होने पर सम्प्रसारणाच्च (६.१.१०८) इससे पूर्वरूप एकादेश होने पर 'अ शु इ अ त्' होने पर 'शु' इसका चङि (६.१.११) रस सूत्र से द्वित्व करने तथा 'दीर्घो लघोः' (७.४.९४) इस सूत्र से अभ्यास के दीर्घ होने पर 'अ शू शु इ अ त्' होने पर द्वितीय 'शु' के उकार की 'अचो ञ्णिति' (७.२.११५) इससे वृद्धि होने पर 'एचोऽयवायावः' (६.१.७८) इस सूत्र से औकार के स्थान पर आव् आदेश होने पर 'अ शू शाव् इ अ त्' होने पर णौ चङ्युपधाया ह्रस्वः (७.४.१) इस से उपधा को ह्रस्व होने पर णेरनिटि (६.४.५१) इससे णि लोप और सभी वर्णों का सम्मेलन करने पर 'अशूशवत्' यह रूप सिद्ध होता है।

टिप्पणियाँ

दिवादिगण की शो तनूकरणे (कम करना) इस धातु से श्यन्तं प्रेरयति (कम करने के लिए प्रेरित करता है) इस अर्थ में हेतुमति च (३.१.२६) इस से णिच् परे रहते धातु के उकार के स्थान पर आदेच उपदेशेऽशिति (६.१.४५) इससे आकार आदेश होने पर 'शा इ' होने पर 'अतिह्वीप्लीरीक्नूयीक्ष्माय्यातां पुङ्णौ' (७.३.३६) इससे पुक् आगम प्राप्त होने पर इस सूत्र का आरम्भ किया जाता है –

24.8 शाच्छासाह्वाव्यावेपां युक्॥ (७.३.३७)

सूत्रार्थ – प्राप्त शो-छो-षो-ह्वे-व्ये- इन धातुओं से और वे तथा पा इन दोनों धातुओं से युगागम होता है, णिच् परे रहते।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र दो पदों का है। शाच्छासाह्वाव्यावेपाम् (६/३), युक्, (१/१) यह सूत्रान्तर्गत आए पदों का विच्छेद है। शाश्च, छाश्च, साश्च, ह्वाश्च, व्याश्च, वेश्च, पाश्च इनका इतरेतरयोग द्वन्द्व होने पर 'शाच्छासाह्वाव्यापेपाः' उनका (षष्ठी विभक्ति में) शाच्छासाह्वाव्यावेपाम्। युक् का ककार इत् संज्ञक है। अतः 'य्' ही शेष रहता है। कित्व होनेसे आद्यन्तौ टकितौ (१.१.४६) इस परिभाषा से अन्त्य अवयव होता है, यह याद रखना चाहिए। तथा इस सूत्र के द्वारा युक् आगम का विधान होता है। यह सूत्र अर्तिह्वीप्लीरीक्नूयीक्ष्माय्यातां पुङ्णौ (७.३.३६) इस सूत्र का अपवाद है।

उदाहरण – शाययति, शाययते।

सूत्रार्थसमन्वय – इस प्रकार 'शा इ' इस अवस्था में प्रकृत सूत्र से युक् व अनुबन्ध लोप होने पर 'शाय इ' होने पर समुदाय की सनाद्यन्ता धातवः (३.१.३२) इस सूत्र से धातु संज्ञा होने पर लट् लकार प्रथम पुरुष एकवचन की विवक्षा में क्रमशः तिप्, शप्, गुण, एकार, अय् आदेश होने पर शाययति, त प्रत्यय होने पर तो शाययते इस प्रकार दो रूप होता हैं।

भ्वादिगण में आयी हुई ओदितः ओ वै शोषणे। (इस धातु से वायन्तं प्रेरयति) इस अर्थ में णिच् परे रहते 'आदेच् उपदेशेऽशिति' (६.१.४५) इस सूत्र से आत्त्व होने पर 'वा इ' स्थिति होने पर 'अर्तिह्वीप्लीरीक्नूयीक्ष्माय्यातां पुङ्णौ (७.३.३६) इसके योग से पुक् आगम प्राप्त होने पर यह सूत्र आरम्भ किया जाता है –

24.9 वो विधूनने युक्॥ (७.३.३८)

सूत्रार्थ – वात जुक् हो णि परे कम्पन अर्थ में।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र तीन पदों का है। वः (६/१), विधूनने (७/१) जुक् (१/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। इस सूत्र में अर्तिह्वी. इसके योग से णौ' इस पद की अनुवृत्ति होती है। औ वै शोषणे वस धातु के ऐकार के स्थान पर आत्व होकर वा होने पर उसका षष्ठी-एकवचनान्त रूप 'वः' यह हुआ।

जुक् का ककार इत्संज्ञक है तथा उकार उच्चारणार्थ है, अतः 'ज्' मात्र शेष रहता है। 'अतिह्री' इस सूत्र के योग का अपवादभूत यह योग है। विधूननम् अर्थात् कम्पन। इस प्रकार कम्प अर्थ में वै धातु से जुगागम होता है, णिच् प्रत्यय परे रहते। यह सूत्रार्थ फलित होता है। इस सूत्र से जुक् आगम का विधान होता है।

उदाहरण - वाजयति, वाजयते।

सूत्रार्थसमन्वय - इस प्रकार वायन्तं प्रेरयति इस अर्थ में 'वै' धातु के ऐकार के स्थान पर आत्व होने पर प्राप्त पुक् आगम को बाध करके 'वो विधूनने जुक्' इस सूत्र से जक् आगम होने और अनुबन्ध लोप होने पर 'वाज् इ' होने पर प्रथम पुरुष एकवचन की विवक्षा में तिप्, शप्, गुण, एकार अयादेश होने पर 'वाजयति' यह रूप सिद्ध होता है, पक्ष में वाजयते यह भी।

ण्यन्त स्थल पर कर्तृभिप्राये क्रियाफले णिचश्च (१.३.७४) इस सूत्र से आत्मनेपद सिद्ध होता है। किन्तु 'शेषात् कर्तरि परस्मैपदम्' (१.३.७८) इस सूत्र से कर्त्ता का अभिप्राय न होने पर भी कियाफल में परस्मैपद प्राप्त होने पर वहाँ भी आत्मनेपद विधान हो, इसलिए यह योग आरम्भ करते हैं -

24.10 लियः सम्माननशालीनीकरणयोश्च (७१.३.७०)

सूत्रार्थ - पूजाभिभवञ्चना अर्थों में ण्यन्त लिङ् और लिय् से आत्मनेपद हो, अकर्तृक फल होने पर।

सूत्रव्याख्या - इस विधि सूत्र में तीन पद हैं। लियः (५/१) सम्मानन-शालीनकरणयोः (७/१) च - (अव्यय) यह सूत्र गत पदों का विच्छेद हैं। सम्माननं च शालीनी करणं च सम्माननशालीनीकरणे इस प्रकार इतरेतरद्वन्द्व समास हुआ। षष्ठी विभक्ति में सम्माननशालीनीकरणयोः हुआ। 'अनुदात्तङित आत्मनेपदम्' (१.३१.१) से आत्मनेपदं इस पद की अनुवृत्ति होती है, णेरणौ यत्कर्म णौ चेत् स कर्तानाध्याने (१.३.७६) इस सूत्र से 'णौ' इस पद की अनुवृत्ति होती है। चकार से गृधिवञ्च्योः प्रलम्भने (१.३.६९) यहाँ से प्रलम्भने इसका अनुकर्षण होता है, 'लियः' इससे ली और लिङ् धातु का ग्रहण होता है। यहाँ सम्मान अर्थात् पूजा, शालीनीकरण अर्थात् अभिभव, प्रलम्भन अर्थात् वञ्चन। इस प्रकार पूजाभिभवञ्चना, अर्थों में ण्यन्त लिय का आत्मनेपद हो अकर्तृक फल होने पर भी। इस प्रकार सूत्र से आत्मनेपद विधान किया जाता है।

उदाहरण- जटाभिः लापयते।

सूत्रार्थसमन्वय- 'प्रलम्भनाभिभवपूजासु लियो नित्यमात्त्वमशिति वाच्य इस वार्तिक से ली धातु से पूजार्थ में नित्य आत्व तथा णिच् परे होने पर पुक् आगम होने पर 'लापि' इस अवस्था में णिचश्च (१.३.७४) इससे उभयपद में प्राप्त होने पर उसको बाँधकर लियः सम्माननशालीनीकरणयोश्च इसके योग से केवल आत्मनेपद में प्रथमपुरुष एकवचन की विवक्षा में लट् लकार में त प्रत्यय शप्, गुण, एकार तथा अयादेश होने पर लापयते यह रूप सिद्ध अभिभव अर्थ में - श्येनो वर्तिकाम् उल्लापयते, अभिभव करता है, इस अर्थ में प्रलम्भनार्थ - बालम् उल्लापयते, वञ्चयति (ठगता है) इस अर्थ में।

24.11 लीलोर्नुग्लुकावन्यतरस्यां स्नेहनिपातेन (७.३.३९)

सूत्रार्थ – स्नेह द्रव अर्थ में 'ली तथा ला' से क्रमशः नुग्लुक् आगम होता है णिच् परे।

सूत्रव्याख्या – इस विधि सूत्र में चार पद हैं। लीलोः (६/२), नुग्लुको (९/२) अन्यतरस्याम् (सप्तमी विभक्ति प्रतिरूपक – अव्यय), स्नेहनिपातेन (७/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। 'ली च लाश्च' इतरेतरयोगद्वन्द्व होने पर लीलौ षष्ठी द्विवचन में लीलोः। स्नेहस्य निपातनम् स्नेहनिपातनम् यहा षष्ठी तत्पुरुष समास है। अर्तिह्री (७.३.३६) इसके योग से 'णौ' इसकी अनुवृत्ति होती है, अङ्गस्य (६.४.९) अधिकार। इस प्रकार सुत्रार्थ – स्नेह द्रव अर्थ में 'ली' इसके तथा 'ला' इसके अङ्ग को यथासंख्य नुगागम और लुगागम होता है णिच् परे, रहते। नुक् लुक् दोनों स्थानों पर भी ककार इत्संज्ञक है, उकार उच्चारणार्थक है। अतः क्रमशः न् ल् ही शेष रहते है। इस प्रकार इस सूत्र से नुग्लुक् आगम का विधान होता है।

उदाहरण – विलीनयति, विलाययति। विलालयति विलापयति वा घृतम् यहाँ नि उपसर्गपूर्वक ली धातु विभाषा लीयतेः (६.१.५१) इस सूत्र से विकल्प से आत्व होता है, इस पक्ष में विपूर्वक ली धातु से हेतुमति च (३.१.२६) इसके योग से णिच् पर रहते आत्त्व होने पर 'लीलोर्नुग्लुकावन्यतरस्यां स्नेहनिपातने (७.३.३९) इसके योग से लुक् होने पर 'विलालि' अवस्था होने पर तिप्, शप्, गुण, एकार, अयादेश होने पर विलालयति – विलालयते रूप होता है आत्व के अभाव पक्ष में तो नुगागम होने पर विलीनयति – विलीनयते रूप सिद्ध होता है।

स्नेहनिपातन अर्थ से भिन्न अर्थ में तो नग्लुक् नहीं होता है अपितु पुगागम होता है। इस प्रकार विभाषा लीयतेः (६.१.५१) इस सूत्र से आत्त्व विकल्प से होने पर अर्तिह्री (७.३.३६) इसके योग से पुक् होने पर 'वि-लापि' इसकी धातुसंज्ञा होने पर विलापयति – विलापयते रूप सिद्ध होता है। किन्तु आत्व के अभाव पक्ष में णिच् परे 'ली' इसके ईकार का अचो ञ्णिति (७.२.११५) इस सूत्र से वृद्धि में ऐकार आदेश होने तथा अयादेश होने पर 'वि-लायि' इसकी धातुसंज्ञा होने पर विलाययति – विलाययते यह रूप सिद्ध होता है।

पाठगत प्रश्न 24.3

1. श्यन्तं प्रेरयति इस अर्थ में क्या रूप होता है?
2. लियःसम्माननशालीनकरणोयश्च इस सूत्र से किसका विधान होता है?
3. बालमुल्लापयते इसका क्या अर्थ है?
4. श्यनो वर्तिकामुल्लापयते इसका क्या अर्थ है?
5. लीलार्नुग्लकारवन्यतरस्यां स्नेहनिपातने यह शास्त्र व्याख्यान के अवसर में सम्पूर्ण रूप से कितने रुपों को प्रदर्शित करता है?
6. 'वाजयति' यहाँ मूल धातु क्या है और णिजन्त धातु क्या है?

ण्यन्त धातुओं से कर्तृऽभिप्रायक्रियाफल में णिचश्च (१.३.७४) इस सूत्र के द्वारा आत्मनेपद सिद्ध होने पर अकर्तृऽभिप्राय क्रियाफल में भी आत्मनेपद होता है न कि परस्मैपद। इस नियम के लिए यह सूत्र आरम्भ करते है -

24.12 भीस्म्योर्हेतुभये (१.३.३८)

सूत्रार्थ- ण्यन्त भी और स्मि धातुओं से आत्मनेपद होता है, यदि प्रयोजक भयस्मय गम्यमान हो।

सूत्रव्याख्या - यह विधि सूत्र दो पदों की है। भीस्म्योः (६/२), हेतुभये (७/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद हैं। भीश्च स्मिश्च भीस्मी, तयोः भीस्म्योः। 'हेतोः भयम्' यह पञ्चमी तत्पुरुष में हेतुभयम्, सप्तमी मे हेतुभये। अनुदात्तङित आत्मनेपदम् (१.३.९२) इससे आत्मनेपद की अनुवृत्ति होती हैं, णेरणौ यत्कर्म णौ चेत् स कर्तृध्याने (१.३.६७) इससे णेः इसकी अनुवृत्ति होती है। इस प्रकार पूर्वोक्त सूत्रार्थ फलित होता है। सूत्र में भय ग्रहण धातु के अर्थ के उपलक्षण के लिए है। उसके द्वारा भय शब्द से आश्चर्य अर्थ का भी ग्रहण होता है और इस सूत्र से आत्मनेपद का विधान होता है।

उदाहरण - मुण्डो भापयते।

सूत्रार्थसमन्वय - बिभ्यन्तं प्रेरयति इस अर्थ में है हेतुमति च (३.१.२६) इस सूत्र से 'भी' धातु से णिच् परे होने पर 'भी इ' यह स्थिति होने पर बिभेतेर्हेतुभये (६.१.५६) इसके योग से धातु के ईकार के स्थान पर विकल्प से आकार आदेश होने पर 'भा इ' होने पर अर्तिह्री. (७.३.६) इसके योग से पुगागम। होने पर 'भापि' होने पर कर्तृऽभिप्राय में क्रियाफल होने पर आत्मनेपद प्राप्त हुआ इसके अतिरिक्त अकर्तृऽभिप्राय में कियाफल होने पर परस्मैपद प्राप्त हआ। दोनों की प्राप्ति यहाँ होने पर भी आत्मनेपद विधान विधान हुआ भीस्म्योर्हेतुभये (१.३.६८) इस योग से। इस प्रकार 'भापि' इससे लट् लकार में प्रथम पुरुष एकवचन की विवक्षा मे तिप्, शप्, गुण, अयादेश होकर भापयते यह रूप होता है। जब 'बिभतेर्हेतुभये' (६.१.५६) इस से आकारादेश नहीं होता है, उस पक्ष में अग्रिम सूत्र आरम्भ करते है।

24.13 भियो हेतुभये षुक् (७.३.४०)

सूत्रार्थ - ईकारान्त भिय् का षुक् आगम हो णि परे हेतुभयार्थ में।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र तीन पदों का है। भियः (६/१) हेतुभये (७/१) षुक् (१/१) सूत्रगत पदों का विच्छेद है। अर्तिह्री. (७.३.३६) यह इस सूत्र से 'णौ' का अनुवर्तन होता है। 'भी ई' यहाँ ईकार प्रश्लिष्ट होता है। इस प्रकार ईकारान्त अवस्था में स्थित भी धातु से षुगागम होता है, णिच् प्रत्यय परे रहते। यह सूत्र अचोञ्णिति (७.२.११५) इस सूत्र का बाधक है। यह सूत्र 'भी' धातु को आत्तावस्था में प्रवर्तित नहीं करता है। और इस तरह प्रकृत सूत्र से षुगागम का विधान होता है।

उदाहरण - भीषयते

टिप्पणियाँ

सूत्रार्थसमन्वय – इस प्रकार हेतु भय अर्थ में गम्यमान होने पर भी धातु से 'हेतुमति च' से णिच् होने पर 'भी इ' होने पर प्राप्तवृद्धि को बाधकर 'भियोहेतुभये षुक्' इससे षुक् होने पर 'भीषि' यह हुआ। इसके पश्चात् भीस्म्योर्हेतुभये (१.३.६८) इससे कर्तृऽभिप्राय या अकर्तृऽभिप्राय क्रियाफल होने पर आत्मनेपद होता है, उससे 'भीषि' से आत्मनेपद प्रत्यय होने पर प्रथम पुरुष एकवचन की विवक्षा में त प्रत्यय शप्, गुण, एकार, अयादेश होने पर टित् आत्मनेपदानां टेरे (३.४.७९) इस सूत्र से टिका एत्व होने पर 'भीषयते' यह रूप होता है। यदि प्रयोजन से भय प्रतीत नहीं होता है, तब आत्मनेपद नहीं होता है, न आत्व और न ही षुगागम। आत्वाभाव में पुक् भी नहीं होता है। 'भी इ' स्थिति होने पर तिप्, शप्, वृद्धि, अयोदश होकर 'भाययति' यह सिद्ध होता है। इस क्रम से तीन रूप सिद्ध होते है।

24.14 नित्यं स्मयतेः (६.१.५७)

सूत्रार्थ – स्मि धातु के एच् को नित्य आकार आदेश हो णिच् प्रत्यय पर रहते।

सूत्रार्थव्याख्या – यह विधिसूत्र दो पदों का है। नित्यम् (१/१) स्मयतेः (६/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। आदे च उपदेशेऽशिति (६.१.४५) इससे आत् एच् इन दोनों की अनुवृत्ति होती है। चिस्फुरोर्णौ (६.१.५४) यहाँ से णौ इसकी तथा बिभेतेर्हेतुभये (६.१.५६) यहाँ से हेतुभये इसकी अनुवृत्ति होती है। और वह हेतुभयशब्द हेतुस्मय अर्थ का भी उपलक्षण है। उसके अनुसार 'नित्यं स्मयतेः' (६.९.५७) यहाँ स्मि धातु होने से हेतुभये इस शब्द का हेतुस्मये यह अर्थ होता है। क्योंकि स्मि धातु का भय अर्थ होना संभव नहीं है। अतः स्मि धातु से एच् के स्थान पर नित्य आकारादेश होता है णिच् प्रत्यय परे रहते।

विभाषा लीयतेः (६.१.५१) यहाँ से विभाषा पद की अनुवृत्ति न हो, इसलिए, इस सूत्र में नित्य पद को लाया गया है। बिभेतेर्हेतुभये (६.१.५६) नित्यं स्मयतेः (६.१.५१) इन दोनों सूत्रों से विधीयमान आत्व को 'भीस्म्योर्हेतुभये' (१.३.६८) इस सूत्र से आत्मनेपद विधीयमान है यदि प्रयोजक से भय गम्य हो, तब ही होता है ऐसा स्मरण रखना चाहिए।

उदाहरण – जटिलो विस्मायते। विस्मयमानं पश्यति इस अर्थ में वि पूर्वक स्मिङ् ईषद्धसने इस धातु से णिच् परे रहते वि स्मि इ होने पर धातु के इकार की अचो ञ्णिति (७.२.११५) इससे वृद्धि एकार होने अयादेश होने पर नित्यं स्मयतेः (६.१.५७) इससे नित्य आकारादेश होने पर 'वि स्मा इ' यह हुआ। उसके बाद आकारान्त होने से अर्तिह्री. इससे पुगामम होने पर 'वि स्मापि' यह होने पर भीस्म्योर्हेतुभये (१.३.६८) इससे नित्य आत्मनेपद होने पर प्रथम पुरुष एकवचन की विवक्षा में त प्रत्यय, शप्, गुण, एकार होने पर विस्मापयते यह रूप सिद्ध होता है। और यदि हेतु (प्रयोजक) से भय गम्य नहीं होता है, तो आत्मनेपद नित्य नहीं होता है, आत्व का अभाव होने पर पुगागम नहीं होता है, उससे स्माययति, स्माययते, यह प्रयोग होता है।

सिधु संराद्धौ यह दिवादिगणीय धातु से सिद्ध करने के लिए प्रेरित करता है, इस अर्थ में णिच् परे होने पर 'सिध् इ' इस स्थिति में उपधा गुण होने पर 'सेध् इ' होने पर अग्रिम सूत्र आरम्भ करते हैं।

24.15 सिध्यतेरपारलौकिके (६.१.४९)

सूत्रार्थ – इहलौकिक अर्थ में विद्यमान सिध् धातु के एच् के स्थान पर आकार आदेश हो णिच् प्रत्यय पर रहते।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र दो पदों का है। सिध्यते: (६/१) अपारलौकिके (७/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। आदेच उपदेशेऽशिति (६.१.४५) यहाँ से आत् एच: इन दोनों की और क्रीङ्जीनांणौ इत्यत यहाँ से णौ' इसकी अनुवृत्ति होती है। इस प्रकार परलोक असम्बन्ध अर्थ में विद्यमान होने पर सिध् धातु के एच् के स्थान पर आकारादेश होता है णिच् परे रहते यह सूत्र का अर्थ है। इस सूत्र से आत्व का विधान होता है।

उदाहरण – अन्नं साधयति निष्पादन करती है, इस अर्थ में। सूत्रार्थसमन्वय – और इस प्रकार 'सेध् इ' यहाँ उपधाभूत एकार के स्थान पर आकार आदेश होता है अपारलौकिक के गम्यमान होने से सिध्यतेपारलौकिके इस सूत्र से। और इस प्रकार 'सधि' इस की 'सनाद्यन्ता धातव: (३.१.३२) इससे धातुसंज्ञा होने पर लट् लकार में प्रथम पुरुष एकवचन की विवक्षा मैं त प्रत्यय शप्, गुण, एकार, अयादेश होने पर साधयते तिप् होने पर साधयति यह रूप सिद्ध होता है। और यदि पारलौकिक अर्थ की प्रतीति होती है तब इस सूत्र की प्रतीति नहीं होती है। तब सेध्यते यह रूप होता है और प्रयोग इस प्रकार होता है – तापस: सिध्यति तत्त्वं निश्चिनोति। तं प्रेरयति सेध यति तापसं तप:।

दुष वैकृत्ये इस दिवादिगण की धातु, से दुष्यन्तं प्रेरयति इस अर्थ में हेतुमति च (३.१.२६) इस से णिच् परे रहते दुष् इ होने पर पुगन्तलघूपधस्य च (७। ८। ८६) इससे लघूपध गुण प्राप्त होने पर यह सूत्र आरम्भ होता है –

24.16 दोषो णौ (१६। ५। १०)

सूत्रार्थ – दुष् धातु की उपधा के स्थान पर ऊत् आदेश हो णिच् प्रत्यय परे रहते

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र दो पदों वाला है।दोष: (६। १) णौ (७। १) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। दोष: दुष् धातु के लघूपध के गुण होने का निर्देश है। उदूपधाया गेह: (६.४.८९) यहां से उत् उपधाया: इन दोनों की अनुवृत्ति होती है। इस प्रकार सूत्रार्थ सिद्ध होता है। इस सूत्र से उदादेश का विधान होता है

उदाहरण – दूषयते, दूषयति

सूत्रार्थ समन्वय – इस प्रकार दुष् धातु से णिच् परे रहते लघूपधगुण प्राप्त होने प्राप्त होने पर उसको बाँधकर 'दोषो णौ' इस सूत्र से उपधा भूत ह्रस्व उकार के स्थान पर दीर्घ उकार होने पर 'दूषि' होने पर लिप्, शप्, गुण, एकार, अयादेश होने पर दूषयति तथा त प्रत्यय होने पर दूषयते यह रूपद्वय सिद्ध होते हैं।

टिप्पणियाँ

चित्तविराग अर्थ में तो यह ऊदादेश विकल्प से होता है। इसलिए चितं दूषयति दोषयति वा काम: यहाँ तो चित्तविराग अर्थ है हेतो: वा चित्तविरागे (६.४.९१) इससे विकल्प से दुष्धातु की उपधा के स्थान उ के स्थान पर ऊन यह दीर्घ आदेश होने पर दूषयति यह रूप सिद्ध होता है जब ऊदादेश नहीं हो तब दुष् धातु से णिच् पर रहते दुष् इ होने पर गुण 'ओ' तिप्, शप्, गुण, अयादेश, होने पर दोषयति यह रूप होता है इस प्रकार सकल रूप से दो रूप सिद्ध होते हैं।

अदादिगण की इण् गतौ इस धातु से अयन्तं प्रेरयति इस अर्थ में णिच् परे रहते इ इ होने पर यह सूत्र आरम्भ किया जाता है –

24.17 णौ गमिरबोधने॥ (२.४.४६)

सूत्रार्थ – अबोधनार्थ गम्यमान होने पर इण् धातु के स्थान पर 'गमि' यह आदेश होता है णिच् परे रहते।

सूत्र व्याख्या – यह विधि सूत्र तीन पदों का है। णौ (७/१) गमि: (१/१) अबोधने (७/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। न बोधनम् इति नञ् तत्पुरुष में अबोधनम्, सप्तमी में अबोधने। इणो गा लुङि (२.४.४५) यहाँ से इण: इस पद की अनुवृत्ति होती है। उससे सूत्र का अर्थ सिद्ध होता है। गमि का इकार उच्चारणार्थ है, गम् मात्र शेष रहता है। बोधन अर्थ में यह आदेश नहीं होता है, यह ध्यान योग्य है। इस प्रकार इस सूत्र से गमि यह आदेश होता है।

उदाहरण – गमयति

सूत्रार्थसमन्वय – इस प्रकार इण् धातु से णिच् परे रहते णौ गमिरबोधने इस सूत्र से गमि यह आदेश होने एवं अनुबन्ध लोप होने पर गम् इ हुआ। तत्पश्चात् अत उपधाया: (७.२.११६) इस से उपधाभूत अकार की वृद्धि होने पर 'जनीजृष्क्नसुरञ्जोऽयन्ताश्च' इस गणसूत्र से मित्संज्ञा होने पर या मिद्भाव होने पर मितां ह्रस्व: (६.४.९२) इस से उपधाभूत आकार का ह्रस्व होने पर 'गमि' इसकी ही सनाद्यन्ता धातव: (३.१.३२) इस सूत्र से धातु संज्ञा होने पर तिप्, शप्, गुण, एकार अयादेश होने पर गमयति यह रूप सिद्ध होता है, पक्ष में गमयते यह भी होता है।

बोधन अर्थ में तो यह आदेश नहीं होता है, उससे 'प्रत्यायति' यह रूप बनता है, पक्ष में प्रत्याययते यह भी होता है।

नित्य अधिपूर्वक इङ् अध्ययने इस अदादिगण की धातु से अधीयमानं प्रेरयति इस अर्थ में हेतुमति च (३.१.२६) इससे णिच् परे रहते अधि इ इ स्थिति में यह अग्रिम सूत्र आरम्भ किया जाता है।

24.18 क्रीङ् जीनां णौ (६.१.४८)

सूत्रार्थ – क्री-इङ् जि धातुओं से एच् के स्थान पर आकार आदेश होता है। णिच् परे रहते।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र दो पदों वाला है। क्रीङ्जीनाम् (६/३) णौ (७/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छद है। 'क्रीश्च इङ् च जिश्च' इनका इतरेतरयोग द्वन्द्व होने पर क्रीङ्जयः षष्ठी में क्रीङ्जीनाम्। आदे च उपदेशेऽशिति (६.१.४५) इससे आत्, एचः इन दोनों पदों की अनुवृत्ति होती है। इस प्रकार सूत्रार्थ सिद्ध होता है।

उदाहरण – अध्यापयति

सूत्रव्याख्या – इस प्रकार अधिपूर्वक इङ् धातु से णिच् परे रहते अधि इ इ यह स्थति होने पर धातु के इकार की क्रीङ्जीनां णौ इस सूत्र से आत्व होने पर उपधि आ इ होने पर अर्तिह्री. इसके योग से पुगागम होने एवं अनुबन्ध लोप होने पर अधि आपि यह होने पर यण् होकर 'अध्यापि' समुदाय की सनाद्यन्ता धातवः (३.१.३२) इस सूत्र से धातु संज्ञा में लट्, तिप्, शप्, गुण, एकार और अयादेश होने पर अध्यापयति यह रूप सिद्ध होता है, पक्ष में अध्यापयते यह भी यह भी रूप होता है।

इसी प्रकार कीणन्तं क्रयमाणं वा प्रेरयति इस अर्थ में डुक्रीञ् द्रव्यविनिमय इस धातु से णिच् पर रहने पर आत्व, पुगागम, तिप्, शप्, गुण ,एकार अयादेश होने पर जापयति यह रूप सिद्ध होता है, पक्ष में जापयते यह भी होता है।

आसानी से बोध के लिए यहाँ कुछ णिजन्त रूपों को लृट् और लृङ् लकार में निम्न तालिका के माध्यम से प्रदर्शित किया जा रहा है –

धातुः	ण्यन्तार्थः	सामान्यरूपाणि	णि.लटि रूपाणि	णि.लुङि.रूपाणि
अद्	खिलाना	अत्ति	आदयति	आदिदत्
कृ	कराना	करोति	कारयति	अचीकरत्
क्री	खरीदवाना	क्रीणाति	क्रापयति	अचिक्रपत्
क्रीड्	खेलाना	क्रीडति	क्रीडयति	अचिक्रीडत्
खाद्	खिलाना	खादति	खादयति	अचीखदत्
गम्	भिजवाना	गच्छति	गमयति	अजीगमत्
ग्रह्	ग्रहण करवाना	गृह्णाति	ग्राहयति	अजिग्रहत्
चल्	चलाना	चलति	चालयति	अचीचलत्
जन्	पैदा करना	जायते	जनयति	अजीजनत्
जीव्	जिलाना	जीवति	जीवयति	अजिजीवत्
ज्ञा	बोध करना	जानाति	ज्ञापयति	अजिज्ञपत्

तुष्	प्रसन्न करना	तुष्यति	तोषयति	अतूतुषत्
त्यज्	छुडाना	त्यजति	त्याजयति	अतित्यजत्
दा	दिलवाना	ददाति	दापयति	अदीदपत्
दृश्	दिखाना	पश्यति	दर्शयति	अदीदृशत्
नम्	झुकाना	नमति	नामयति	अनीनमत्
नश्	नष्ट कराना	नश्यति	नाशयति	अनीनशत्
पच्	पकवाना	पचति	पाचयति	अपीपचत्
पठ्	पढ़ाना	पठति	पाठयति	अपीपठत्
पा	पिलाना	पिबति	पाययति	अपीपबत्
पुष्	पुष्ट करना	पुष्यति	पोषयति	अपूपुषत्
बोध्	बोध कराना	बुध्यति	बोधयति	अबूबुधत्
मिल्	मिलाना	मिलति	मेलयति	अमीमिलत्
मुद्	प्रसन्न करना	मोदते	मोदयति	अमूमुदत्
यज्	यज्ञ करवाना	यजति	याजयति	अयीयजत्
युज्	मिलवाना	युनक्ति	योजयति	अयूयुजत्
रुद्	रुलाना	रोदिति	रोदयति	अरूरुदत्
लभ्	प्राप्त कराना	लभते	लम्भयति	अललम्भत्
लिख्	लिखाना	लिखति	लेखयति	अलीलिखत्
वच्	कहलवाना	वक्ति	वाचयति	अवीवचत्
वस्	वास कराना	वसति	वासयति	अवीवसत्
वृध्	बढाना	वर्धते	वर्धयति	अवीवृधत्
शी	सुलाना	शेते	शाययति	अशीशयत्
श्रु	सुनाना	श्रृणोति	श्रावयति	अशुश्रवत्
स्मृ	स्मरण करना	स्मरति	स्मारयति	असस्मरत्
हन्	मरवाना	हन्ति	घातयति	अजीघतत्
हस्	हसाना	हसति	हासयति	अजीहसत्

पाठगत प्रश्न 24.4

1. भापयते यहाँ आत्व कहाँ से हुआ?
2. सिध्यतेरपारलौकिके इसका उदाहरण क्या है?
3. दुष्यन्तं प्रेरयति इस अर्थ में णिच् परे होने पर कौन सा रूप बनाता है?
4. इण् गतौ धातु से अबोधन और बोधन अर्थ में क्या रूप होता है, णिच् परे रहते?
5. अधीयमानं प्रेरयति इस अर्थ में क्या रूप होता है?
6. 'कापयति' इसका क्या अर्थ है, लिखिए।
7. नित्यं स्मयतेः (६.१.५७) इसका उदाहरण कौन सा है?
8. विस्माययति इत्यादि में आत्त्वं कहाँ नित्य नहीं है?

पाठ का सार

यहाँ संक्षिप्त रूप से इस पाठ के मुख्य विषय को उपस्थापित करते हैं। भ्वादि से चुरादि तक जो धातु हैं उनका भूवादयो धातवः (१.३.१) इस सूत्र से धातु संज्ञा होती है। वे धातुएँ दसगणों में विभक्त है इस कारण दसगणीय धातुएं कहलाती है। उन्ही धातुओं से प्रेरणार्थ में प्रत्यय होने पर उन नवीन शब्दों की धातुसंज्ञा सनाद्यन्ता धातवः (३.१.३२) इससे होती है इस भिन्नता को सम्यक् रूप से समझना उचित है। और दूसरा णिच् प्रत्यय स्वार्थ एवं प्रेरणा भेद से दो प्रकार का होता है। यहाँ तो स्वार्थक णिच् चर्चा का विषय नहीं है, अपि तु प्रेरणार्थक ही है, यह भी सम्यक् रूप से ज्ञात करने योग्य है। और कहीं णिच् प्रत्यय नित्य ही होता है यह नियम नहीं है। अतः पक्ष में वाक्य भी साधु होता है। जैसे - पठ् धातु से णिच् प्रत्यय होने पर पाठयति यह पद ठीक है, वैसे ही पठितुं प्रेरयति यह वाक्य भी ठीक है। इस पाठ के आरम्भ में णिच् प्रत्ययान्त रूप को कैसे निष्पादित किया जाता है, इसको सूत्र सहित प्रदर्शित करके णिजन्त धातु से लुङ् लकार में विशेष के लिए ओः पुयण्जपरे इसकी व्याख्या की गई है। तत्पश्चात् पुक्-युक्-जुक् आगमविधायक सूत्र सोदाहरण व्याख्यायित किए गए हैं। उसके बाद जिच् परे रहने पर कभी धातु की उपधा का दीर्घ होता है, अथवा कभी उपधा का ह्रस्व होता और कभी उपधा का ऊत्व होता है। इत्यादि विषय उन-उन सूत्रों के उन-उन उदाहरणों में प्रदर्शित किए गए हैं। तत्पश्चात् ली-ला धातुओं के विषय में भी-स्म धातुओं के विषय में दीर्घचर्चा की गई है।

तत्पश्चात् साधयति, दूषयति, अध्यापयति, वाजयति, गमयति हमारे व्यवहार में आने वाले इन शब्दों की प्रक्रिया भी तत्तत् सूत्रों में प्रदर्शित की गई हैं।

पाठांत प्रश्न

1. भावयति इस रूप को सिद्ध कीजिए।
2. तनोर्यकि इस सूत्र को सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
3. ओः पुयण्जपरे इसकी व्याख्या कीजिए।
4. णौ च संचङो शास्त्र की व्याख्या कीजिए।
5. कीङ् जीनां णौ इसके उदाहरणों की प्रक्रिया प्रदर्शित कीजिए।
6. गमयति इस रूप की ससूत्र व्याख्या कीजिए।
7. भी धातु रूप विषय में टिप्पणी लिखिए।
8. सिध्यति इस रूप को सिद्ध कीजिए।
9. 'दोषो णौ' इस सूत्र में स्थित उदाहरणों का विशदीकरण कीजिए।
10. पाठ प्रदर्शित लीला धातु के रूप विषय में टिप्पणी लिखिए।
11. स्तम्भों में स्थित परस्पर सम्बद्धों का मिलान करो –

क-स्तम्भः		ख-स्तम्भः	
१.	तत्प्रयोजको हेतुश्च	(a)	उपधाह्रस्वः
२.	क्रीङ्जीनां णौ	(b)	तायते
३.	प्रत्याययति	(c)	बोधयति
४.	भीस्म्योर्हेतुभये	(d)	उभयपदविधानम्
५.	शाच्छासाह्वाव्यावेपां युक्	(e)	शाययति
६.	शालीनीकरणम्	(f)	उपधावृद्धिनिषेधः
७.	नोदात्तोपदेशस्य मान्तस्यानाचामेः	(g)	अभिभवः
८.	तनोर्यकि	(h)	आत्मनेपदम्
९.	मितां ह्रस्वः	(i)	अध्यापयति
१०.	णिचश्च	(j)	कर्तृसंज्ञा

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

24.1

1. हां, होता है।
2. कर्ता के प्रयोजक की।
3. प्रेरणा अर्थ में।
4. हां, होता है।
5. प्रयोजक कर्ता का व्यापार।
6. परस्मैपदात्मनेपद विधान होता है।
7. सन् परे रहते जो अङ्ग है, उसके अवयवाभ्यास के उकार का इत् हो पवर्ग यण् जकार और अवर्ण परे रहते।
8. अबीभवत्

24.2

1. चङ् परक णि परे रहते स्था धातु की उपधा का इकार अदेश होता है।
2. पुगागम
3. मितां ह्रस्वः।
4. णि परे रहते घटादि और ज्ञपादि की उपधा का ह्रस्व है।
5. ज्ञप मिच्च इस निर्देश से।

24.3

1. शाययति, शाययते
2. आत्मनेपद
3. बालं वञ्चयति
4. श्येनः वर्तिकाम् अभिभवति।
5. अष्ट
6. मूलधातु - ओ वै शोषणे, णिजन्त धातु - वाजि

टिप्पणियाँ

24.4

1. विभेते हेतुभये (६.१.५६)
2. अन्नं साधयति, निष्पादयतीत्यर्थः
3. दूषयति, दोषयते
4. अबोधन अर्थ में – गमयति, बोधन अर्थ में प्रत्याययति।
5. अध्यापयति
6. क्रीणन्तं क्रममाणं वा प्रेरयति
7. जटिलो विस्मायते
8. हेतु से भय गम्य न होने के कारण।

॥ चौबीसवां पाठ समाप्त॥

25

सन्नन्त प्रकरण

'सन्' एक प्रत्यय है। सन् प्रत्यय जिस धातु के अन्त में होता है वह धातु सन्नन्त-धातु कहलाती है। उन धातुओं का प्रकरण व्याकरण में सन्नन्त प्रकरण नाम से जाना जाता है। सन्नन्त धातु भ्वादि धातुओं से कोई अलग धातु नहीं है अपि तु भ्वादि से लेकर चुरादिगण तक जो दस गण के धातु हैं उन धातुओं से जब इच्छार्थक सन् प्रत्यय किया जाता है तब वे ही धातुएं सन्नन्तरूप को प्राप्त करती हैं। उन्ही सन्नन्त शब्दों की 'सनाद्यन्ता धातवः' (३.१.३२) इस सूत्र से धातु संज्ञा होती है। जैसे 'पठ व्यक्तायां वाचि' यह भ्वादिगणीय धातु है, उस से परे जब सन् प्रत्यय किया जाता है तब वो 'पिपठिष्' ऐसा नूतन रूप धारण कर लेती है और वह सन्नन्त धातु कहलाती है। इस प्रकार 'पिपठिष्' इस सन्नन्त की 'सनाद्यन्ता धातवः' (३.१.३२) इस सूत्र से धातुसंज्ञा होती है। उसके मूलरूप 'पठ्' इसकी तो 'भुवादयो धातवः' (१.३.१) इस सूत्र से धातु संज्ञा होती है, इस भेद को अच्छी तरह से समझना चाहिए।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप सक्षम होंगे :

- सन्नन्तधातुओं की निष्पत्ति जान पाने में;
- सन्प्रत्यय विधायक सूत्र का अर्थ जान पाने में;
- पिपठिषति इस की रूपसिद्धि को जान सकेंगे और इसे जानकर और रूपों को भी बना पाने में;
- 'सन्' प्रत्यय के बाद उन उन स्थलों पर होने वाले कुछ विशेष कार्यों को भी जान पाने में;
- लोकव्यवहार के लिए उपयोगी शब्दों की प्रक्रिया भी उन उन सूत्रों में बताई गयी है जो आप जान पाने में।

टिप्पणियाँ

25.1 सनाद्यन्ता धातवः॥ (३.१.३२)

सूत्रार्थ - सन् आदि से लेकर णिङ्न्त प्रत्यय जिस के अन्त में हैं उन की धातु संज्ञा होती है।

सूत्र की व्याख्या - इस संज्ञा सूत्र में दो पद है। सनाद्यन्ताः(१/३), धातवः (१/३) ऐसा सूत्रगत पदों का पदच्छेद है। 'सन् आदिः येषां ते सनादयः' ऐसा बहुव्रीहिसमास होता है। 'सनादयः अन्ते येषां ते सनाद्यन्ताः' यहाँ भी बहुव्रीहिसमास होता है।

सन्-क्यच्-काम्यच्-क्यङ्-क्यषोऽथाचारक्विब्-णिज्-यङस्तथा।
यगायेयङ्-णिङ् चेति द्वादशाऽमी सनादयः॥

सन्, क्यच्, काम्यच्, क्यङ्, क्यष्, आचारक्विप्, णिच्, यङ्, यक्, आय, ईयङ्, णिङ् इन सबके आदि में सन् है। इसलिये इन्हें सनादि कहते हैं। ये प्रत्यय जिनके अन्त में होते हैं वे सनाद्यन्त धातु होते हैं। जैसे- कमेर्णिङ् इस सूत्र से कम् धातु से णिङ् प्रत्यय होता है। तब कम् + णिङ् बनने के बाद प्रक्रिया से 'कामि' शब्द निष्पन्न होता है। इस के अन्त में णिङ् है अतः यह सनाद्यन्त शब्द है। उसकी इस सूत्र से धातु संज्ञा होती है। सनादि णिङन्त प्रत्यय जिनके अंत में लगे हैं, वे धातुसंज्ञक होते हैं यह इस सूत्र का अर्थ है।

25.2 धातोः कर्मणः समानकर्तृकादिच्छायां वा॥ (३.१.७)

सूत्रार्थ - इच्छार्थक इष् धातु का जो कर्म हो और इष् धातु के साथ समानकर्तृक भी हो उस धातु से इच्छा अर्थ में सन् प्रत्यय विकल्प से होता है।

सूत्र की व्याख्या - इस विधि सूत्र में पांच पद हैं। धातोः(५/१), कर्मणः (५/१), समानकर्तृकात् (५/१), इच्छायाम् (७/१), वा (अव्ययम्) ऐसा सूत्रगत पदों का पदच्छेद है। समानः कर्ता यस्य सः समानकर्तृकः, तस्मात् समानकर्तृकात् ऐसा बहुव्रीहिसमास होता है। गुप्तिज्किद्भ्यः सन् (३.१.५) इस सूत्र से सन् इस पद की अनुवृत्ति है।

इष् धातु का अर्थ है इच्छा इसलिये इष् धातु इच्छार्थक है। उस इष् धातु का कर्म जो धातु है अर्थात् इच्छार्थक इष्-धातुकर्मीभूत धातु से और इच्छा का जो कर्ता, वही कर्ता जिस धातु का हो उस इच्छा के समानकर्तृक धातु से परे इच्छार्थ में सन् प्रत्यय होता है। वह प्रत्यय विकल्प से होता है। इस प्रकार किसी धातु से परे तभी सन् प्रत्यय होता है जब ये दो विषय वहाँ हो। प्रथम जिस धातु से परे सन्प्रत्यय होगा वह अवश्य ही इष् धातु कर्म हो। दुसरा इष् धातु का जो कर्ता वही कर्ता इष्-धातुकर्मीभूत धातु का भी हो। जैसे की देवदत्तः पठितुम् इच्छति यहाँ इष् धातु का जो कर्ता देवदत्त वही पठ् धातु का भी कर्ता है। और पठ् धातु इष् धातु का कर्म भी है। अतः पठ् धातु से सन् प्रत्यय करने पर पिपठीषति ऐसा रूप होता है। इस सूत्र में विकल्पार्थक वा के ग्रहण से विकल्प से सन् प्रत्यय होगा अतः सन् प्रत्यय न होने के पक्ष में पठितुम् इच्छति यह वाक्य भी साधु है।

उदाहरण – पिपठिषति।

सूत्रार्थसमन्वय – पठितुम् इच्छति इस विग्रह में पठ धातु से धातोः कर्मणः समानकर्तृकादिच्छायां वा' इस सूत्र से सन् प्रत्यय होता है। क्योंकि इष् धातु का जो कर्ता वही कर्ता पठ् धातु का भी है और पठ धातु इष् धातु का कर्म भी है। सन् के नकार की 'हलन्त्यम्' इस सूत्र से इत्संज्ञा, 'तस्य लोपः' इस सूत्र से उसका लोप होकर पठ + स होगा। इस स्थिती में धातोः इसके अधिकार में सन् प्रत्यय कहने से 'आर्धधातुकं शेषः' से सन् की अर्धधातुक संज्ञा होगी। इस स्थिति में 'आर्धधातुकस्येड्वलादेः' सूत्र से इड् आगम होगा। इड् आगम और अनुबन्धलोप होकर पठ्+इस् होगा इस स्थिती में अग्रिम सूत्र का आरम्भ होगा।

25.3 सन्यङोः॥ (६.१.९)

सूत्रार्थ – सन्नन्त और यङन्त धातु के प्रथम एकाच् को द्वित्व होता है, यदि वे अजादि हों तो उनके द्वितीय एकाच् को द्वित्व होता है।

सूत्र की व्याख्या – यह विधिसूत्र एक पदात्मक है। सन्यङोः यह षष्ठीद्विवचनान्त पद है। सन् च यङ् च सन्यङौ, तयोः सन्यङोः। यह इतरेतरयोगद्वन्द्वसमास है। यहाँ 'एकाचो द्वे प्रथमस्य' और 'अजादेर्द्वितीयस्य' का अधिकार आ रहा है। सन् और यङ् दो प्रत्यय है। अतः 'प्रत्ययग्रहणे तदन्ता ग्राह्याः' इस नियम से सन् से सन्नन्त का और यङ् से यङन्त का ग्रहण होता है। सन्नन्त और यङन्त धातु के प्रथम एकाच् भाग को द्वित्व होता है, यदि धातु अजादि हों तो उनके द्वितीय एकाच् को द्वित्व होता है। यह सूत्र का अर्थ है। अर्थात् हलादिधातु में प्रथम एकाच् को द्वित्व होगा, अजादिधातु में द्वितीय एकाच् को द्वित्व होगा ऐसा समझना चाहिए। इस प्रकार इस सूत्र से द्वित्व का विधान होता है।

विशेष – सन्नन्तरूप के लिए पहले सन्प्रत्यय का निर्णय करना चाहिए। उसके बाद इह विषयक विचार करना चाहिए। यदि मूल धातु सेट् है तो इइ होता है। अन्यथा नहीं होता। सन् यह अर्धधातुकप्रत्यय है यह भूलना नहीं चाहिए। इइ के विधान के बाद सन्नन्त समुदाय की धातुसंज्ञा करके द्वित्वविधान करना मुख्य कार्य है। यदि मूल धातु परस्मैपदी है तो सन्नन्त के बाद भी वह परस्मैपदी ही होगा। यदि मूलधातु आत्मनेपदी है तो वह सन्नन्त के बाद भी आत्मनेपदी ही होगा।

उदाहरण – पिपठिषति

सूत्रार्थसमन्वय – पठ + इस् ऐसी स्थिती में 'सन्यङोः' सूत्र से पठ् इसके प्रथम एकाच् को द्वित्व होगा। क्योंकि पठ् धातु हलादि है।उसके बाद पठ्+पठ्+इस् ऐसी स्थिति में प्रथम पठ् की अभ्यास संज्ञा होगी हलादि शेषः इससे हलादिशेष में प्रथम ठकार का लोप होकर पपठ् होगा। ऐसी स्थिति में द्वितीय इकार के बादके सकार का आदेशप्रत्यययोः इससे षत्व होगा। और पिपठ् + इष् ऐसी स्थिती में वर्णसम्मेलन करके पिपठिष यह रूप बनेगा। बाद में इस समुदाय की सनाद्यन्ता धातवः (३.१.३२) इस सूत्र से धातुसंज्ञा होगी। तत्पश्चात् लट्लकार के प्रथमपुरुष की अपेक्षा से तिप्, शप्, प्रत्यय और विकरण लगकर अनुबन्धलोप होकर पिपठ + इष + इति इस स्थिति में अतो

टिप्पणियाँ

गुणः इस सूत्र से पररूप होकर पिपठिषति यह रूप सिद्ध होगा। इस प्रकार ही भवितुम् इच्छति (होने की इच्छा) इस अर्थ में बुभूषति ऐसे रूप बना सकेंगे।

अत्तुम् इच्छति (खाने की इच्छा) इस अर्थ में अद् धातु से सन् प्रत्यय करने पर लुड्सनोर्घस्लु इस सूत्र से घस्लृ आदेश होकर घस् + स इस स्थिति में यह सूत्र प्रस्तुत होगा –

25.4 सः स्यार्धधातुके॥ (७.४.४९)

सूत्रार्थ – सकार आदि में है जिसके ऐसे आर्धधातुक के परे विद्यमान सकार के स्थान पर तकार आदेश होगा।

सूत्र की व्याख्या – यह विधिसूत्र तीन पदों का है। सः (६/१), सि (७/१) आर्धधातुके (७/१) ऐसा सूत्रगत पदों का पदच्छेद है। 'अच उपसर्गात्तः' इससे तः की अनुवृत्ति होती है। तकार के बाद विद्यमान अकार उच्चारण के लिए है। सि यह अर्धधातुके इसका विशेषण है। इसलिए यस्मिन् विधिस्तदादावल्ग्रहणे इस परिभाषा से तदादि विधि में सकारादि अर्धधातुक में यह अर्थ प्राप्त होता है। इस प्रकार सकार आदि में है जिसके ऐसे अर्धधातुक के परे विद्यमान सकार के स्थान पर तकार आदेश होगा यह सूत्र का अर्थ होगा।

उदाहरण – जिघित्सति।

सूत्रार्थ समन्वय – इस प्रकार घस् + स इस में आर्धधातुक सकार विद्यमान है। अतः प्रकृत सूत्र से सकार के स्थान पर तकार आदेश होकर घत्स ऐसा रूप बनेगा। उस के बाद प्रथम एकाच् भाग का 'सन्यङोः' सूत्र से द्वित्व होकर घत् घत्स ऐसा बनेगा। उस के बाद 'हलादिशेषे' इससे घ घत्स बनेगा। प्रथम घकार को 'अभ्यासे चर्च' सूत्र द्वारा जश्त्व आदेश होकर जकार होगा। 'सन्यतः' सूत्र से जकार के परे विद्यमान अकार का इत्व होकर जिघत्स रूप बनेगा। उसके बाद वर्तमानकाल में लट्लाकर के तिपि शपि प्रत्यय और विकरण लगकर पररूप एकादेश होकर जिघत्सति ऐसा रूप सिद्ध होगा।

कर्तुम् इच्छति (करने की इच्छा) इस अर्थ में डुकृञ् करणे इस धातु से 'धातोः कर्मणः समानकर्तृकादिच्छायां वा' सूत्र से सन्प्रत्यय कर कृ+स इस स्थिती में 'सनः आर्धधातुकत्वात्' सूत्र से इडागम प्राप्त होता है। परन्तु 'एकाच उपदेशेऽनुदात्तात्' यह सूत्र इडागम करने में बाधा निर्माण करता है। इसलिए उसके दीर्घविधान के लिए यह सूत्र प्रवृत्त होता है।

25.5 अज्झनगमां सनि॥ (६.४.१६)

सूत्रार्थ – झलादि सन् के परे रहने पर अजन्त धातु, हन् व अजादेश गम् धातु के अच् के स्थान पर दीर्घ आदेश होता है।

सूत्र की व्याख्या – यह विधिसूत्र दो पदों का है। अज्झनगमाम् (६/३), सनि (७/१) ऐसा सूत्र गत पदों का पदच्छेद है। अच् च हन च गम् च अज्झनगमः, तेषाम् अज्झनगमाम्। ऐसा इतरेतरयोगद्वन्द्व

समास है। 'नोपधाया' इससे उपधाया पद की, 'अनुनासिकस्य क्विझलोः क्ङिति' इससे झलि इस पद की, 'ह्रलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः' इससे दीर्घ पद की यहाँ अनुवृत्ति होती है। यहाँ 'अङ्गस्य' इस सूत्र का अधिकार है। अच् यह 'अङ्गस्य' का विशेषण है अतः तदन्तविधि होकर अजन्त अङ्ग का ऐसा अर्थ प्राप्त होगा। झलि यह सनि का विशेषण है। अतः तदादिविधि होकर झलादि सन् के परे रहते ऐसा अर्थ होगा। इङश्च इससे विहित गम् धातु ही लिया जायेगा न कि गम्लृ गतौ धातु। जहाँ पर दीर्घ आदि का विधान होता है, वहाँ अचश्च इस परिभाषा से अचः स्थाने ऐसा अर्थ बन जाता है। अनुवृत्ति से प्राप्त उपधायाः इसका अन्वय हन् और गम् धातु के साथ ही होगा न कि अच् के साथ। क्योंकि अजन्त धातुओं में दीर्घ योग्य उपधावर्ण नहीं होता। इस प्रकार सूत्रार्थ होगा झलादि सन् के परे रहने पर अजन्त धातु, हन् व अजादेश गम् धातु के अच् के स्थान पर दीर्घ आदेश होता है।

उदाहरण – चिकीर्षति।

सुत्रार्थसमन्वय – इस प्रकार कृ स यहाँ इण् निषेध होने पर सन् झलादि है और भी यहाँ कृ यह अजन्त का अङ्ग भी है। अतः प्रकृतसूत्र से दीर्घ कृ+स बन जायेगा।

इस प्रकार कृ+स इस स्थिति में सन् के आर्धधातुक होने से सार्वाधातुकार्धधातुकयोः सूत्र से गुण प्राप्त होने पर अग्रिम सूत्र प्रवृत्त होता है।

25.6 इको झल्॥ (१.२.९)

सूत्रार्थ – इगन्त धातु से परे झलादि सन् कित्वहभाव को प्राप्त होता है।

सूत्र की व्याख्या – यह आदेश सूत्र दो पदों का है। इकः (५/१), झल् (१/१) यह सूत्रगत पदों का पदच्छेद है। असंयोगाल्लिकित् इससे कित् की और रुदविदमुषग्रहिस्वपिप्रच्छः संश्च इससे सन् की अनुवृत्ति आती है। सन् प्रत्यय धातु से ही होता है अतः सन् इससे धातु का आक्षेप होता है। उसी आक्षिप्त धातोः इस विशेष्य का विशेषण इकः यह है। अतः तदन्तविधि होकर इगन्त धातु से ऐसा अर्थ प्राप्त होगा। और झल् सन् का विशेषण है। अतः तदादिविधि होकर झलादि सन् ऐसा अर्थ प्राप्त होगा। इस प्रकार इगन्त धातु से परे झलादि सन् कित्वहभाव को प्राप्त होता है यह सूत्र का अर्थ होगा। इस सूत्र से कित्वहभाव का विधान किया जाता है। कित्वहभाव का प्रयोजन है गुण का निषेध करना।

उदाहरण – चिकीर्षति।

सूत्रार्थसमन्वय – इस प्रकार कृ+स इस स्थिति में प्रकृतसूत्र से कित्व होगा। क्योंकि कृ यह इगन्तधातु है। और स यह झालदि सन् है। कित्व के कारण 'क्ङिति च' सूत्र से गुण निषेध होता है। 'ऋत इद्धातोः' सूत्र से ऋकार को इकार आदेश होगा। रपरत्व होकर 'हलि च' इससे उपधाभूत इक वर्ण को दीर्घ आदेश होगा। 'आदेशप्रत्यययोः' इस सूत्र से सकार का षत्व होकर कीर्ष ऐसा रूप होता है। उसके बाद सन्यङोः इस सूत्र से सन्नन्तधातु के प्रथम एकाच की, को द्वित्व होकर, हलादिशेषे ह्रस्व होकर, 'कहोच' सूत्र से ककार के स्थान पर चवर्ग आदेश होगा। चकार आदेश होकर चिकीर्ष

ऐसा सन्नन्त रूप बनेगा। उसके बाद सनाद्यन्ता धातवः से उसकी धातुसंज्ञा होगी। वर्तमानकाल में लट् लकार के तिपि शपि प्रत्यय और विकरण लगकर पररूप एकादेश होकर चिकीर्षति ऐसा रूप सिद्ध होगा।

कर्तृऽभिप्राय में क्रियाफल में आत्मनेपदप्रत्यय होकर चिकीर्षति ऐसा रूप बनेगा।

पाठगत प्रश्न 25.1

1. पिपठिषति यहाँ मूलधातु कौन सी है और सन्नन्तधातु कौन सी है?
2. पिपठिषति यहाँ सन्नन्त की धातु संज्ञा किससे होती है?
3. सन्प्रत्यय किस अर्थ में होता है?
4. सन्धातु क्या नित्य होती है?
5. पिपठिषति इसका क्या अर्थ है?
6. सः स्यार्धधातुके इसका उदाहरण क्या है?
7. चिकीर्षति यहाँ दीर्घ किससे हुआ?
8. सन् के कित्वद्भाव का एक प्रयोजन लिखिए।
9. सनादि कौन से होते हैं, लिखिए।
10. भवितुमिच्छति इस अर्थ में क्या रूप होता है?

भवितुम् इच्छति (होने की इच्छा) इस अर्थ में भूधातू से सन् प्रत्यय होकर भू + स होगा। इस स्थिति में भूधातु ऊदन्त होने से सेट् है अतः सन् के अर्धधातुक होने के कारण 'आर्धधातुकस्येड्वलादेः' इस सूत्र से इडागम प्राप्त होता है जिसका निषेध करने के लिए यह सूत्र प्रस्तुत है।

25.7 सनि ग्रहगुहोश्च॥ (७.२.१२)

सूत्रार्थ – ग्रह गुह और उगन्त धातुओं से परे सन् को इट् आगम नहीं होता।

सूत्र की व्याख्या – यह निषेधसूत्र तीन पदों का है। सनि (७/१), ग्रहगुहोः (६/२) च (अव्ययम्) यह सूत्रगत पदों का पदच्छेद है। ग्रहश्च गुह च ग्रहगुहौ, तयोर्ग्रहगुहोः ऐसा यहाँ इतरेतरयोगद्वन्द्वसमास है। यहाँ पञ्चमी अर्थ में षष्ठी प्रयुक्त है। 'नेड् वशि कृति' इससे न और इट् की अनुवृत्ति है और चकार से 'श्युकः किति' इससे उक् का अनुकर्षण किया जाता है। इडागम सन् से होता है न कि धातु से। अतः सनि इसका षष्ठन्त्य रूप से परिवर्तन किया जाता है। यहाँ 'अङ्गस्य' इस सूत्र का अधिकार है। उकः यह 'अङ्गस्य' का विशेषण है। अतः तदन्तविधि होकर उगन्तात् अङ्गात्

ऐसा अर्थ प्राप्त होगा। ग्रह गुह और उगन्त धातुओं से परे सन् को इट् आगम नहीं होता यह सूत्रार्थ होता है। इस प्रकार इस सूत्र से इडागम के अभाव का विधान किया जाता है।

उदाहरण – बुभूषति।

सूत्रार्थसमन्वय – भू धातु से सनि प्रत्यय होकर भू+ स यह बन जायेगा। भू धातु उगन्त है अतः प्रकृतसूत्र से सन् को इडागम नहीं होगा। उसके बाद 'सन्यङोः' सूत्र द्वारा द्वित्व, हलादिशेष, ह्रस्व होकर भुभू + स यह रूप होगा। ततः 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' इससे आर्धधातुक में गुण प्राप्त होगा। इस स्थिति में 'इको झल्' इस सूत्र से झलादि सन् के कित्व के कारण 'क्ङिति च' सूत्र से गुणनिषेध होगा। ततः 'अभ्यासे चर्च' सूत्र से अभ्यास भकार का जश्त्व होगा। 'आदेशप्रत्यययोः' सूत्र से सन् के सकार का षत्व होकर बुभूष ऐसा रूप होगा। ततः उसके सन्नन्त समुदाय के कारण सनाद्यन्ता धातवः (३.१.३२) सूत्र से धातुसंज्ञा होगी। लट् लकार में प्रथमपुरुष एकवचन की विवक्षा में तिपि शपि प्रत्यय और विकरण लगकर पररूप एकादेश से बुभूषति ऐसा रूप सिद्ध होगा। बुभूषतः बुभूषन्ति इत्यादि स्थल में भी समान प्रक्रिया है यह जानना चाहिए।

ग्रहधातु का उदाहरण जिघृक्षति। गुधातु का उदाहरण जुघुक्षति।

इण गतौ इस धातु से एतुमिच्छति के अर्थ में सन् प्रत्यय होकर इ+स ऐसी स्थिति होनेपर यह सूत्र प्रस्तुत होता है।

25.8 सनि च॥ (२.४.४७)

सूत्रार्थ – सन् परे रहते इण् धातु के स्थान पर गमि आदेश होता है, किन्तु बोधन अर्थ होने पर उक्त आदेश नहीं होगा।

सूत्र की व्याख्या – यह विधिसूत्र दो पादों का है। सनि (७/१) च (अव्ययम्) ऐसा सूत्रगत पदों का पदच्छेद है। गा लुङि से इणः की, णौ गमिरबोधने से गमिः, अबोधने की अनुवृत्ति आती है। इण् धातु के स्थान पर गमि ऐसा आदेश होता है सन् प्रत्यय के परे रहते। किन्तु बोधनार्थ में वह आदेश नहीं होता। गमि यहाँ इकार इत्संज्ञाक है, अतः गम् इतना ही बचता है। इस प्रकार इस सूत्र द्वारा गमि ऐसे आदेश होगा।

उदाहरण – जिगमिषति

सूत्रार्थसमन्वय – इस प्रकार इण्धातु से सन् प्रत्यय के परे रहने पर इ+ स कि स्थिती में प्रकृतसूत्र द्वारा गमि आदेश होगा। क्योंकि यहाँ इण्धातु है और वह बोधनार्थक भी नहीं है। उसके बाद अनुबन्ध लोप होकर गम्+स इस स्थिति में गमेरिट् परस्मैपदिषु से सकारादि आर्धधातुकप्रत्यय सन को इडागम होगा। इडागम से धातु को द्वित्व होगा। द्वित्व हलादिशेष अभ्यासजश्त्व होकर जगम+इस यह बनेगा। उसके बाद सन्यतः से अभ्यास अकार का इत्व होकर सन के सकार का षत्व होकर जिगमिष रूप बनेगा। ततः लट् लकार में प्रथमपुरुष एकवचन की विवक्षा में तिपि शपि प्रत्यय और विकरण लगकर पररूप एकादेश से जिगमिषति ऐसा रूप सिद्ध होगा। इस प्रकार जिगमिषतः जिगमिषन्ति

टिप्पणियाँ

में भी समान प्रक्रिया होगी। प्रति उपसर्गपूर्वक इण्धातु से सन्नन्त में प्रतीतिषिषति ऐसा जो रूप होता है वहाँ इण्धातु से गमि यह आदेश नहीं होता। क्योंकि यहाँ बोधन अर्थ है। लिखितुमिच्छति (लिखने की इच्छा से) इस अर्थ में लिख् धातु से सन् प्रत्यय होता है। सन के आर्धधातुक होने से 'आर्धधातुकस्येड्वलादेः' से इडागम होकर लिख + इस होगा। इस स्थिति में सन्यङोः इस सूत्र से धातु को द्वित्व होकर लिख लिख + इस तरह यह बनेगा। ततः हालादिशेष अभासह्रस्व से लि लिख + इस बनेगा। इस स्थिति में लघु उपधगुण प्राप्त होने पर उसका निषेध करने के लिए यह सूत्र प्रस्तुत होता है।

25.9 रलो व्युपधाद्धलादेः संश्च॥ (१.२.२६)

सूत्रार्थ – उकारोपध या इकारोपध रलन्त हलादि धातुओं से परे इट् से युक्त क्त्वा और् सन् को विकल्प से कित्त्व होता है।

सूत्र की व्याख्या – इस अतिदेशसूत्र में पांच पद हैं। रलः (५/१) व्युपधात् (५/१) हलादेः (५/१) सन (१/१) च (अव्ययम्) ऐसा सूत्रगत पदों का पदच्छेद है। उश्च इश्च वी, ते उपधे यस्य स व्युपधः तस्मात् व्युपधात्, ऐसा द्वन्द्वगर्भ बहुव्रीहिसमास है। नोपधात्थफान्ताद्वा से वा की, न क्त्वा सेट् से सेट् की, असंयोगाल्लिट् कित् से कित् की, पूङः क्वा च से क्त्वा की अनुवृत्ति आती है। इस प्रकार धातु की उपधा में इकार अथवा उकार हो, धातु के अन्त में रल्प्रत्याहार का कोई वर्ण विद्यमान हो, और धातु हलादि हो, क्त्वा या सन् को इट् आगम हुआ हो तो क्त्वा और सन् को विकल्प से कित्त्व होता है यह सूत्र का सम्पूर्ण अर्थ है। इस प्रकार इस सूत्र से वैकल्पिक कित्त्व का विधान किया जाता है।

उदाहरण – इकारोपधा का उदाहरण – लिलिखिषति, लेलिखिषति।

उकारोपधा का उदाहरण – रुरुचिषते, रुरोचिषते।

सूत्रार्थसमन्वय – लिख् अक्षरविन्यास से यह धातु इकारोपध, हलादि, रलन्त है। अतः लिख धातु से सन्प्रत्यय करने पर द्वित्वादिकार्य होकर लि लिख + इस ऐसा रूप बनता है। इस स्थिति में प्रकृतसूत्र से इस इसका किद्वद्भाव होकर लघूपधगुणनिषेध होकर लिलिख स ऐसा बनता है। ततः आदेशप्रत्यययोः से सकार का षत्व होकर लि लिखिष यह बनता है। उसकी धातुसंज्ञा होकर लट् लकार में प्रथमपुरुष एकवचन की विवक्षा में तिपि शपि प्रत्यय और विकरण लगकर लिलिखिषति ऐसा रूप बनेगा। कित्त्व के अभाव पक्ष में लघूपधगुण होता है तब लिलेखिषति ऐसा रूप भी बनता है।

अब उकारोपधा धातु के विषय में कहते है। रुच् दीप्तावभिप्रीतौ च यह धातु आत्मनेपदी उकारोपध, हलादि, रलन्त है। रोचितुम् इच्छति इस अर्थ में रुचधातु से सन् प्रत्यय इडागम होकर धातु का द्वित्व हलादिशेष से रुरुच्+ इस ऐसा रूप बनेगा। प्रकृतसूत्र से विकल्प से किद्वद् भाव में लघूपधा गुणनिषेध करके आदेशप्रत्यययोः से सकार का षत्व होकर रुरुचिष यह रूप होगा। उसकी धातुसंज्ञा होकर लट् लकार में प्रथमपुरुष एकवचन की विवक्षा में तिपि, शपि प्रत्यय और विकरण लगकर

रुरुचिषते ऐसा रूप बनेगा। कित्त्वाभाव पक्ष में तो लघूपधागुण होता ही है। तब रुरोचिषते ऐसा रूप भी होगा।

भेत्तुम् इच्छति (विदारण करने की इच्छा से) इस अर्थ में भिदिर विदारणे धातु से सन्प्रत्यय करने पर भिद् स यह रूप बनता है। तत: यह धातु अनिट् है अत: इडागम नहीं होगा। तत: भिद् का द्वित्व होकर हलादिशेष अभ्यास जश्त्वादि कार्य करके बिभिद् + स यह रूप होगा। तत: सन् के आर्धधातुक होने से लघूपधागुण प्राप्त होने पर इस अतिदेश सूत्र का प्रारम्भ होता है।

25.10 हलन्ताच्च॥ (१.२.१०)

सूत्रार्थ – इक् के समीप में विद्यमान हल् से परे झलादि सन् को किद्वद्भाव होता है।

सूत्रव्याख्या – यह दो पदों का अतिदेशसूत्र है॥ हलन्तात् (५/१) च (अव्ययम्) ऐसा सूत्रगत पदों का पदच्छेद है। इको झल् इस सूत्र की अनुवृत्ति है। असंयोगाल्लिट् कित् से कित् की अनुवृत्ति है। रुदविदमुषग्रहिस्वपिप्रच्छ: संश्च से सन् कि भी अनुवृत्ति है। अत: इक् के समीप में विद्यमान हल् से परे झलादि सन् को किद्वद्भाव होता है यह सूत्र का अर्थ होगा। सूत्र में प्रयुक्त अन्त पद का समीप ऐसा अर्थ है। इस सूत्र से कित्त्व का विधान किया जाता है।

ब् बिभित्सति, बिभित्सते।

सूत्रार्थसमन्वय – इस प्रकार भिद् धातु से सन्प्रत्यय द्वित्वादि कार्य करके बिभिद् यह रूप बनता है इस स्थिति में प्रकृत सूत्र से झलादि सन् को किद्वद्भाव होता है। क्योंकि यहा इक् है इकार उसका समीपवर्ती हल् होता है दकार। तत: क्ङिति च से लघूपधागुण निषेध होता है। तत: खरि च से चर्त्व होकर बिभित्स यह धातु बनता है। उसकी धातुसंज्ञा होकर लट् लकार में प्रथमपुरुष एकवचन की विवक्षा में तिपि शपि प्रत्यय और विकरण लगकर बिभित्सति ऐसा रूप बनेगा। मूलधातु उभयपदी है अत: सन्नन्तधातु भी उभयपदी होगा। अत: एक पक्ष में बिभित्सते ऐसा भी रूप होता है।

तुदादिगणिय कृ गु धातुओं से 'इट् सनि वा' सूत्र से विकल्प से इट् प्राप्त है अपि तु 'दृङ्-धृङ्प्रच्छ धातुओं से 'एकाच उपदेशेऽनुदात्तात्' सूत्र से आर्धधातुक इ का निषेध होता है। अत: इस सब का निषेध कर इडागम के विधानार्थ यह सूत्र प्रस्तुत है।

25.11 किरश्च पञ्चभ्य:॥ (७.२.७५)

सूत्रार्थ – कृ ,गृ, दृङ् ,धृङ् और प्रच्छ धातुओं से परे सन् को इड् आगम होता है।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र तीन पदों का है। किर: (१/१) च (अव्ययम्) पञ्चभ्य: (५/३) ऐसा सूत्रगत पदों का पदच्छेद है। 'इडत्यर्तिव्ययतीनाम्' से इट् कि, 'स्मिपूङ्ञ्ज्वशां सनि' से सनि कि अनुवृत्ति आती है। कृ, गृ, दृङ्, धृङ् और प्रच्छ धातुओं से परे सन् को इड् आगम होता है यह सूत्र का अर्थ है।

टिप्पणियाँ

उदाहरण – जिगरिषति, जिगलिषति।

सूत्रार्थसमन्वय – गरितुं गलितुमं वा इच्छति (निगलने की इच्छा करता है) इस अर्थ में गघ् निगरणे धातु से सन् प्रत्यय होगा। सन के आर्धधातुक होने से आर्धधातुकस्येड्वलादेः से इडागम होगा। उस इडागम का 'सनि ग्रहगुहोश्च' से निषेध प्राप्त होता है। पुनः उसका निषेध कर इट् सनि वा से विकल्प से इट् आगम की प्राप्ति हुई। उसका भी निषेध करके किरश्च पञ्चभ्यः से नित्य इडागम हुआ। क्योंकि यहाँ कृ धातु है। उससे विहित सन् भी है। उसके बाद ग इसका द्वित्व होकर गूग + इस यह रूप होगा। इस स्थिति में उरत् सूत्र से अभ्यास ऋकार को अकार आदेश, रपरादि से जगृ+इस यह रूप बना। इस स्थिति में 'वृतो वा' से विकल्प से इट् के इकार को दीर्घत्व प्राप्त है 'चास्येटो दीर्घत्वं नेच्छन्ति' इस वचन से तस्य बाध होता है। ततः 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' इससे ऋकार को गुण होकर जगृ+इस यह रूप बनता है। इस स्थिति में अभ्यासाकार को इत्व 'आदेशप्रत्यययोः' से सकार को षत्व होकर जिगरिष यह बनता है। ततः लट् लकार में प्रथमपुरुष एकवचन की विवक्षा में तिपि शपि प्रत्यय और विकरण लगकर जिगरिषति ऐसा रूप बनेगा। इट् के परे रहते 'अचि विभाषा' से सर्वत्र रेफ को विकल्प से लत्व हो जाता है। अतः जिगलिषति ऐसा रूप भी बनता है।

इस प्रकार ही करितुम् (करीतुम्) इच्छति इस अर्थ में कृ विक्षेपे इस धातु से सनादिकार्य कर चिकरिषति ऐसा रूप सिद्ध होता है।

वैसे ही धर्तुमिच्छति इस अर्थ में धृङ् अनवस्थाने धातु से सनादि कार्य करने के पश्चात् दिधरिषते ऐसा रूप होता है।

प्रच्छ जीप्सायाम् धातु से प्रष्टुमिच्छति इस अर्थ में सन्नन्त में धातु के अनिट् होने के कारण इड् आगम अप्राप्त है। तब किरश्च पञ्चभ्यः इस विशेष सूत्र से नित्य इडागम करके द्वित्वादिकार्य करने पर पिपृच्छति ऐसा रूप बनता है।

अध्येतुम् इच्छति इस अर्थ में नित्य अधिपूर्वकात् इ अध्ययने इस अदादिगणीय धातु से 'धातोः कर्मणः समानकर्तृकादिच्छायां वा' सूत्र से सन् करके इ+ स इस स्थिति में अग्रिम सूत्र प्रवृत्त होता है।

25.12 इङश्च॥ (२.४.४८)

सूत्रार्थ – सन् परे रहने पर इङ् धातु के स्थान पर गमि आदेश होता है।

सूत्र की व्याख्या – यह विधिसूत्र दो पदों का है। इडः (५.१) च ऐसा सूत्रगत पदों का पदच्छेद है। णौ गमिरबोधने से गमिः की, सनि च से सनि की अनुवृत्ति आती है। सन् परे रहने पर इङ् धातु के स्थान पर गमि आदेश होता है यह सूत्र का अर्थ होता है। गमि यहाँ इकार की इत्संज्ञा होने से गम् मात्र अवशिष्ट रहता है।

उदाहरण – अधिजिगांसते।

सूत्रार्थसमन्वय – इस प्रकार नित्य अधिपूर्वक इ धातु से सन् प्रत्यय करने पर इङश्च सूत्र से गमि आदेश होकर अनुबन्ध लोप होकर अधिगम् + स यह बनेगा। ततः अज्झनगमां सनि सूत्र से उपधा दीर्घ होकर गाम्+स रूप बनेगा। मूलधातु ङित् है अतः अनुदात्तङित आत्मनेपदम् सूत्र से आत्मनेपदी होगा। इसके फलस्वरूप पूर्ववत्सनः से सन्नन्तरूप भी आत्मनेपद होगा। ततः धातु को द्वित्व, हलादिशेष, अभ्यासह्रस्व, सन्यतः से अभ्यास अकार का इत्व और मकार का अनुस्वार होकर अधि+जिगांस यह रूप बनेगा। इस स्थिति में प्रत्यय लगने अधिजिगांसते यह रूप सिद्ध होता है।

पाठगत प्रश्न 25.2

1. इडश्च इस सूत्र का क्या अर्थ है?
2. सनि च इसका क्या अर्थ है?
3. प्रष्टुमिच्छति इस अर्थ में प्रच्छधातु से सन् प्रत्यय होने पर क्या रूप होता है?
4. किरश्च पञ्चभ्यः इससे क्या होता है?
5. हलन्ताच्च इससे क्या विधान होता है?
6. ग्रहद् धातु से सन् प्रत्यय होने पर क्या उदाहरण है?
7. गुहद् धातु से सन् प्रत्यय होने पर क्या उदाहरण है?
8. रलो व्युपधाद्धलादेः संश्च इस सूत्र से विधीयमान कित्त्व क्या नित्य है अथवा अनित्य?

तनितुम् इच्छति इस अर्थ में तनु विस्तारे इस उभयपदी धातु से सन् प्रत्यय करने पर तन्+स इस स्थिति में तनिपतिदरिद्रातिभ्यः सनो वा इइवाच्यः इस वार्तिक से विकल्प से इट् आगम होगा। इट्पक्ष में तन इ + स स्थिति में धातु को द्वित्व, हलादिशेष, अभ्यासह्रस्व, अभ्यास अकार को इत्व आदि प्रक्रिया से तितास ऐसा सन्नन्त रूप होगा। ततः सनाद्यन्ता धातवः (३.१.३२) से उसकी धातुसंज्ञा होकर लट् लकार में प्रथमपुरुष एकवचन की विवक्षा में तिपि शपि प्रत्यय और विकरण लगकर पररूप आदेश होकर तितनिषति ऐसा रूप बनेगा। जब इट् का अभाव होगा तब तन् + स इस स्थिति में यह सूत्र प्रवृत्त होगा।

25.13 तनोतेर्विभाषा॥ (६.४.१७)

सूत्रार्थ – झलादि सन् के परे रहते तन् धातु की उपधा को विकल्प से दीर्घ आदेश होता है।

सूत्र की व्याख्या – यह विधिसूत्र दो पदों का है। तनोतेः (६/१) विभाषा (१/१) ऐसा सूत्रगत पदों का पदच्छेद है। 'नोपधायाः' से उपधायाः की, 'ह्रलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः' से दीर्घः की अनुवृत्ति आती है। झलादि सन् के परे रहते तन् धातु की उपधा को विकल्प से दीर्घ आदेश होता है यह समग्र सूत्र का अर्थ होगा।

टिप्पणियाँ

उदाहरण – तितांसति, तितंसति।

सूत्रार्थसमन्वय – तन् धातु से सन् होने पर तन् + स बनेगा इस स्थिति में तनोतेर्विभाषा इससे उपधाभूत अकार को दीर्घ होकर तान् + स बनेगा। ततः धातु को द्वित्व, हलादिशेष, अभ्यासह्रस्व, अभ्यास अकार को इत्व होकर तितान् + स बनेगा। इस स्थिति में नश्चापदान्तस्य झलि सूत्र से नकार को अनुस्वार होकर तितांस बना। लट् लकार में प्रथमपुरुष एकवचन की विवक्षा में तिपि शपि प्रत्यय और विकरण लगकर पररूप आदेश होकर तितंसति ऐसा रूप बनेगा। तप्रत्यय से तितंसते रूप ऐसे साकल्य से षट् रूप होते हैं।

देवितुम् इच्छति इस अर्थ में दिवु क्रीडाविजिगीषाव्यवहार-स्तुतिमोदमदस्वप्नकान्तिगतिषु धातु से सन् होनेपर दिव+ स इस स्थिति में यह सूत्र प्रस्तुत होता है।

25.14 सनीवन्तर्धभस्जदम्भुश्रिस्वृयूर्णभरज्ञपिसनाम्॥ (७.२.४९)

सूत्रार्थ – इवन्त ऋधादि धातुओं से परे सन् को विकल्प से इड् आगम होता है।

सूत्र की व्याख्या – यह विधिसूत्र दो पदों का है। सनि (७/१) इवन्तर्धभस्जदम्भुश्रिस्वृयूर्णभरज्ञपिसनाम् (६/३) ऐसा सूत्रगत पदों का पदच्छेद है। इव् अन्ते येषां ते इवन्ताः, इवन्ताश्च ऋधश्च भस्जश्च दम्भुश्च श्रिश्च स्वृश्च युश्च ऊर्जुश्च भरश्च ज्ञपिश्च सन् च तेषामितरेतरयोगद्वन्द्वे इवन्तध 'भस्जदम्भुश्रिस्वृयूर्णभरज्ञपिसनः तेषां इवन्तर्धभस्जदम्भुश्रिस्वृयूर्णभरज्ञपिसनाम्, ऐसा यहाँ बहुव्रीहिगर्भ द्वन्द्वसमास है। 'स्वरतिसूतिसूयतिधूञूदितो वा' से वा की, 'इण्निष्ठायाम्' से इट् की अनुवृत्ति आती है। जिस के अन्त में इव् है वह धातु इवन्त कहा जाता है जैसे दिव सिव इत्यादि। इवन्त धातुओं से और ऋध-भस्ज्-दम्भ-श्रि-स्वृ-यु-ऊणु-भर-ज्ञप्-सन् धातुओं से परे सन् को विकल्प से इड् आगम होता है यह सूत्र का अर्थ होगा। इस सूत्र से वैकल्पिक इडागम का विधान किया जाता है। प्रकृतसूत्र से जब इट् नहीं होता तब हलन्ताच्च इससे किद्वद्भाव के कारण गुणनिषेध होगा यह जानना चाहिए।

उदाहरण – अब क्रमश उदाहरण देखेंगे।

इवन्त – दिव् धातु से सन् होने पर प्रकृतसूत्र से वैकल्पिक इडागम होकर दिव + इस बनेगा। इस स्थिति में दिव धातु से द्वित्व हलादिशेष होकर दिदिव+इस बनेगा। ततः लघूपधागुण और सन् के सकार को षत्व होकर लट् लकार में प्रथमपुरुष एकवचन की विवक्षा में तिपि शपि प्रत्यय और विकरण लगकर पररूप आदेश होकर दिदेविषति ऐसा रूप बनेगा। इडाभाव पक्ष में हलन्ताच्च से सन् को किद्वद्भाव होकर गुणनिषेध होता है। च्छ्वोः शूडनुनासिके च सूत्र से धातु के वकार को ऊठ् आदेश होकर दि ऊ स बनेगा। इस स्थिति में इको यणचि से यण् होकर अज्झनगमा सनि से दीर्घ द्यू स बनेगा। ततः द्यू को द्वित्व हलादिशेष अभ्यास ऊकार को ह्रस्व सकार को षत्व तिबादि कार्य होकर दुद्यूषति रूप सिद्ध होगा।

ऋध्धातु का उदाहरण – अर्धितुमिच्छति ईसति, अदिधिषति।

भ्रस्जधातु का उदाहरण – बिभज्जिषति, बिभर्जिषति, बिभक्षति।

दम्भधातु का उदाहरण – धिप्सति, धीप्सति, दिदम्भिषति।

श्रिधातु का उदाहरण – शिश्रीषति, शिश्रयिषति।

स्वृधातु का उदाहरण – सुस्वर्षति, सिस्वरिषति।

युधातु का उदाहरण – युयूषति, यियविषति।

ऊर्णधातु का उदाहरण – ऊर्जुनूषति, ऊर्जुनविषति, ऊर्जुनविषति।

भृधातु का उदाहरण – बुभूषति, बिभरिषति।

ज्ञप्धातु का उदाहरण – जीप्सति, जिज्ञपयिषति।

सन्धातु का उदाहरण – सिषासति, सिसनिषति।

हलन्ताच्च से किद्वद्भाव में गुणनिषेध प्राप्त होने पर उसका भी निषेध करने के लिए यह सूत्र प्रवृत्त होता है।

25.15 मुचोऽकर्मकस्य गुणो वा॥ (७.४.५७)

सूत्रार्थ – सकारादि सन् के परे रहते अकर्मक मुच् धातु के इक् को विकल्प से गुण होता है।

सूत्र की व्याख्या – यह विधिसूत्र चार पदों का है।

सूत्रार्थसमन्वय – मुचः (६/१) अकर्मकस्य (६/१) गुणः (१/१) वा यह सूत्रगत पदों का पदच्छेद है। सः स्यार्धधातुके से सि की, सनि मीमाघुरभलभशकपतपदामच इस से सनि की अनुवृत्ति आती है। सूत्र में गुण शब्द कहकर गुण का विधान किया है। अतः इको गुणवृद्धी इस परिभाषा के बलपर इकः की उपस्थिति है। सकारादि सन् का तात्पर्य है इट् रहित सन्। इस प्रकार सकारादि सन् के परे रहते अकर्मक मुच् धातु के इक् को विकल्प से गुण होता है यह सूत्रार्थ होगा।

उदाहरण – मोक्षते, मुमुक्षते वा वत्सः स्वयमेव। (बछडा अपने आप मुक्त होना चाहता है।)

सूत्रार्थसमन्वय – मुच्लृ मोक्षणे यह धातु सकर्मक है किन्तु कर्मकर्ता होने पर या कर्म की विवक्षा न होने पर यह अकर्मक होता है। एवं मोक्तुमिच्छति स्वयमेव इस अर्थ में मुच् धातु को प्रकृतसूत्र से विकल्प से गुण होकर मोच+स बनेगा। क्योंकि यहाँ अकर्मक मुच् धातु है और सकारादि सन् प्रत्यय है। ततः धातु को द्वित्व, हलादिशेष, अभ्यासह्रस्व होकर अत्र लोपोऽभ्यासस्य से पूरे अभ्यास का लोप होकर मोच + स बनेगा। इस स्थिति में चोः कुः से कुत्व होकर सकार को षत्व होकर मोक्ष रूप सिद्ध होगा। उसकी सनाद्यन्ता धातव (३.१.३२) से धातु संज्ञा होगी। कर्मकर्तृ होने पर धातु स्वतः आत्मनेपदी रहती है। पूर्वत्सनः नियम से लट् लकार में प्रथमपुरुष एकवचन की विवक्षा में शपि प्रत्यय और विकरण लगकर पररूप आदेश होकर मोक्षते ऐसा रूप बनेगा। गुणाभाव पक्ष में मुमुक्षते इस प्रकार दो रूप होंगे।

टिप्पणियाँ

हलन्ताच्च इससे रुद् विद् मुष् सन को कित्व होगा, रलो व्युपधाद्धलादेः संश्च से विकल्प से कित्व होगा इन दोनों का निषेध करने के लिए अर्थात् प्रतिप्रसव के लिए यह सूत्र प्रवृत्त होगा। परं ग्रहधातु से न क्त्वा सेट् सूत्र से प्रतिनिषेध का निषेध करने के लिए अग्रिमसूत्र प्रवृत्त होता है।

यद्यपि स्वप्-प्रच्छ धातुओं से परे क्त्व कित्व है तथापि सन का कित्व नहीं है अतः अप्राप्त कित्व के विधान के लिए यह शास्त्र प्रवृत्त होता है।

25.16 रुदविदमुषग्रहिस्वपिप्रच्छः संश्च॥ (१.२.८)।

सूत्रार्थ – रुद्-विद-मुष्-ग्रह-स्वप्-प्रच्छ धातुओं से परे सन् और क्त्वा को किद्वद्भाव होता है।

सूत्र की व्याख्या – यह अतिदेशसूत्र तीन पदों का है। रुदविदमुषग्रहिस्वपिप्रच्छः (५/१) सन् (१/१) च यह सूत्रगत पदों का पदच्छेद है। रुषश्च विदश्च मुषश्च ग्रहिश्च स्वपिश्च प्रच्छ च तेषां समाहारद्वन्द्वे रुदविदमुषग्रहिस्वपिप्रच्छ, तस्मात् रुदविदमुषग्रहिस्वपिप्रच्छः। यहा द्वन्द्वसमास है। चकार समुच्चयार्थक है। पूर्वसूत्र से अर्थात् मृडमृदगुधकुषक्लिशवदवसः क्त्वा से क्त्वा का समुच्चय है। असंयोगाल्लिट् कित् से कित् की अनुवृत्ति आती है। एवं पूर्वोक्त सूत्र का अर्थ सिद्ध होता है। इसप्रकार इस सूत्र से कित्व का विधान किया जाता है।

उदाहरण – रुरुदिषति।

सूत्रार्थसमन्वय – रोदितुम् इच्छति इस अर्थ में रुदिरअश्रुविमोचने धातु से सन् प्रत्यय करने पर इडागम, रुद् को द्वित्व, हलादिशेष होकर रु रुद् इस प्रकार बनेगा। ततः सन्यतः से अभ्यास के अकार को इत्व होकर रु रुद इस बनेगा। इस स्थिति में सन् अर्धधातुक होने से 'यदागमास्तद्गुणीभूतास्तद्ग्रहणेन गृह्यन्ते' इस परिभाषा से उसके आगम का भी आर्धधातुकत्व होता है अतः पुगन्तलघूपधस्य इस सूत्र से गुण प्राप्त होता है। प्रकृत सूत्र से सन् का किद्वद्भाव हो जाने से 'क्ङिति च' से गुण का निषेध होता है। ततः आदेशप्रत्यययोः से सकार को षत्व होकर रुरुदिष बनेगा। उसकी सनाद्यन्ता धातव (३.१.३२) से धातुसंज्ञा होगी। लट् लकार में प्रथमपुरुष एकवचन की विवक्षा में शपि प्रत्यय और विकरण लगकर पररूप आदेश होकर रुरुदिषति ऐसा रूप बनेगा।

इस प्रकारहि वेदितुम् वेत्तुम् वा इच्छति इस अर्थ में विद् धातु से सन् प्रत्यय करने पर विविदिषति, मोषितुमिच्छति इस अर्थ में मुष स्तेये इस धातु से सन् प्रत्यय करने मुमुषिषति होगा यह जानना चाहिए। ग्रहीतुमिच्छति इस अर्थ में ग्रह उपादाने इस धातु से सन् प्रत्यय करने जिघृक्षति ऐसा रूप होगा। यहाँ सन् के किद्वद्भाव का फल गृहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचतिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जतीनां ङिति च' सूत्र से रेफ का संप्रसारण है।

स्वप्तुमिच्छति इस अर्थ में नि ष्वप शये धातु से सन् प्रत्यय करने पर सुषुप्सति ऐसा रूप होगा। यहाँ सन् के किद्वद्भाव का फल वचिस्वपियजादीनां किति सूत्र से वकार संप्रसारण है।

अब आपके बोध सौकर्य के लिए लट् लकार में कुछ सन्नन्त रूप नीचे तालिका में दर्शायें गये हैं-

धातुः	सन्नन्तार्थः	सामान्यरूपाणि	लटि सन्नन्तरूपाणि
अर्च्	पूजने की इच्छा करना।	अर्चति	अर्चिचिषति
आप्	पाने की इच्छा करना	आप्नोति	ईप्सति
अधिइङ्	पढने की इच्छा करना।	अधीते	अधिजिगांसते
कथ्	कहने की इच्छा करना	कथयति	चिकथयिषति-ते
कृ	करने की इच्छा करना	करोति	चिकीर्षति
खाद्	खाने की इच्छा करना	खादति	चिखादिषति
गम्	जाने की इच्छा करना	गच्छति	जिगमिषति
गृ	निगलने की इच्छा करना	गिरति, गिलति	जिगरिषति जिगलिषति
ग्रह्	ग्रहण करने की इच्छा	गृह्णाति	जिघृक्षति-ते
घा	सूंघने की इच्छा करना	जिघति	जिघासति
चल्	चलने की इच्छा करना	चलति	चिचलिषति
चि	चयन करने की इच्छा	चिनोति	चिचीषति
छिद्	काटने की इच्छा करना	छिनत्ति	चिच्छित्सति-ते
चुं	चुराने की इच्छा करना	चोरयति	चुचोरयिषति-ते
जि	जीतने की इच्छा करना	जयति	जिगीषते
ज्ञा	जानने की इच्छा करना	जानाति	जिज्ञासते
तृ	तरने की इच्छा करना	तरति	तितीर्षति
दृश्	देखने की इच्छा करना	पश्यति	दिदृक्षते
पच्	पकाने की इच्छा करना	पचति	पिपक्षति-ते
पा	पीने की इच्छा करना	पिबति	पिपासति
बुध्	जानने की इच्छा करना	बुध्यते	बुभुत्सते
भुज्	खाने की इच्छा करना	भुञ्जते	बुभुक्षते
भू	होने की इच्छा करना	भवति	बभूषति
मुच्	छुटने की इच्छा करना	मुञ्चते	मुमुक्षते
मृ	मरने की इच्छा करना	म्रियते	मुमूर्षते
लभ्	पाने की इच्छा करना	लभते	लिप्सते

पाठगत प्रश्न 25.3

1. तन् धातु से सन् प्रत्यय करने पर कितने रूप होते हैं और वे कौन से हैं?
2. स्वप्तुमिच्छति इस अर्थ में स्वप्धातु से सन् प्रत्यय करने पर क्या रूप होता है?
3. रुदविदमुषग्रहिस्वपिप्रच्छः संश्च इससे क्या विधान होता है?
4. रुरुदिषति इसका क्या अर्थ है?
5. सनीवन्तादि सूत्र को पूरा कीजिए।
6. एतुमिच्छति इस अर्थ में इधातु से सन् प्रत्यय होने पर क्या रूप होता है?
7. सनि च यह किस प्रकार का सूत्र है। अतिदेशसूत्र अथवा विधिसूत्र?

पाठ का सार

भ्वादि से चुरादिगण तक जो दसगणीय धातुएं हैं उन धातुओं से इच्छा अर्थ में सन् प्रत्यय होता है। उस सन्नन्त शब्द की सनाद्यन्ता धातवः (३.१.३२) से धातु संज्ञा होती है। जैसे पठ् व्यक्तायां वाचि इस मूलधातु से सन् प्रत्यय करने पर पिपठिषति यह रूप बनेगा। यहाँ पिपठिष की धातुसंज्ञा होती है। मूल धातु पठ् इसकी भूवादयो धातव (१.३.१) से धातु संज्ञा होती है यह विशेष जानना चाहिए। सन् के परे या सन् से विभिन्न कार्य होते हैं। जैसे इगन्त धातु से परे झलादि सन् प्रत्यय को किद्वद्भाव होकर उससे चिकीर्षति जैसे स्थानो पर गुणनिषेध होता है। क्वचित् सन् को इडागम नहीं होता उससे जुघुक्षति, जिघृक्षति यहाँ गुण नहीं होता। अकर्मक मुच् धातु के इक् को विकल्प से गुण होता है सकारादि सन् प्रत्यय के परे होने पर उससे मोक्षते, मुमुक्षते वा वत्सः स्वयमेव यह सिद्ध होता है। तन् धातु की उपधा को झलादि सन् से दीर्घ होता है उससे तितासति, तितसति, तितनिषति ऐसे तीन पद सिद्ध होते हैं। गत्यर्थत गम् धातु से सन् प्रत्यय से गमि आदेश होगा परन्तु वह बोधनार्थ में नहीं होगा। अतः जिगमिषति ऐसा रूप सिद्ध होता है। किन्तु इ धातु के स्थान पर गमि आदेश होकर अधिजिगांसते यह रूप सिद्ध होता है। यहाँ प्रक्रिया सौकर्य के लिए पठितुम् इच्छति इस विग्रह में पठ् धातु से सन्नन्त में पिपठिषति इस रूप की निष्पत्ति कैसे होती है यह सब यहाँ स्पष्ट किया गया हैं।

पाठांत प्रश्न

1. सनाद्यन्ता धातव इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
2. पिपठिषति इस सन्नन्तधातुरूप की सिद्धि कैसे होती है यह व्याख्या कीजिए।

3. 'धातोः कर्मणः समानकर्तृकादिच्छायां वा' इस सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
4. अधिजिगांसते इस सन्नन्तधातुरूप की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
5. 'सनि ग्रहगुहोश्च' इस सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
6. 'रलो व्युपधाद्धलादेः संश्च' इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
7. 'किरश्च पञ्चभ्यः' इस सूत्र में स्थित उदाहरणों की व्याख्या कीजिए।
8. 'सनीवन्तर्धभ्रस्जदम्भुश्रिस्वृयूर्णभरज्ञपिसनाम्' इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
9. 'मुचोऽकर्मकस्य गुणो वा' इस सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
10. रुदविदमुषग्रहिस्वपिप्रच्छः संश्च इस सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

25.1

1. मूलधातु-पठ्, सन्नन्तधातु-पिपठिष।
2. सनाद्यन्ता धातवः।
3. इच्छार्थ में।
4. नहीं।
5. पठितुम् इच्छति।
6. जिघत्सति।
7. अज्झनगमां सनि।
8. गुणनिषेध।
9. सन्-क्यच्-काम्यच्-क्यङ्-क्यषोऽथाचारक्विब्-णिज्-यडौ तथा। यगायेयङ्-णि चेति द्वादशाऽमी सनादयः।।
10. बुभूषति।

25.2

1. सन् परे होने पर इड् धातु के स्थान पर गमि यह आदेश होता है यह अर्थ है।
2. इण्धातु के स्थान पर गमि यह आदेश होता है सन्प्रत्यय परे होने पर। किन्तु बोधनार्थ में नहीं।

टिप्पणियाँ

3. पिपृच्छति।
4. इडागम होता है।
5. किंवद्भाव।
6. जिघृक्षति।
7. जुघुक्षति।
8. अनित्य।

25.3

1. तितासति, तितंसति, तितनिषति ये रूपत्रय।
2. सुषुप्सति।
3. सन्-क्त्वा इन दोनों का कित्त्व।
4. रोदितुमिच्छति।
5. सनीवन्तर्धभस्जदम्भुश्रिस्वृयूर्णभरज्ञपिसनाम्।
6. जिगमिषति।
7. विधिसूत्र।

॥ पच्चीसवां पाठ समाप्त॥

26

परस्मैपदात्मनेपद प्रकरण

पूर्व में आप भ्वादिगण प्रकरणों में लकार परिचय प्राप्त कर चुके हैं। वहां धातु से विहित लकार के स्थान पर परस्मैपद और आत्मनेपद यह दो प्रकार का तिङ्प्रत्यय आदेश रूप में विधान किया गया है। किन धातुओं से परस्मैपद होता है अथवा किन धातुओं से आत्मनेपद होता है, इस पाठ में स्पष्ट किया जा रहा है। अनुदात्तङित आत्मनेपदम् यह सूत्र अनुदात्तेत् धातुओं और ङित्धातुओं से आत्मनेपद का विधान करता है। और कर्तृगामी क्रियाफल होने पर स्वरितेत् धातुओं से और ञित् धातुओं से आत्मनेपद का विधान होता है स्वरितञितः कर्तृऽभिप्राये क्रियाफले इस सूत्र के योग से। इस प्रकार शेष से अर्थात् जो धातु आत्मनेपद के लिए निमित्त नहीं है उस धातु से परस्मैपद होता है, शेषात् कर्तरि परस्मैपदम् इस शास्त्र से। अर्थभेद से और उपसर्गादि के योग से कहीं परस्मैपद अथवा कहीं आत्मनेपद होता है, अतः इस पाठ में विशेष स्थल प्रदर्शित करने के लिए परस्मैपद तथा आत्मनेपद विधान की आलोचना की जा रही है। वहाँ पहले आत्मनेपद विधान की आलोचना की जाती है।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप सक्षम होंगे :

- क्या आत्मनेपद है और क्या परस्मैपद यह जान पाने में;
- कहीं आत्मनेपद प्राप्त होने पर भी नहीं होता है यह जान पाने में;
  कहीं परस्मैपद प्राप्त होने पर भी नहीं होता है यह जान पाने में;
- कहीं अर्थभेद से परस्मैपदात्मनेपद होता है अथवा कहीं उस उपसर्ग बल से इस विषय में स्पष्ट ज्ञान जान पाने में।

टिप्पणियाँ

आत्मनेपदप्रकरण

आत्मनेपद प्रकरण होने से मूल सूत्र को पहले आलोचित करते हैं-

26.1 अनुदात्तङित आत्मनेपदम्॥ (१.३.१२)

सूत्रार्थ-उपदेश में जो अनुदात्तेत् और ङित् तदन्त धातु से ल के स्थान पर आत्मनेपद हो।

सूत्रव्याख्या- इस विधिसूत्र में दो पद है। अनुदात्तङितः (५/१), आत्मनेपदम् (१/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। अनुदात्तश्च ङ् च अनुदात्तङौ, तौ इतौ यस्य स अनुदात्तङित्, तस्मात् अनुदात्तङितः। भूवादयो धातवः इस सूत्र से प्रथमान्तस्य धातवः इसका पञ्चमी एकवचनान्त रूप से क विपरिणाम होने पर धातोः इसकी अनुवृत्ति होती है। इस प्रकार अनुदात्तेत् धातु से और ङित्-धातु से आत्मनेपद अर्थात् तङ्प्रत्याहारस्थ त-आताम्-झ आदि प्रत्यय होते हैं। अतः अनुदात्तङित आत्मनेपदम् इस सूत्र सम्बन्धी धातुएँ आत्मनेपदी धातुएँ कहलाती हैं।

उदाहरण - ङित्धातु-शीङ् स्वप्ने इस धातु में ङकार इत्संज्ञक है अतः प्रकृत सूत्र से आत्मनेपद होता है। तत्पश्चात् प्रथमपुरुष एकवचन में शेते यह रूप होता है।

बाधृ लोडने (प्रतिघाते) यह धातु अनुदात्तेत् है, अतः प्रकृत सूत्र से आत्मनेपद में प्रथमपुरुष एकवचन में बांधते यह रूप होता है, और एध वृद्धौ यह धातु भी अनुदात्तेत् है अतः प्रकृत सूत्र से आत्मनेपद में प्रथमपुरुष एकवचन में तप्रत्यय होने पर एधते यह रूप होता है। एतेषां प्रक्रिया भ्वादिप्रकणेषु द्रष्टव्या।

भाव अर्थ और कर्म अर्थ में आत्मनेपद होता है यह दिखाने के लिए यह सूत्र आरम्भ करते है।

26.2 भावकर्मणोः॥ (१.३.१३)

सूत्रार्थ - भाव और कर्म अर्थ की धातु से विहित लकार के स्थान पर आत्मनेपद प्रत्यय होता है।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र एक पदात्मक है। लः कर्मणि च भावे चाकर्मकेभ्यः यहाँ से लः यह पद और अनुदात्तङित आत्मनेपदम् यहाँ से आत्मनेपदम् यह पद अनुवर्तित होता है। भावकर्मणोः यह सप्तमी द्विवचनान्त है। भावः च कर्म च तयोः इतरेतरयोगद्वन्द्वे भावकर्मणी, तयोः भावकर्मणोः। भावार्थ में और कर्मार्थ में धातु से विहित लकार के स्थान पर आत्मनेपद प्रत्यय होता है यह सूत्रार्थ सिद्ध होता है। इस प्रकार ही भाववाच्य और कर्मवाच्य में आत्मनेपद होता है, परस्मैपद कभी भी नहीं होता है। वहाँ धातु आत्मनेपदी, परस्मैपदी अथवा उभयपदी हो भाववाच्य और कर्मवाच्य में आत्मनेपद ही होता है।

उदाहरण - भावार्थ का उदाहरण-बभुवे। कर्मार्थ का उदाहरण-अनुबभूवे। इनका विस्तारपूर्वक व्याख्यान भावकर्म प्रकरण में देखना चाहिए।

क्रियाविनिमय अर्थ में भी धातु से आत्मनेपद को प्रदर्शित करने के लिए यह सूत्र आरम्भ करते हैं।

26.3 कर्तरि कर्मव्यतिहारे॥ (१.३.१४)

सूत्रार्थ – क्रियाविनिमय द्योतित होने पर कर्ता में आत्मनेपद होता है।

सूत्रव्याख्या – इस विधिसूत्र में पद द्वय है। कर्तरि (७/१), कर्मव्यतिहारे (७/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। कर्तरि यह सप्तमी एकवचनान्त है। कर्मव्यतिहारे इसमें भी उसी प्रकार। कर्मण: व्यतिहार: इति षष्ठीतत्पुरुषे कर्मव्यतिहार:, तस्मिन् कर्मव्यतिहारे। अनुदात्तङित आत्मनेपदम् यहाँ से आत्मनेपदम् यह पद अनुवर्तित होता है। इस सूत्र में कर्मपदार्थ क्रिया है और व्यतिहार पदार्थ विनिमय है। तत्पश्चात् कर्मव्यतिहार इसका क्रियाविनिमय यह अर्थ है।और कर्तृपदार्थ कर्तृवाच्य है। इस प्रकार क्रिया का विनिमय द्योतित होने पर कर्तृवाच्य में आत्मनेपद होता है, यह सूत्रार्थ होता है।

यहाँ विशेष – कर्मव्यतिहार अर्थ प्राप्ति के लिए धातु से पूर्व प्राय: वि-अति ये दोनों उपसर्ग प्रयोग किए जाते है। कहीं उसके बिना अथवा अन्य उपसर्ग के योग से व्यतिहारार्थ प्रकट होता है। यथा- प्रियामुखं किंपुरुषश्चुचुम्बे (कालिदास:)।

उदाहरण – ब्राह्मण: क्षेत्रं व्यतिलुनीते (अन्य के योग्य छेदन क्रिया को अन्य करता है)।

सूत्रार्थसमन्वय – वि-अति पूर्वक लूञ् छेदने इस क्र्यादिगणीय उभयपदी धातु से प्रकृत सूत्र से आत्मनेपद विधान होता है, छेदनक्रिया का व्यतिहारार्थ होने से। इस ञित्त्व धातु से स्वरितञित: कर्तृऽभिप्राये क्रियाफले इस सूत्र से पक्ष में परगामी क्रियाफल में परस्मैपद की प्राप्ति होने पर उसको बांधकर केवल आत्मनेपद विधान करने के लिए यह सूत्र आरम्भ किया गया है।

पूर्वसूत्र से जो आत्मनेपद विहित है, उसका ही अपवाद प्रदर्शित करने के लिए यह योग आरम्भ करते है।

26.4 न गतिहिंसार्थेभ्य:॥ (१.३.१५)

सूत्रार्थ – गमनार्थक धातुओं और हिंसार्थक धातुओं से क्रिया का विनिमयार्थ द्योतित होने पर आत्मनेपद नहीं होता है।

सूत्रव्याख्या – इस निषेधसूत्र में पद द्वय है। न (अव्ययम्), गतिहिंसार्थेभ्य: (५/३) इति सूत्रगत पदों का विच्छेद है। गतिश्च हिंसा च गतिहिंसे, गतिहिंसे अर्थौ येषां ते गतिहिंसार्था: तेभ्य: गतिहिंसार्थेभ्य: यह द्वन्द्वगर्भ बहुव्रीहिसमास है। कर्तरि कर्मव्यतिहारे यहाँ से कर्मव्यतिहारे इस पद का और अनुदात्तङित आत्मनेपदम् यहाँ से आत्मनेपदम् इस पद की अनुवृत्ति होती है। गतिहिंसार्थेभ्य: कर्मव्यतिहारे आत्मनेपदं न यह वाक्य योजना है। तथा गमनार्थक धातुओं से और हिंसार्थक धातुओं से क्रिया का विनिमयार्थ द्योतित होने पर आत्मनेपद नहीं होता है यह सूत्रार्थ फलित होता है।

उदाहरण – व्यतिगच्छन्ति।

टिप्पणियाँ

सूत्रार्थ समन्वय - वि-अति उपसर्गपूर्वक गमनार्थक गम् (गम्लृ गतौ. भ्वा.परस्मै) धातु से कर्मव्यतिहारार्थ में कर्तरि कर्मव्यतिहारे इस सूत्र से आत्मनेपद प्राप्त है। किन्तु प्रकृतसूत्र से उसका निषेध होता है गमनार्थक धातु होने से। तत्पश्चात् शेषात् कर्तरि परस्मैपदम् इस सूत्र से परस्मैपद ही होता है।

विश् निवेशने इस तुदादिगणीय परस्मैपदी धातु से परस्मैपद प्राप्त है किन्तु नि इस उपसर्ग के योग से आत्मनेपद हो, अतः यह सूत्र आरम्भ करते हैं-

26.5 नेर्विशः॥ (१.३.१७)

सूत्रार्थ - नि उपसर्ग पूर्वक विश् धातु से परे आत्मनेपद होता है।

सूत्रव्याख्या - इस विधिसूत्र में पदद्वय है। नेः (५/१), विशः (५/१) इति सूत्रगत पदों का विच्छेद है। अनुदात्तङित आत्मनेपदम् यहाँ से आत्मनेपदम् इस पद की अनुवृत्ति होती है। उससे सूत्रार्थ सिद्ध होता है।

उदाहरण- निविशते।

सूत्रार्थसमन्वय - यहाँ नि उपसर्गपूर्वक विश् धातु से शेषात् कर्तरि परस्मैपदम् इस सूत्र से परस्मैपद प्राप्त होने पर प्रकृत सूत्र से आत्मनेपद विधान किया जाता है। क्योंकि यहाँ निपूर्वक विश् धातु है। नैषधीयकार श्रीहर्ष का भी प्रयोग है- निविशते यदि शूकशिखा पदे (४.११)।

डुक्रीञ् द्रव्यविनिमये इस धातु से ञित्त्व होने से पक्ष में परगामी क्रियाफल होने पर शेषात्कर्तरि परस्मैपदम् इस सूत्र से परस्मैपद प्राप्त होने पर यह अपवाद सूत्र आरम्भ करते है।

26.6 परिव्यवेभ्यः क्रियः॥ (१.३.१८)

सूत्रार्थ- परि, वि, अव इन उपसर्गों से परे जो क्री धातु है ,उससे आत्मनेपद होता है।

सूत्रव्याख्या - इस विधिसूत्र में पद द्वय है। परिव्यवेभ्यः (५/३), क्रियः (५/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। परिश्च विश्च अवश्च तेषामितरेतरयोगद्वन्द्वे परिव्यवाः, तेभ्यः परिव्यवेभ्यः। अनुदात्तङित आत्मनेपदम् यहाँ से आत्मनेपदम् इस पद की अनुवृत्ति रहोती है। परि, वि, अव इन उपसर्गों से पर जो क्री धातु है, उससे आत्मनेपद होता है,इस प्रकार पूर्वोक्त अर्थ सिद्ध होता है। स्वरितञितः कर्तृऽभिप्राये क्रियाफले इस सूत्र से कर्तृगामी क्रियाफल होने पर आत्मनेपद प्राप्त होता है। किन्तु प्रकृत सूत्र से अकर्तृगामी क्रियाफल होने पर भी आत्मनेपद हो, किन्तु परस्मैपद न हो अतः यह सूत्र आरम्भ किया गया है।

उदाहरण- परिक्रीणीते यहाँ परि उपसर्गपूर्वक क्री धातु है। विक्रीणीते यहाँ वि उपसर्गपूर्वक क्री धातु है। अवक्रीणीते यहाँ अव उपसर्गपूर्वक क्री धातु है।

टिप्पणियाँ

जि जये इस परस्मैपदी भ्वादिगणीय धातु से शेषात्कर्तरि परस्मैपदम् इस सूत्र से परस्मैपद प्राप्त होने पर विशिष्ट उपसर्ग के योग से आत्मनेपद विधान के लिए यह योग आरम्भ होता है-

26.7 विपराभ्यां जेः॥ (१.३.१९)

सूत्रार्थ - वि उपसर्ग पूर्वक और परा उपसर्गपूर्वक परे कू जि धातु से आत्मनेपद होता है।

सूत्रव्याख्या - इस विधिसूत्र में पद द्वय है। विपराभ्याम् (५/२), जेः (५/१) इति सूत्रगत पदों का विच्छेद है। विश्च पराश्च विपरौ, ताभ्यां विपराभ्याम्, यह इतरेतरयोगद्वन्द्व है। अनुदात्तङित आत्मनेपदम् यहाँ से आत्मनेपदम् इस पदस्य कू अनुवृत्ति होती है। और इस प्रकार प्रागुक्तार्थ सिद्ध होता है।

यहाँ विशेष - केवल जि धातु तो परस्मैपदी होती है किन्तु वि और परा उपसर्गद्वय के योग से जि धातु से आत्मनेपद होता है। इस प्रकार यह सूत्र शेषात्कर्तरि परस्मैपदम् इसका अपवाद भूत है।

उदाहरण - विजयते यहाँ वि उपसर्गपूर्वक जि धातु है। पराजयते यहाँ परा पूर्वक जिधातु है।

ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वादि.परस्मै.)धातु से शेषात्कर्तरि परस्मैपदम् इस सूत्र से परस्मैपद प्राप्त होने पर विशिष्ट उपसर्ग योग से आत्मनेपद विधान के लिए यह योग आरम्भ करते हैं-

26.8 समवप्रविभ्यः स्थः॥ (१.३.२२)

सूत्रार्थ - सम्पूर्वक, अवपूर्वक, प्रपूर्वक और विपूर्वक स्था धातु से आत्मनेपद होता है।

सूत्रव्याख्या- इस विधिसूत्र में पद द्वय है। समवप्रविभ्यः (५/३), स्थः (५/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। सम् च अवश्च प्रश्च विश्च समवप्रविभ्यः तेभ्यः समवप्रविभ्यः, यह इतरेतरयोगद्वन्द्व है। अनुदात्तङित आत्मनेपदम् यहाँ से आत्मनेपदम् इस पद की अनुवृत्ति होती है। इस प्रकार पूर्वोक्तार्थ सिद्ध होता है।

उदाहरण- सम्-स्था-सन्तिष्ठते। अव-स्था-अवतिष्ठते। प्र-स्था-प्रतिष्ठते। वि-स्था-वितिष्ठते।

पाठगत प्रश्न 26.1

1. कर्मव्यतिहारः क्या है?
2. सम्पूर्वक स्था धातु से आत्मनेपद होता है। क्या यदि होता है तो क्या रूप है?
3. विपराभ्यां जेः इसका उदाहरण क्या है?
4. आत्मनेपद प्रत्यय विधायक सूत्र लिखिए।

टिप्पणियाँ

5. व्यतिगच्छन्ति यहाँ आत्मनेपद किससे नहीं है?

6. नेर्विशः इसका उदाहरण क्या है?

7. विक्रीणीते विक्रीणाति इन दोनों में कौन सा सही है?

8. व्यतिलुनीते इसका क्या अर्थ है?

ज्ञा अवबोधने (क्र्या.परस्मै) धातु से शेषात्कर्तरि परस्मैपदम् इस सूत्र से परस्मैपद प्राप्त होने पर आत्मनेपद विधान के लिए यह सूत्र आरम्भ करते है -

26.9 अपह्नवे ज्ञः॥ (१.३.४४)

सूत्रार्थ - अपलाप अर्थ में ज्ञा धातु से परे आत्मनेपद होता है।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र पद द्वयात्मक है। अपह्नवे (७/१), ज्ञः (५/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। अपह्नवे इति सप्तमी एकवचनान्त है। ज्ञः यह पञ्चमी एकवचनान्त है। अनुदात्तङित आत्मनेपदम् यहाँ से आत्मनेपदम् इस पद की अनुवृत्ति होती है। अपह्नव अपलाप है। तथा अपलापार्थ में गम्यमान होने पर ज्ञा धातु से आत्मनेपद ही होता है, यह सिद्ध होता है।

यहाँ विशेष - उपसर्ग रहित अवस्था में ज्ञा धातु से अपलाप अर्थ नहीं है।यह अर्थ तो अप इस उपसर्ग के योग से प्राप्त होता है। अतः अप उपसर्गपूर्वक ज्ञा धातु से इस अर्थ में क्रियाफल के कर्तृगामी अथवा परगामी होने पर आत्मनेपद होता है।

उदाहरण - शतम् अपजानीते। इस वाक्य का शतम् अपलपति यह अर्थ है।यहाँ अप उपसर्गपूर्वक ज्ञा धातु अपलाप अर्थ में है।

चर गतौ भक्षणे च (भ्वा.परस्मै) धातु से शेषात्कर्तरि परस्मैपदम् इस सूत्र से परस्मैपद प्राप्त होने पर आत्मनेपद के लिए यह योग आरम्भ करते हैं-

26.10 समस्तृतीयायुक्तात्॥ (१.३.५४)

सूत्रार्थ - तृतीयान्त पद से युक्त सम् से परे चर् धातु से आत्मनेपद होता है।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र पद द्वयात्मक है। समः (५/१), तृतीयायुक्तात् (५/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। तृतीयया युक्तः तृतीयायुक्त तस्मात् तृतीयायुक्तात् यह तृतीयातत्पुरुष समास है। अनुदात्तङित आत्मनेपदम् यहाँ से आत्मनेपदम् इस पद की अनुवृत्ति होती है। उदश्चरः सकर्मकात् यहाँ से चर इसकी अनुवृत्ति होती है। इस प्रकार सूत्रार्थ सिद्ध होता है।

उदाहरण - रथेन सञ्चरते।

सूत्रार्थसमन्वय - रथेन इस तृतीयान्त पद से युक्त धातु है -सम् उपसर्गपूर्वक चर्। अतः प्रकृत सूत्र से चर् धातु से आत्मनेपद विधान होता है। उससे सञ्चरते यह रूप सिद्ध होता है। और वैसा

ही कालिदास का प्रयोग है - क्वचित् पथा सञ्चरते सुराणाम् (रघु. १३.१९)। जब तृतीयान्त पद का अभाव हो तब तो आत्मनेपद नहीं होता है, जैसे - उभौ लोकौ सञ्चरसि इमं चामुं च देवल। (काशिका)।

दाण् दाने (भ्वा.परस्मै) धातु से शेषात्कर्तरि परस्मैपदम् इस सूत्र से परस्मैपद प्राप्त होने पर यह अपवादसूत्र आरम्भ किया गया है।

26.11 दाणश्च सा चेच्चतुर्थ्यर्थे॥ (१.३.५५)

सूत्रार्थ - तृतीयान्त पद से युक्त सम्पूर्वक दाण् धातु से आत्मनेपद होता है यदि तृतीया चतुर्थी के अर्थ में प्रयुक्त होती है।

सूत्रव्याख्या - इस विधिसूत्र में पञ्च पद हैं। दाणः (५/१), च (अव्ययम्) सा (१/१) चेत् (अव्ययम्) चतुर्थ्यर्थे (७/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। चतुर्थ्याः अर्थः चतुर्थ्यर्थः, तस्मिन् चतुर्थ्यर्थे यह षष्ठी तत्पुरुष है। अनुदात्तङित आत्मनेपदम् यहाँ से आत्मनेपदम् इस पद की अनुवृत्ति होती है। समस्ततृतीयायुक्तात् यह सूत्र अनुवर्तित होता है। इस प्रकार तृतीयान्त पद से युक्त सम्पूर्वक दाण् धातु से आत्मनेपद होता है , यदि तृतीया चतुर्थी के अर्थ में प्रयुक्त हो। चतुर्थी के अर्थ में तृतीया तो अशिष्टव्यवहारे दाणः प्रयोगे चतुर्थ्यर्थे तृतीया वाच्य इस वार्तिक से विधान की जाती है यह कारक प्रकरण में ज्ञात होगा।

यहाँ विशेष - समस्ततृतीयायुक्तात् (१.३.५४), दाणश्च सा चेच्चतुर्थ्यर्थे (१.३.५५) ये दोनों सूत्र किसी दूसरे उपसर्गों से व्यवहित होने पर भी प्रवर्तित होते हैं। यथा - धर्मम् उदाचरते यहाँ उत् -चर् इन दोनों के मध्य में आङ् यह उपसर्ग है फिर भी प्रकृत सूत्र से आत्मनेपद होता है।

उदाहरण - दास्या संयच्छते कामुकः।

सूत्रार्थसमन्वय - दास्या संयच्छते कामुकः यहाँ दासी के साथ कामुक सम्पर्क ही अशिष्टव्यवहार शब्द से कहा जाता है। दासी को उद्देश्य करके ही तादृश सम्पर्क किया जाता है। अतः दासी यहाँ सम्प्रदान है। अतः सम्प्रदाने चतुर्थी इस सूत्र से चतुर्थी प्राप्त है किन्तु अशिष्टव्यवहार में दाणः प्रयोगे चतुर्थ्यर्थे तृतीया वाच्या इस से चतुर्थी को बाँधकर तृतीया विधान की जाती है। इस प्रकार प्रकृत सूत्र का अवकाश प्राप्त हुआ। अतः आत्मनेपद प्रयोग है।

सन्नन्त से आत्मनेपद विधान के लिए यह सूत्र आरम्भ करते है-

26.12 पूर्ववत्सनः॥ (१.३.६२)

सूत्रार्थ - सन् पूर्वक जो धातु है, स्तेन तुल्यं सन्नन्तादप्यात्मनेपदं स्यात्।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र पद द्वयात्मक है। पूर्ववत् (अव्ययम्), सनः (५/१)यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। पूर्वेण इव पूर्ववत्। तेन तुल्यं क्रिया चेद्वतिः इस पूर्वशब्द से वति प्रत्यय है। अनुदात्तङित

टिप्पणियाँ

आत्मनेपदम् यहाँ से आत्मनेपदम् इस पद की अनुवृत्ति होती है। सन्प्रत्यय से पूर्व जो आत्मनेपदी धातु है उससे तुल्य सन्नन्त धातु से भी आत्मनेपद होता है।

यहां विशेष – यदि किसी उपसर्ग के योग से कोई धातु आत्मनेपदी होती है तब उस उपसर्ग के होने पर सन्नन्त से पर भी उस धातु से आत्मनेपद होता है यथा- निविविक्षते। यहाँ नेर्विशः इस सूत्र से नि उपसर्गपूर्वक विश् धातु से आत्मनेपद विधान होता है। इस प्रकार सन्नन्त से भी विश् धातु से आत्मनेपद होता है।

उदाहरण – शिशयिषते।

सूत्रार्थसमन्वय – शीङ् स्वप्ने यह ङित्त्व धातु आत्मनेपदी है। अतः इस धातु से सन्प्रत्यय विहित होने पर शिशयिषते यह रूप सिद्ध होता है। इस प्रकार ही एध वृद्धौ यह धातु अनुदात्तेत् है इस कारण से आत्मनेपदी है।अतः सन्प्रत्यय से पर भी अर्थात् सन्नन्त एध् धातु से भी तो आत्मनेपद होता है। उससे एदिधिषते यह रूप सिद्ध होता है। डुकृञ् करणे यह धातु ञित्त्व होने से आत्मनेपदी होती है, कर्तृगामी क्रियाफल होने पर। अतः सन्नन्त से पर भी आत्मनेपद होता है। अतः चिकीर्षते यह रूप सिद्ध होता है। परगामी क्रियाफल में तो चिकीर्षति यह रूप सिद्ध होता है। जब तो धातु आत्मनेपद के निमित्तहीन है तब तो सन्नन्त से पर भी परस्मैपद ही होता है, न कि आत्मनेपद, यथा- भू धातु से बुभूषति यह रूप होता है , गम् धातु से जिगमिषति यह रूप होता है।

डुकृञ् करणे इस तनादिगणीय धातु से कर्तृगामी क्रियाफल होने पर आत्मनेपद होता है। परगामी क्रियाफल में तो परस्मैपद होता है , यह आप जानते ही हैं। वहाँ परगामी क्रियाफल होने पर भी आत्मनेपद विधान के लिए यह सूत्र आरंभ करते हैं –

26.13 गन्धनाऽवक्षेपणसेवनसाहसिक्यप्रतियत्नप्रकथनोपयोगेषु कृञः (१.३.३२)

सूत्रार्थ – गन्धन, अवक्षेपण, सेवन, साहसिक्य, प्रतियत्न, प्रकथन, उपयोग इन अर्थों में कृ धातु से आत्मनेपद होता है।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र पद द्वयात्मक है। गन्धनाऽवक्षेपणसेवनसाहसिक्यप्रतियत्नप्रकथनोपयोगेषु (७.३), कृञः (५/१) इति सूत्रगत पदों का विच्छेद है। गन्धनञ्च अवक्षेपणञ्च सेवनञ्च साहसिक्यञ्च प्रतियत्नञ्च प्रकथनञ्च उपयोगश्च तेषामितरेतरयोगद्वन्द्वे गन्धनाऽवक्षेपण सेवनसाहसिक्य प्रतियत्नप्रकथनोपयोगाः तेषु गन्धनाऽवक्षेपणसेवनसाहसिक्यप्रतियत्नप्रकथनोपयोगेषु। अनुदात्तङित आत्मनेपदम् यहाँ से आत्मनेपदम् इस पद की अनुवृत्ति होती है। गन्धन सूचन है, गन्धनम् अपकारप्रयुक्तं हिंसात्मकं कर्म ऐसा काशिका में है। अवक्षेपण भर्त्सन है। बल से प्रवृत्त का कर्म साहसिक्य कहलाता है। प्रतियत्न उत्पादन है। प्रकृष्ट कथन प्रकथन है। इस प्रकार गन्धन, अवक्षेपण, सेवन, साहसिक्य, प्रतियत्न, प्रकथन और उपयोग इन अर्थों में कृ धातु से आत्मनेपद होता है, यह सूत्रार्थ सिद्ध होता है।

उदाहरण

1. **गन्धनम्** – स तमुत्कुरुते। वह उसको सूचना करता है यह वाक्यार्थ है।
2. **अवक्षेपणम्** – श्येनो वर्तिकाम् उदाकुरुते। बाज बटेर को फटकारता है यह वाक्यार्थ है। इस प्रकार ही – दुर्वृत्तान् अवकुरुते।
3. **सेवनम्**– हरिम् उपकुरुते भक्तः। भक्त हरि की सेवा करता है ,यह वाक्यार्थ है।
4. **साहसिक्यम्** – परदारान् प्रकुरुते कामुकः। कामुक पर स्त्रियों पर बल से प्रवर्तित होता है यह वाक्यार्थ है।
5. **प्रतियत्नः** – एधोदकस्य उपस्कुरुते। गुण को धारण करता है, यह अर्थ है।
6. **प्रकथनम्** – गाथाः प्रकुरुते गायकः। प्रकृष्ट रूप से कहता है, यह अर्थ है।
7. **उपयोगः** – शतं प्रकुरुते वणिक्। सौ को व्यय करता है, यह अर्थ है

इनसे भिन्न अर्थ में तो आत्मनेपद नहीं होता है , यथा कटं करोति। किन्तु यहाँ कर्तृऽभिप्राय क्रियाफल होने पर आत्मनेपद होने योग्य है। इस प्रकार आत्मनेपद प्रक्रिया समाप्त हुई।

पाठगत प्रश्न 26.2

1. शतम् अपजानीते इस वाक्य का क्या अर्थ है?
2. अपजानीते यहां अप उपसर्गपूर्वक ज्ञा धातु किस अर्थ में है?
3. समस्त तृतीयायुक्तात् इसका क्या उदाहरण है?
4. गन्धनादिसूत्रं को पूरा कीजिए।
5. उत्कुरुते इस पद का क्या अर्थ है?
6. पूर्ववत्सनः इसका क्या अर्थ है?
7. प्रकुरुते इसका क्या अर्थ है?
8. दास्या संयच्छते कामुकः यहां आत्मनेपद किससे होता है?

परस्मैपदप्रक्रिया

धातु से विहित लकार के स्थान पर परस्मैपद और आत्मनेपद द्विविध तिङ्प्रत्यय आदेश रूप से विधान किए जाते हैं। यह आप पूर्व में जान चुके हैं। वहां आत्मनेपद के विषय में भी जान चुके हैं। अब परस्मैपद के विषय में कहा जा रहा है। परस्मैपद विधान विषयक दो सूत्र मुख्य है। स्वरितञितः कर्तृऽभिप्राये क्रियाफले यह एक है,दूसरा शेषात् कर्तरि परस्मैपदम् यह है। प्रथम से तो परगामी क्रियाफल होने पर परस्मैपद विधान किया जाता है, यह आत्मनेपद प्रकरण के आरम्भ में कहा

टिप्पणियाँ

ही गया है। आत्मेपद विधान के लिए जितने निमित्त हैं, उन निमित्तों से हीन होने पर धातु से परस्मैपद का विधान होता है। यथा भवति, पठति, वदति इत्यादि। किन्तु यह साधारण नियम है। अब विशेष नियमों को कहा जाता है। वहाँ उभयपद धातुओं से कर्तृऽभिप्राय क्रियाफल होने पर प्राप्त आत्मनेपद का बाध किया जाता है अथवा आत्मनेपदी धातुओं से प्राप्त आत्मनेपद का साक्षात् बाध विधान होने जाता है। उन सूत्रों की यहां व्याख्या करते हैं।

कृ धातु ञित्त्व होने से परगामी क्रियाफल होने पर परस्मैपद सिद्ध होती है,और कर्तृगामिनि क्रियाफले च आत्मनेपदमपि सिद्धमस्ति। किन्तु कर्तृगामी क्रियाफल होने पर भी विशिष्ट उपसर्ग के योग से परस्मैपद मात्र विधान के लिए यह विधिसूत्र आरंभ करते हैं-

26.14 अनुपराभ्यां कृञः॥ (१.३.७९)

सूत्रार्थ - अनु इस उपसर्गपूर्वक और परा इस उपसर्गपूर्वक से कृ धातु से परस्मैपद होता है।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र पद द्वयात्मक है। अनुपराभ्याम् (५/२) कृञः (५/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। अनुश्च पराश्च तयोरितरेतरयोगद्वन्द्वे अनुपरौ ताभ्याम् अनुपराभ्याम्। शेषात् कर्तरि परस्मैपदम् यहाँ से कर्तरि परस्मैपदम् इन दोनों की अनुवृत्ति होती है। अनु उपसर्गपूर्वक और परा उपसर्गपूर्वक कृ धातु से परस्मैपद होता है,यह सूत्रार्थ है। कृ धातु ञित् है अतः परगामी क्रियाफल होने पर परस्मैपद ही प्राप्त है। उस कारण से कर्तृगामी क्रियाफल होने पर परस्मैपद विधान के लिए यह सूत्र है। किञ्च गन्धनम्, अवक्षेपणं, सेवनं, साहसिक्यं, प्रतियत्नः, प्रकथनम्, उपयोगः इन अर्थों में परगामी क्रियाफल होने पर कृ धातु से जो आत्मनेपद प्राप्त है उसका भी यह सूत्र अपवाद है।

यहाँ विशेष - इस सूत्र में शेषात् कर्तरि परस्मैपदम् यहाँ से कर्तरि इस पदस्य की अनुवृत्ति होती है। अतः कर्तृवाच्य में ही यह प्रयोग है। कर्मवाच्य में तो भावकर्मणोः इससे आत्मनेपद होता है। जैसे-अनुक्रियते साध्वी पद्धतिः। पराक्रियते समुपस्थिता बाधा।

उदाहरण - अनुकरोति, पराकरोति। यहाँ अनु और परा उपसर्गपूर्वक कृ धातु है।

क्षिप प्रेरणे इस स्वरितेत् धातु से कर्तृगामी क्रियाफल होने पर आत्मनेपद प्राप्त होने पर उसको बांध कर परस्मैपद विधान के लिए यह सूत्र आरम्भ करते हैं-

26.15 अभिप्रत्यतिभ्यः क्षिपः॥ (१.३.८०)

सूत्रार्थ - अभि-उपसर्गपूर्वक, प्रति-उपसर्गपूर्वक और अति-उपसर्गपूर्वक क्षिप् धातु से परस्मैपद होता है।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र पद द्वयात्मक है। अभिप्रत्यतिभ्यः (५/३) क्षिपः (५/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। अभिश्च प्रतिश्च अतिश्च तेषामितरेतरयोगद्वन्द्वे अभिप्रत्यतयः, तेभ्यः

अभिप्रत्यतिभ्यः। शेषात् कर्तरि परस्मैपदम् यहाँ से कर्तरि, परस्मैपदम् इन दोनों की अनुवृत्ति होती है। इस प्रकार पूर्वोक्ता अर्थ सिद्ध होता है।

यहाँ विशेष -यह तुदादिगणीय धातु स्वरितेत् है। अतः कर्तृगामी क्रियाफल होने पर आत्मनेपद प्राप्त है। किन्तु उसको बांधने के लिए यह योग आरम्भ किया जाता है। अभि-प्रति-अति इन उपसर्ग स्थलों में केवल परस्मैपद हो अन्यत्र तो उभयपदी यह धातु हो,यह नियमित करने के लिए यह सूत्र आरम्भ करते है।

उदाहरण- अभिक्षिपति। प्रक्षिपति। अतिक्षिपति।

वह्-धातु से उभयपदी होने से कर्तृगामी क्रियाफल होने पर आत्मनेपद प्राप्त होने पर विशिष्ट उपसर्ग के योग से वहाँ भी परस्मैपद विधान के लिए यह योग आरम्भ करते है -

26.16 प्राद्वहः॥ (१.३.८१)।

सूत्रार्थ - प्र उपसर्गपूर्वक वह् धातु से परस्मैपद होता है।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र पद द्वयात्मक है। प्रात् वहः यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। प्रात् वहः ये दोनों भी पञ्चमी एकवचनान्त है। शेषात् कर्तरि परस्मैपदम् यहाँ से कर्तरि परस्मैपदम् इन दोनों पदों की अनुवृत्ति होती है। उससे पूर्व में कहा गया अर्थ सिद्ध होता है।

उदाहरण - प्रवहति।

मृष् धातु से कर्तृऽभिप्राय क्रियाफल होने पर परस्मैपद विधान के लिए यह सूत्र आरंभ करते है।

26.17 परेर्मृषः॥ (१.३.८१)

सूत्रार्थ - परि उपसर्गपूर्वक मृष् धातु से परस्मैपद होता है।

सूत्रव्याख्या -यह विधिसूत्र पद द्वयात्मक है। परेः मृषः यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। परेः मृषः यह दोनों पञ्चमी एकवचनान्त है। शेषात् कर्तरि परस्मैपदम् यहाँ से कर्तरि परस्मैपदम् इन दोनों की अनुवृत्ति होती है। उससे पहले कहा गया अर्थ सिद्ध होता है।

उदाहरण - परिमृष्यति।

सूत्रार्थसमन्वय - मृष तितिक्षायाम् यह दिवादिगणीयधातु स्वरितेत् है। अतः स्वरितञितः कर्तृऽभिप्राये क्रियाफले इस सूत्र से कर्तृऽभिप्राय क्रियाफल होने पर आत्मनेपद प्राप्त हुआ। उस को बांधकर परेर्मृषः इस सूत्र से परस्मैपद होने पर परिमृष्यति यह रूप सिद्ध होता है।

भ्वादिगणीय मृषु सहने इस धातु से परि उपसर्ग पूर्वक होने से प्रकृत सूत्र से परस्मैपद होने पर परिमर्षति यह रूप होता है।

रम् धातु से परस्मैपद विधान करने के लिए यह विधिसूत्र आरंभ करते हैं।

टिप्पणियाँ

26.18 व्याङ्परिभ्यो रमः॥ (१.३.८३)

सूत्रार्थ – वि उपसर्गपूर्वक, आङ् उपसर्गपूर्वक और परि उपसर्गपूर्वक रम् धातु से परस्मैपद विधान किया जाता है।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र पद द्वयात्मक है। व्याङ्परिभ्यः (५/३), रमः (५/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। विश्च आङ् च परिश्च तेषामितरेतरयोगद्वन्द्वे व्याङ्परयः तेभ्यः व्याङ्परिभ्यः। शेषात् कर्तरि परस्मैपदम् यहाँ से कर्तरि परस्मैपदम् इन दोनों की अनुवृत्ति होती है। उससे पूर्व में कहा गया अर्थ सिद्ध होता है।

उदाहरण– विरमति। आरमति। परिरमति।

उप उपसर्गपूर्वक रम् धातु से भी परस्मैपद विधान के लिए यह सूत्र आरंभ करते हैं–

26.19 विभाषाकर्मकात्॥ (१.३.८५)

सूत्रार्थ – उप उपसर्गपूर्वक रम् धातु से विकल्प से परस्मैपद विधान किया जाता है, अकर्मक स्थल पर।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र पद द्वयात्मक है। विभाषा (अव्ययम्) अकर्मकात् (५/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। उपाच्च यहाँ से उपात् इसकी अनुवृत्ति होती है। व्याङ्परिभ्यो रमः यह रमः इसकी और शेषात् कर्तरि परस्मैपदम् यहाँ से परस्मैपदम् इसकी अनुवृत्ति होती है। उससे पूर्व में कहा गया अर्थ सिद्ध होता है।

उदाहरण – उपरमति, उपरमते।

सूत्रार्थ समन्वय – उपरमति यहाँ निवृत्त होता है यह अर्थ है , इस कारण से उप उपसर्गपूर्वक रम् धातु अकर्मक अवस्था में है। अतः प्रकृत सूत्र से विकल्प से परस्मैपद होता है, पक्ष में तो उपरमते आत्मनेपद होता है।

णिचश्च इससे परस्मैपद और आत्मनेपद प्राप्ति होने पर केवल परस्मैपद विधान के लिए यह सूत्र आरम्भ होता है।

26.20 बुधयुधनशजनेङ्प्रुद्रुस्त्रुभ्यो णेः॥ (१.३.८४)

सूत्रार्थ – बुध्, युध्, नश्, जन्, इङ्, प्रु, द्रु, स्त्रु इन धातुओं से परस्मैपद होता है।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र पद द्वयात्मक है। बुधयुधनशजनेङ्प्रुद्रुस्त्रुभ्यः (५/३), णेः (५/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। बुधश्च, युधश्च, नशश्च, जनश्च, इङ् च, प्रुश्च, द्रुश्च, स्रश्च तेषामितरेतरयोगद्वन्द्वे बुधयुधनशजनेङ्प्रुद्रुस्रुवः तेभ्यः बुधयुधनशजनेङ्प्रुद्रुस्रुभ्यः। शेषात् कर्तरि परस्मैपदम् यहाँ से कर्तरि परस्मैपदम् इन दोनों की अनुवृत्ति होती है। णिः इस से णिजन्त का ग्रहण

होता है। इस प्रकार सूत्रार्थ – बुध्, युध्, नश्, जन्, इङ्, प्रु, द्रु, स्रु इन ण्यन्त धातुओं से परस्मैपद होता है।

यहाँ विशेष – पूर्व उक्त धातुओं से यदि णिच्प्रत्यय होता है तब णिचश्च इस सूत्र से परगामी क्रियाफल विवक्षित होने पर परस्मैपद होता है, कर्तृगामी क्रियाफल विवक्षित होने पर आत्मनेपद होता है, इस अवस्था में कर्तृगामी क्रियाफल होने पर भी परस्मैपद हो इस अर्थ के लिए यह सूत्र आरम्भ करते है। अतः यह योग णिचश्च इस सूत्र का अपवाद है।

उदाहरण– बोधयति पद्मम्। योधयति काष्ठानि। नाशयति दुःखम्। जनयति सुखम्। अध्यापयति वेदम्। प्रावयति प्रापयति यह अर्थ है। द्रावयति विलापयति यह अर्थ है। स्रावयति स्यन्दयति यह अर्थ है।

णिचश्च इससे उभय पदों की प्राप्ति होने पर केवल परस्मैपद विधान के लिए यह सूत्र आरम्भ करते हैं –

26.21 निगरणचलनार्थेभ्यश्च॥ (१.३.८७)

सूत्रार्थ – भक्षणार्थक और चलनार्थक ण्यन्त धातुओं से कर्तृगामी क्रियाफल होने पर भी परस्मैपद होता है।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र पद द्वयात्मक है। निगरणचलनार्थेभ्यः (५/३) सूत्रगत पदच्छेद है। निगरणं च चलनं च निगरणचलने इति इतरेतरयोगद्वन्द्वः, तौ अर्थौ येषां ते निगरणचलनार्थाः तेभ्यः निगरणचलनार्थेभ्यः। शेषात् कर्तरि परस्मैपदम् यहाँ से कर्तरि और परस्मैपदम् इसकी अनुवृत्ति होती है। बुधयुधनशजनेङ्प्रुद्रुस्रुभ्यो णेः यहाँ से णेः इसकी अनुवृति होती है। भक्षणार्थक और चलनार्थक ण्यन्त धातुओं से कर्तृगामी क्रियाफल होने पर परस्मैपद होता है।यह पूर्व में कहा गया अर्थ सिद्ध होता है।

उदाहरण – निगारयति। आशयति। आदयति। खादयति। भोजयति। चलयति। कम्पयति।

कर्तृगामी क्रियाफल में आत्मनेपद प्राप्ति होने पर वहाँ परस्मैपद विधान के लिए और परगामी क्रियाफल में परस्मैपद विधान के लिए ,इस प्रकार दोनों स्थान पर परस्मैपद विधान के लिए यह सूत्र आरम्भ करते हैं –

26.22 अणावकर्मकाच्चित्तवत्कर्तृकात्॥ (१.३.८८)

सूत्रार्थ – अण्यन्तावस्था में अकर्मक च्चित्तवत्कर्तृकात् ण्यन्तात् परस्मैपद हो।

सूत्रव्याख्या – इस विधिसूत्र में तीन पद हैं। अणौ (७/१), अकर्मकात् (५/१), चित्तवत्कर्तृकात् (५/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। न णिः अणिः तस्मिन् अणौ। न विद्यते कर्म यस्य स अकर्मकः, तस्मात् अकर्मकात्, बहुव्रीहि समास है। चित्तम् अस्य अस्तीति चित्तवान्। चित्तवान् कर्ता यस्य स चित्तवत्कर्तृकः तस्मात् चित्तवत्कर्तृकात्, बहुव्रीहि समास है। बुधयुधनशजनेङ्प्रुद्रुस्रभ्यो णेः यहाँ से णेः इसकी और शेषात् कर्तरि परस्मैपदम् यहाँ से परस्मैपदम् इसकी अनुवृत्ति होती है। इस प्रकार

टिप्पणियाँ

अण्यन्तावस्था में जो धातु अकर्मक और चित्तवत् कर्तृक होती है उस धातु से ण्यन्तावस्था में कर्तृगामी क्रियाफल होने पर भी परस्मैपद होता है यह सूत्र का सम्पूर्ण अर्थ है।

विशेष- यह सूत्र णिचश्च इस योग का अपवाद भूत है।

उदाहरण- शेते कृष्णः, तं गोपी शाययति।

सूत्रार्थ समन्वय - शीङ् स्वप्ने यह धातु अण्यन्त अवस्था में अकर्मक ही है। किन्तु अण्यन्तावस्था में कर्ता कृष्णः चित्तवान् है। अतः शी धातु भी चित्तवत्कर्तृक है। तत्पश्चात् शी धातु से णिच्, वृद्धि तथा आयादेश होने पर शायी इस णिजन्त धातु से णिचश्च इस सूत्र से कर्तृगामी क्रियाफल में आत्मनेपद प्राप्ति होने पर अणावकर्मकाच्चित्तवत्कर्तृकात् इस प्रकृत सूत्र से केवल परस्मैपद विधान होता है। उससे शाययति यह रूप होता है।

अब कर्तृगामी क्रियाफल में भी परस्मैपद प्राप्त होने पर उसको बांधने के लिए यह सूत्र आरम्भ करते हैं -

26.23 न पादम्याङ्यमाङ्यसपरिमुहरुचिनृतिवदवसः॥ (१.३.८९)

सूत्रार्थ - पा, दम्, आङ् उपसर्गपूर्वक यम् और यस्, परि उपसर्गपूर्वक मुह्, रुच्, नृत्, वद्, वस् इन ण्यन्त धातुओं परस्मैपद नहीं होता है।

सूत्रव्याख्या - इस निषेधसूत्र में दो पद है। न पादम्याङ्यमाङ्यसपरिमुहरुचिनृतिवदवसः (५/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। आङ्-पूर्वो यम आङ्यमः, आङ्-पूर्वो यस आङ्यसः, परिपूर्वो मुहः परिमुहः। पाश्च दमिश्च आङ्यमश्च आङ्यसश्च परिमुहश्च रुचिश्च नृतिश्च वदश्च वस् च तेषां समाहारद्वन्द्वे पादम्याङ्यमाङ्यसपरिमुहरुचिनृतिवदवस्, तस्मात् पादम्याङ्यमाङ्यसपरिमुह रुचिनृतिवदवसः। बुधयुधनशजनेङ्प्रुद्रुस्रुभ्यो णेः यहाँ से णेः इसकी, और शेषात् कर्तरि परस्मैपदम् यहाँ से परस्मैपदम् इसकी अनुवृत्ति होती है। इस प्रकार पा, दम्, आङ्पूर्वक यम्, आङ्पूर्वक यस्, परि पूर्वक यस्, परि पूर्वक मुह्, रुच्, नृत्, वद्, वस् इन ण्यन्त धातुओं से परस्मैपद नहीं होता है, यह सूत्रार्थ है।

पा पाने इस भ्वादिगणीय धातु का निगरण अर्थ है। अतः निगरणचलनार्थेभ्यश्च इस सूत्र से कर्तृगामी क्रियाफल में परस्मैपद प्राप्ति होने पर उसका निषेध करने के लिए यह सूत्र है।

यहाँ विशेष - णिचश्च इस के योग से कर्तृगामी क्रियाफल में आत्मनेपद सिद्ध होने पर उस-उस विशेष अवस्था में बुधयुधनशजनेङ्प्रुद्रुस्रभ्यो णेः, अणावकर्मकाच्चित्तवत्कर्तृकात् , निगरणचलनार्थेभ्यश्च ये तीनों सूत्र कर्तृगामी क्रियाफल होने पर भी परस्मैपद का विधान करते हैं,इस प्रकार ये सूत्र णिचश्च इस सूत्र के अपवाद भूत है। अब प्रकृत सूत्र से अणावकर्मकाच्चित्तवत्कर्तृकात् , निगरणचलनार्थेभ्यश्च इन दोनों सूत्रों से कर्तृगामी क्रियाफल में प्राप्त परस्मैपद का निषेध होता है। अब कहा जाता है- क्या वह निषेध परगामी क्रियाफल में प्राप्त परस्मैपद करने पर भी होता है। तब कहा जाता है - वहाँ यह निषेध नहीं है। केवल कर्तृगामी क्रियाफल होने पर प्राप्त परस्मैपद का ही निषेध है।

स्वतः कर्तृगामी क्रियाफल में आत्मनेपद, और परगामी में परस्मैपद होता है, इसमें कोई सन्देह नहीं है। इसलिए पाययति वत्सान् पयः इत्यादि प्रयोग उचित होता है।

उदाहरण – पाययते। दमयते। आयामयते। आयासयते। परिमोहयते। रोचयते। नर्तयते। वादयते। वासयते।

सूत्रार्थ समन्वय –

1. **पाययते** – यहाँ भ्वादिगणीय पा पाने यह धातु है। इससे णिचि शाच्छासाह्वाव्यावेपां युक् इस सूत्र से युगागम और अनुबन्धलोप होने पर पायि यह होता है। तत्पश्चात् निगरणार्थक होने से कर्तृगामी क्रियाफल में णिचश्च इस सूत्र से प्राप्त आत्मनेपद को निगरणचलनार्थेभ्यश्च इस सूत्र से बांधकर केवल परस्मैपद प्राप्त होने पर प्रकृत सूत्र से निषेध होने पर पाययते यह रूप होता है।

2. **दमयते** – दमु उपशमे इस दिवादिगणीय धातु से णिच्, उपधावृद्धि होने पर दाम् इ इस स्थिति में जनीजघ्ष्क्नसुरञ्जोऽमन्ताश्च इस गणसूत्र से मिद्वद्भाव होने पर मितां ह्रस्वः इस सूत्र से उपधाह्रस्व होने पर दमि यह हुआ। तत्पश्चात् णिचश्च इससे प्राप्त आत्मनेपद को बांधकर अणावकर्मकाच्चित्तवत्कर्तृकात् इससे केवल परस्मैपद प्राप्त होने पर प्रकृत सूत्र से उसका निषेध होता है। उससे दमयते यह रूप सिद्ध होता है।

3. **आयामयते** – आङ् उपसर्गपूर्वक यम उपरमे इस भ्वादिगणीय धातु से णिच् परे रहते उपधावृद्धि होने पर आयामि यह होता है। तत्पश्चात् णिचश्च इस सूत्र से प्राप्त आत्मनेपद को बांधकर अणावकर्मकाच्चित्तवत्कर्तृकात् इस सूत्र से केवल परस्मैपद प्राप्त होने पर प्रकृतसूत्र से उसका निषेध होता है। अतः आयामयते यह रूप होता है।

4. **आयासयते** – आङ् उपसर्गपूर्वक यसु प्रयत्ने इस दिवादिगणीय धातु से णिच् होने पर उपधावृद्धि होकर आयासि यह होता है। तत्पश्चात् णिचश्च इस सूत्र से प्राप्त आत्मनेपद को बांधकर अणावकर्मकाच्चित्तवत्कर्तृकात् इस सूत्र से केवल परस्मैपद प्राप्त होने पर प्रकृतसूत्र से उसका निषेध होता है। उससे आयासयते यह रूप होता है।

5. **परिमोहयते**– परि उपसर्गपूर्वक मुह वैचित्ये इस दिवादिगणाय धातु से णिच् होने पर लघूपधागुण होकर परिमोहि यह होता है। तत्पश्चात् णिचश्च इस सूत्र से प्राप्त आत्मनेपद को बांधकर अणावकर्मकाच्चित्तवत्कर्तृकात् इस सूत्र से केवल परस्मैपद प्राप्त होने पर प्रकृत सूत्र से उसका निषेध होता है। उससे परिमोहयते यह रूप होता है।

6. **रोचयते**– रुच दीप्तावभिप्रीतौ च इस भ्वादिगणीय धातु से णिच् होने पर लघूपधागुण होकर रोचि इस णिजन्त धातु से णिचश्च इस सूत्र से प्राप्त आत्मनेपद को अणावकर्मकाच्चित्तवत्कर्तृकात् इस सूत्र से केवल परस्मैपद प्राप्त होने पर प्रकृतसूत्र से उसका निषेध होता है। उससे रोचयते यह रूप होता है।

7. **नर्तयते**– नृती गात्रविक्षेपे इस दिवादिगणाय धातु से णिच् होने पर लघूपधागुण होकर रोचि इस णिजन्त धातु से णिचश्च इस सूत्र से प्राप्त आत्मनेपद को बांधकर अणावकर्मकाच्चित्तवत्कर्तृकात् इस सूत्र से केवल परस्मैपद प्राप्त होने पर प्रकृतसूत्र से उसका निषेध होता है। उससे नर्तयते यह रूप होता है।

8. **वादयते**– वद व्यक्तायां वाचि इस भ्वादिगणीय धातु से णिच् होने पर उपधावृद्धि होकर वादि इस णिजन्त धातु से णिचश्च इस सूत्र से प्राप्त आत्मनेपद को बांधकर अणावकर्मकाच्चित्तवत्कर्तृकात् इस सूत्र से केवल परस्मैपद प्राप्त होने पर प्रकृतसूत्र से उसका निषेध होता है।उससे वादयते यह रूप होता है।

9. **वासयते**– वस निवासे इस वसगणीय धातु से णिच् होने पर उपधावृद्धि होकर वासि इस णिजन्त धातु से णिचश्च इस सूत्र से प्राप्त आत्मनेपद को बांधकर अणावकर्मकाच्चित्तवत्कर्तृकात् इस सूत्र से केवल परस्मैपद प्राप्त होने पर प्रकृतसूत्र से उसका निषेध होता है। उससे वासयते यह रूप होता है।

पाठगत प्रश्न 26.3

1. निगरणचलनार्थेभ्यश्च इस सूत्र का क्या अर्थ है?
2. उपरमति इत्यत्र परस्मैपद विधायक सूत्र कौन सा है?
3. व्याङ्परिभ्यो रमः इसके उदाहरण लिखिए?
4. प्राद्वहः इस सूत्र से क्या विधान किया जाता है, परस्मैपद अथवा आत्मनेपद?
5. न पादम्याङ् इत्यादि सूत्र को पूरा कीजिए।
6. अणावकर्मकाच्चित्तवत्कर्तृकात् इसका उदाहरण क्या है?

पाठ का सार

अनुदात्तेत् धातु और ङित् धातु से आत्मनेपद होता है। पुनः स्वरितञितः कर्तृऽभिप्राये क्रियाफले इस सूत्र से क्रियाफल के कर्तृगामी होने पर आत्मनेपद होता है, क्रियाफल के परगामी होने पर तो परस्मैपद होता है, यह कहा जाता है। किन्तु शेषात्कर्तरि परस्मैपदम् इस सूत्र से आत्मनेपद निमित्त हीन धातु से कर्ता में परस्मैपद हो, यह सामान्य रूप से परस्मैपद तथा आत्मनेपद विधान के विषय में कहकर तत्पश्चात् विशेष अर्थ के लिए यह पाठ आरम्भ किया गया है, यह जानना चाहिए।

क्रिया के विनिमय अर्थ को द्योतित करने के लिए आत्मनेपद होता है, व्यतिलुनीते इत्यादि में, कहीं उसका निषेध न गतिहिंसार्थेभ्यः इससे, व्यतिगच्छन्ति इत्यादि में। कहीं उपसर्ग योग से परस्मैपदी धातु से भी आत्मनेपद होता है। कहीं स्वरितञितः कर्तृऽभिप्राये क्रियाफले इससे परगामी क्रियाफल प्राप्त होने पर परस्मैपद को बांधकर आत्मनेपद का विधान किया जाता है, विक्रीणीते इत्यादि में। किञ्च सन्प्रत्ययपूर्वक जो आत्मनेपदी धातु है, उससे तुल्य सन्नन्तधातु से भी आत्मनेपद होता है। परगामी क्रियाफल होने पर आत्मनेपद विधान होता है, तथा सूत्र है–गन्धनावक्षेपणसेवनसाहसिक्य प्रतियत्नप्रकथनोपयोगेषु कृञः। कृ धातु ञित् है, अतः परगामी क्रियाफल होने पर परस्मैपद प्राप्त है अतएव कर्तृगामी क्रियाफल होने पर परस्मैपद विधान के लिए अनुपराभ्यां क्रियः यह सूत्र आरम्भ करते है। पुनः परस्मैपदप्रकरण में एक विशेष जानने योग्य है कि शेषात् कर्तरि परस्मैपदम् यहाँ से कर्तरि यह भी पद अनुवर्तित होता है। इस कारण से परस्मैपद प्रकरणस्थ सूत्रों से जो परस्मैपद विधानरूप विशेष कहा जाता है, वह तो कर्तृवाच्य में होता है। इससे भाव और कर्म स्थल पर आत्मनेपद होता है यह संशय नहीं है,यह सम्यक् रूप से समझना चाहिए। वहाँ कर्तृगामी क्रियाफल होने पर भी परस्मैपद विधान के लिए बुधयुधनशजनेङ्प्रुद्रुस्रुभ्यो णेः, निगरणचलनार्थेभ्यश्च और अणावकर्मकाच्चित्तवत्कर्तृकात् ये तीन सूत्र आरम्भ किए गए हैं। पुनः उनका निषेधसूत्र भी आरम्भ किया गया है– न पादम्याङ्यमाङ्यसपरिमुहरुचिनृतिवदवसः। इस प्रकार वहाँ वहाँ विशेष जानना चाहिए।

पाठांत प्रश्न

1. 'गन्धनावक्षेपण' इस सूत्र को पूरा करके व्याख्या कीजिए।
2. 'कर्तरि कर्मव्यतिहारे' इस सूत्र की उदाहरण सहित व्याख्या कीजिए।
3. 'विपराभ्यां जेः' इस सूत्र की उदाहरण सहित व्याख्या कीजिए।
4. 'पूर्ववत्सनः' इस सूत्र की उदाहरण सहित व्याख्या कीजिए।
5. 'दाणश्च सा चेच्चतुर्थ्यर्थे' इस सूत्र की उदाहरण सहित व्याख्या कीजिए।
6. 'अनुपराभ्यां कृञः' इस सूत्र की उदाहरण सहित क्या कीजिए।
7. 'बुधयुधनशजनेङ्प्रुद्रुस्रुभ्यो णेः' इस सूत्र की उदाहरण सहित व्याख्या कीजिए।
8. 'अभिप्रत्यतिभ्यः क्षिपः' इस सूत्र की उदाहरण सहित व्याख्या कीजिए।
9. 'न पादम्याङ्' इस सूत्र को पूरा करके व्याख्या कीजिए।
10. 'अणावकर्मकाच्चित्तवत्कर्तृकात्' इस सूत्र की उदाहरण सहित व्याख्या कीजिए।

पाठगत प्रश्नों का उत्तर

26.1

1. क्रियाविनिमय।
2. भवति। सन्तिष्ठते।
3. विजयेत। पराजयते।
4. अनुदात्तङित आत्मनेपदम्।
5. न गतिहिंसार्थेभ्य इति निषेधात।
6. निविशते।
7. विक्रीणीते।
8. अन्यस्य योग्यछेदनक्रियाम् अन्यः करोति यह अर्थ है।

26.2

1. शतम् अपलपति।
2. अपलाप अर्थ में।
3. रथेन सञ्चरते।
4. गन्धनावक्षेपणसेवनसाहसिक्यप्रतियत्नप्रकथनोपयोगेषु कृञः।
5. सूचयति।
6. सन्प्रत्यय पूर्वक जो आत्मनेपदी धातु है,उससे तुल्य सन्नन्तधातु भी आत्मनेपद होती है।
7. प्रकथयति।
8. दाणश्च सा चेच्चतुर्थ्यर्थे।

26.3

1. भक्षणार्थक और चलनार्थक ण्यन्त धातुओं से कर्तृगामी क्रियाफल होने पर भी परस्मैपद होता है।
2. विभाषाकर्मकात्।
3. विरमति। आरमति। परिरमति।
4. परस्मैपदम्।
5. न पादम्याङ्यमाङ्यसपरिमुहरुचिनृतिवदवसः।
6. शेते कृष्णः, तं गोपी शाययति।

॥ छबीसवां पाठ समाप्त॥

27

भावकर्म प्रकरण

संस्कृत में तो कर्तृवाच्य, कर्मवाच्य और भाववाच्य ये तीन वाच्य हैं। जब क्रिया से प्रधान रूप से कर्ता वाच्य होता है, तब कर्तृवाच्य होता है। यहाँ तो कर्ता में प्रथमा विभक्ति, कर्ता के अनुसार क्रिया में वचन और पुरुष होते हैं यथा रामः पठति, तौ विद्यालयं गच्छतः इत्यादि वाक्यों में कर्ता के अनुसार वचन और पुरुष हैं। और जब क्रिया से प्रधान रूप में कर्म वाच्य होता है तब कर्मवाच्य होता है। यहाँ तो कर्म के अनुसार क्रिया में वचन और पुरुष होते हैं, किन्तु कर्म में प्रथमा विभक्ति ओर कर्ता में तृतीया विभक्ति होती है। यथा-रामेण पुस्तकं पठ्यते, ताभ्यां विद्यालयः गम्यते इत्यादि वाक्यों में कर्म के अनुसार वचन और पुरुष हैं। अकर्मकधातु के स्थल पर तो क्रिया का ही प्राधान्य होता है, कर्ता का नहीं। इस कारण से उसको भाववाच्य कहा जाता है। यहाँ कर्ता में तृतीया विभक्ति होती है, क्रिया में तो प्रथमपुरुष एकवचनमात्र ही होता है। लः कर्मणि च भावे चाकर्मकेभ्यः इस सूत्र में कर्ता, कर्म और भाव ये तीन प्रकार के लकारार्थ कहे गये हैं। सकर्मक और अकर्मक धातुओं से कर्ता में लकार होते हैं यह आप पूर्व में जान चुके हैं। अब सकर्मक धातुओं से कर्म में और अकर्मक धातुओं से भाव में लकार होते हैं यह प्रदर्शित करने के लिए यह प्रकरण आरंभ करते हैं। यह प्रकरण भाव कर्म प्रक्रिया कहलाता है। भाव वाच्य में केवल प्रथम पुरुष एकवचन होता है, किंतु जब धातु सकर्मकता को प्राप्त करती है, तब कर्मवाच्य में सभी पुरुष और सभी वचन होते हैं यह सभी आगे स्पष्ट होगा।

(कर्तृवाच्यम् कर्मवाच्यम् प्रेष्टार्थप्रतिपादनाय इत्यादि शब्द व्याकरण से व्युत्पादित करने में असमर्थ है। अभी प्रादेशिक भाषाओं में इसका बहुत प्रयोग होता है। अतः उस प्रकार प्रस्तुत करते हैं। परंतु कर्ता में प्रयोग कर्तृवाच्य कर्म में प्रयोग कर्मवाच्य यह व्यवहार होता है यथा सम्भवम कर्तृवाच्य आदि पदों का व्यवहार श्रेष्ठ है।)

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप सक्षम होंगे :

- भावपदार्थ को जानेंगे और वह किसका अर्थ होता है, यह जान पाने में;
- भाववाच्य और कर्मवाच्य क्या होता है यह जान पाने में;
- भाववाच्य और कर्मवाच्य का क्या विशेष है, यह जान पाने में;
- तत्तत् स्थलों पर विशेष सूत्रों के कार्य को जान पाने में;
- भू धातु का भाव में प्रत्येक लकार का रूप जान पाने में;
- सर्वोपरि भाव और कर्म में प्रयोग परिवर्तन कर पाने में।

भाववाच्य और कर्मवाच्य में धातुओं से परस्मैपदात्मनेपद में कैसे पद होता है,यह दर्शाने के लिए यह विधिसूत्र आरंभ करते हैं।

27.1 भावकर्मणोः॥ (१.३.१३)

सूत्रार्थ – ल को आत्मनेपद होता है।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र एकपदात्मक है। लः कर्मणि च भावे चाकर्मकेभ्यः यहाँ से लः और अनुदात्तङित आत्मनेपदम् यहाँ से आत्मनेपदम् यह पद अनुवर्तित होता है। भावः च कर्म च तयोः इतरेतरयोगद्वन्द्वे भावकर्मणी, तयोः भावकर्मणोः यह सप्तमी द्विवचनान्त है। इस प्रकार भावार्थ और कर्म अर्थ में धातु से विहित लकार के स्थान पर आत्मनेपद प्रत्यय होता है, यह सूत्र का अर्थ है। इस प्रकार ही भाववाच्य और कर्मवाच्य में आत्मनेपद होता है, परस्मैपद तो कभी भी नहीं होता है। वहाँ धातु आत्मनेपदी, परस्मैपदी अथवा उभयपदी हो, भाववाच्य और कर्मवाच्य में आत्मनेपद ही होता है, यह निश्चित है।

यहाँ विशेष– फल और व्यापार ये धातु के दो अर्थ होते हैं। वहाँ व्यापार क्रिया अथवा भाव का नाम है। व्यापाराश्रय कर्ता और फलाश्रय कर्म होता है। जब कर्ता में ही फल और व्यापार निहित होते हैं तब वह धातु अकर्मक कही जाती है। यथा देवदत्तः एधते यहाँ एध वृद्धौ यह धातु अकर्मक है। यहाँ वृद्धिरूप फल का और तज्जनक क्रिया का आश्रय देवदत्त ही है। अतः यह धातु अकर्मक कही जाती है। यहाँ प्रश्न है – यदि धातु का ही अर्थ भाव होता है, तब लः कर्मणि च भावे चाकर्मकेभ्यः इस सूत्र से किसलिए भावार्थ में लकार होता है, यह कहा जाता है। तथा प्रश्न होने पर कहते हैं – भाव ही धातु का अर्थ है, किन्तु भावार्थक लकार से केवल वह अर्थ अनुदित होता है, न कि उसके अर्थ का विधान होता है। तो यहाँ तक स्पष्ट है कि जब कर्म नहीं होता है, तब ही भाववाच्य (impersonal voice) होता है। सकर्मक स्थल पर तो कर्मवाच्य (passive

voice) होता है। भाव में लकार होने पर कर्तृरूप युष्मद् शब्द से अथवा अस्मद् शब्द के साथ सामान्याधिकरण्य नहीं होता है इस कारण से केवल प्रथमपुरुष ही होता है। मध्यम पुरुष के लिए युष्मद् शब्द के साथ सामानाधिकरण्य आवश्यक है, उत्तमपुरुष के लिए अस्मद् शब्द के सा सामानाधिकरण्य आवश्यक है। भाववाच्य में तो उन दोनों का सामानाधिकरण्य नहीं होता है उस कारण से मध्यम और उत्तमपुरुष नहीं होता है। फलतः केवल प्रथमपुरुष ही होता है। यथा- आस्यते त्वया, आस्यते मया।

इन दोनों वाक्यों में भाव की ही प्रधानता होती है। और वह भाव तिङ् वाच्य ही है, न तो युष्मद् अर्थ अथवा न अस्मद् अर्थ होता है। अतः सामानाधिकरण्य नहीं है। तिङ् वाच्य भाव द्रव्य रूप नहीं है। अतः द्वित्वादि प्रतीति नहीं होती है। उस कारण से द्विवचनादि नहीं होता है, किन्तु उत्सर्ग से एकवचन ही होता है, एकवचनमुत्सर्गतः करिष्यते इस भाष्यवचन के अनुसार। द्वित्वादि की प्रतीति द्रव्य में ही सम्भव होती है। जहाँ लिङ्ग और संख्या का अन्वय नहीं होता है, वह अद्रव्य कहलाता है। इस प्रकार भाव की अद्रव्यरूपत्व होने से द्वित्वादि संख्या प्रतीत नहीं होती है, इस कारण से उत्सर्ग से एकवचन होता है। क्योकिं संख्या की अविवक्षाया में पद को उचित बनाने के लिए सुप्तिङ् प्रत्ययों में से जो कोई एक होता ही है।क्योंकि नियम है- अपदं न प्रयुञ्जीत। भावार्थ में लकार होने पर भाव उक्त होता है और कर्ता अनुक्त होता है, अतः कर्ता के अनभिहित होने पर कर्तृकरणयोस्तृतीया इस सूत्र से तृतीया विभक्ति होती है- त्वया मया अन्यैर्वा भूयते इत्यादि में।

उदाहरण - भूयते। इसकी प्रक्रिया आगे स्पष्ट होगी।

पूर्व भ्वादि प्रकरणों में आपने देखा की वहाँ-वहाँ शप्, श्यन्, श्लु इत्यादि विकरण होते हैं। किन्तु वह कर्तृवाच्य में ही होते हैं। यथा कर्तरि शप् इस सूत्र से विधीयमान शप् विकरण कर्ता में ही होता है। तो कर्मवाच्य और भाववाच्य में किस प्रकार का विकरण होता है यह पूछने पर नूतनविकरण को प्रदर्शित करने के लिए यह सूत्र आरम्भ करते हैं-

27.2 सार्वधातुके यक्॥ (३.१.६७)

सूत्रार्थ - धातु से यक् हो भावकर्मवाची सार्वधातुक परे रहते।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र पद द्वयात्मक है। सार्वधातुके (७/१), यक् (१/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। चिण्भावकर्मणोः यहाँ से भावकर्मणोः इस पद का और धातोरेकाचो हलादेः क्रियासमभिहारे यङ् (३.१.२२) यहाँ से धातोः इस पद की अनुवृत्ति होती है। प्रत्ययः परश्च ये दोनों सूत्र अधिकार करते हैं। इस प्रकार भावार्थ में और कर्मार्थ में सार्वधातुक प्रत्यय परे रहते धातु से यक् प्रत्यय होता है यह सूत्रार्थ है। यक् का ककार इत्संज्ञक है। अतः य ही शेष रहता है।

यहाँ विशेष- यक् के कित्त्व होने के तीन फल है।

1. सार्वधातुकार्धधातुकयोः इस गुण का निषेध यथा भूयते यहाँ।

टिप्पणियाँ

2. दूसरा सम्प्रसारण। यथा- यजति इत्यस्य भावे इज्यते यह रूप है। यहाँ वचिस्वपियजादीनां किति यह सम्प्रसारण होता है।

3. यक् का कित् करण होने से आद्यन्तौ टकितौ इस परिभाषा से अन्त्य अवयव होता है।

उदाहरण - भूयते।

सूत्रार्थसमन्वय - भू धातु से भावार्थ में वर्तमान क्रियावृत्ति की विवक्षा में वर्तमाने लट् इससे लट् लकार होने पर भावकर्मणोः इस सूत्र से आत्मनेपद का विधान होता है। वहाँ भाव अर्थ में औत्सर्गिक एकवचन होता है इस कारण से त प्रत्यय होने पर भू त इस स्थिति में तिङ्शत्सार्वधातुकम् इस सूत्र से तप्रत्यय की सार्वधातुक संज्ञा होने पर सार्वधातुके यक् इस प्रकृतसूत्र से यक् होता है क्योंकि यहाँ भावार्थ और सार्वधातुक प्रत्यय है। यक् के कित्त्व होने से आद्यन्तौ टकितौ इस परिभाषा से अन्त्य अवयव होने पर भू य त इस स्थिति में सार्वधातुकार्धधातुकयोः इस सूत्र से गुण प्राप्ति होने पर क्ङिति च इस सूत्र से गुण निषेध होने पर यहाँ के इस अकार की अचोऽन्त्यादि टि इस सूत्र से टि संज्ञा होने पर टित आत्मनेपदानां टेरे इस सूत्र से एत्त्व होने पर भूयते यह रूप सिद्ध होता है।

भू धातु से भाव में लुट् लकार में त आदेश होने पर यक् अपवाद भूत तास् प्रत्यय होने पर भू तास् त इस स्थिति में अग्रिम सूत्र आरम्भ करते हैं-

27.3 स्यसिच्सीयुट्तासिषु भावकर्मणोरुपदेशेऽज्झनग्रहदृशां वा चिण्वदिट् च॥ (६.४.६२)

सूत्रार्थ - उपदेश में जो अच् है, तदन्त धातुओं और हन् आदि धातुओं को चिण् के समान अङ्गकार्य हो,विकल्प से स्य आदि परे रहते भाव और कर्म जब गम्यमान हो, तथा स्य आदि को इट् आगम भी हो।

सूत्रव्याख्या- इस विधिसूत्र में अष्ट पद हैं। स्यसिच्सीयुट्तासिषु (७/३), भावकर्मणोः (७/२), उपदेशे (७/१), अज्झनग्रहदृशां (६/३), वा (अव्ययम्), चिण्वत् (अव्ययम्), इट् (१/१) च (अव्ययम्) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। स्यश्च सिच्च सीयुट् च तासिश्च तेषामितरेतरयोगद्वन्द्वे स्यसिच्सीयुट्तासयः, तेषु स्यसिच्सीयुट्तासिषु। भावश्च कर्म च तयोः इतरेतरयोगद्वन्द्वे भावकर्मणी, भावकर्मणी तयोर्भावकर्मणोः। अच्च हनश्च ग्रहश्च दृश्च तेषामितरेतरयोगद्वन्द्वे अज्झनग्रह दृशस्तेषामज्झनग्रहदृशाम्। अङ्गस्य यह सूत्र अधिकार करता है। उपदेशे इस अंश का अच् इस अंश के साथ सम्बन्ध है। अच् अधिकृत अङ्ग का विशेषण होता है। अतः येन विधि स्तदन्तस्य इस सूत्र से तदन्त विधि से उपदेश में जो अच् है,तदन्त अङ्गों का यह अर्थ होता है। और वह अङ्ग धातु से ही होता है। इस प्रकार सूत्रार्थ है-भावकर्म के विषय में स्य-सिच्-सीयुट्-तास् इत्यादि के परे होने पर उपदेश में जो धातु अच् है तदन्त धातु के स्थान पर तथा हन्-ग्रह-दृश् धातुओं के स्थान पर चिण्वत् अङ्गकार्य विकल्प से होता है और स्याद् आदि को इडागम होता है।

उदाहरण – भाविता, भविता।

सूत्रार्थसमन्वय – इस प्रकार भू धातु से लुट् लकार में त प्रत्यय तास् होने पर भू तास् त इस स्थिति में भू धातु से उपदेश में अजन्त होने से और इस भू धातु के उत्तर में तास् के विद्यमान होने से प्रकृत सूत्र से चिण्वद्भाव और इडागम होने पर भू इतास् त यह होता है। तत्पश्चात् चिण्वद्भाव होने से अचो ञ्णिति इस सूत्र से ऊकार की वृद्धि होकर औकार,आव् आदेश होने पर भाव् इतास् त इस स्थिति में त प्रत्यय के स्थान पर ड आदेश, डित्त्व होने से अभस्यापि टेः से लोप होने पर भाविता यह रूप सिद्ध हेता है। चिण्वद्भाव अभावपक्ष में और इडागम अभाव पक्ष में तास् के आर्धधातुक होने से आर्धधातुकस्येड्वलादेः इस सूत्र से तास् के वलादि लक्षणध् होने पर, इडागम होने पर सार्वधातुकार्धधातुकयोः इस सूत्र से भू इसके ऊकार का गुण होकर अवादेश होने पर भव् इतास् ति इस स्थिति में लुटः प्रथमस्य डारौरसः इस सूत्र से तिप् के स्थान पर ड आदेश होने, अनुबन्धलोप होने पर भवितास् यहाँ आस् इसकी टि संज्ञा होती है। तत्पश्चात् डित्त्वविधान सामर्थ्य से अभस्यापि टेः से लोप होता है, इस कारण से आस् का लोप होने पर भविता यह रूप होता है इस प्रकार रूप द्वय सिद्ध होते हैं।

चिण् परे होने पर जो कार्य होते हैं वे हैं –

- अचो ञ्णिति और अत उपधाया इन सूत्रों से वृद्धि।
- आतो युक् चिण्कृतोः इस सूत्र से युगागम।
- हो हन्तेञ्र्णिन्नेषु इस के योग से हन् का कुत्व।
- चिण्णमुलोर्दीर्घोऽन्यतरस्याम् इस सूत्र से उपधा की वैकल्पिक वृद्धि।

विशेष – इस सूत्र में ग्रहण की गई धातुएँ – अजन्तधातु, हन्, ग्रह, और दृश्। इस सूत्र की प्रवृत्ति में निमित्त हैं – स्य, सिच्, सीयुट्, तासि। सूत्र का कार्य-चिण्वद्भाव और इडागम जिस पक्ष में चिण्वद्भाव होता है उस पक्ष में ही इडागम होता है। चिण्वद्भाव का अभिप्राय– प्रायः चारों अङ्गकार्य चिण् होने पर पर होते हैं–

- **वृद्धि** – अचो ञ्णिति अथवा अत उपधायाः इनसे णित् निमित्त होने पर वृद्धि। वह स्यात् आदि परे होने पर भी होती है। यथा– भू इट् स्य ते–भौ इ स्य ते –भाविष्यते। ग्रह् इट् स्य ते – ग्राहिष्यते।
- **युगागम** – आतो युक् चिण्कृतोः इस सूत्र से आदन्त धातु को युगागम होता है। वह स्यात् आदि से भी होता है। यथा– दा इट् स्य ते–दा युक् इट् स्यते–दायिष्यते।
- **हन्त से घत्व** – हो हन्तेञ्र्णिन्नेषु इस सूत्र से हन् धातु के हकारस् को घकार होता है। और वह स्यात् आदि से भी होता है। यथा– हन् इट् स्य ते–घन् इ स्य ते– घान् इ स्य ते–घानिष्यते।
- **दीर्घ** – चिण्णमुलोर्दीर्घोऽन्यतरस्याम् इस सूत्र से मित् अङ्ग का वैकल्पिक दीर्घ होता है।और वह स्यात् आदि से भी होता है। यथा–शम् इ स्यते–शामिष्यते/शमिष्यते। चिण्वद्भाव के प्रयोजन विषय में शालिनी छन्द में निर्मित महाभाष्य में स्थित रमणीय श्लोक है–

टिप्पणियाँ

चिण्वद्वृद्धिर्युक् च हन्तेश्च घत्वं दीर्घश्चोक्तो यो मितां वा चिणीति।
इट् चासिद्धस्तेन मे लुप्यते णिर्नित्यश्चायं वल्लिमित्तो विघाती।।

(महाभाष्यम्-६.४.६२)

उदाहरण अग्रिम सूत्रों में प्रदर्शित करेगें।

भू धातु से भाव में लुङ्, च्लि,अट् आगम, त प्रत्यय होने पर अभू च्लि त इस स्थिति में च्लेः सिच् इस सूत्र से सिच् प्राप्त होने पर यह सूत्र आरम्भ करते हैं-

27.4 चिण्भावकर्मणोः।। (३.१.६६)

सूत्रार्थ - च्लि के स्थान पर चिण् हो भाव और कर्मवाची त शब्द परे।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र पदद्वयात्मक। चिण् (१/१), भावकर्मणोः (७/२) इति सूत्रगत पदों का विच्छेद है। भावः च कर्म च तयोः इतरेतरयोगद्वन्द्वे भावकर्मणी, तयोर्भावकर्मणोः। च्लेः सिच् यहाँ से च्लेः की अनुवृति होती है, चिण् ते पदः इससे ते इसकी अनुवृत्ति होती है। भावकर्मवाचक त शब्द परे होने पर च्लि के स्थान पर चिण् आदेश होता है यह सूत्रार्थ है। चिण् का णित्करण वृद्धि के लिए है।

उदाहरण - अभावि त्वया मया अन्यैश्च यह भाव अर्थ में उदाहरण है।

सूत्रार्थसमन्वय- यहाँ भू धातु से भाव अर्थ में लुङ लकार में अ भू त इस स्थिति में च्लि लुङि इस सूत्र से च्लि प्रत्यय होने पर तत्पश्चात् च्लि के स्थान पर च्लेः सिच् इस सूत्र से सिच् की प्राप्ति होने पर उसको बांधकर प्रकृत सूत्र से चिण् आदेश विधान किया जाता है। तत्पश्चात् चिण् के णित्करण होने से अचो ञ्णिति इस सूत्र से वृद्धि होने पर अ भाव् इत इस स्थिति में चिणो लुक् इस सूत्र से त प्रत्यय का लोप होने पर अभावि यह रूप सिद्ध होता है।

अब भू धातु से भाववाच्य होने पर प्रत्येक लकार में रूप कैसे होते हैं, यह वाक्य सहित नीचे प्रदर्शित किया जा रहा है-

लट्	भूयते त्वया मया अन्यैश्च।
लिट्	बभूवे त्वया मया अन्यैश्च।
लुट्	भाविता, भविता त्वया मया अन्यैश्च।
लृट्	भाविष्यते, भविष्यते त्वया मया अन्यैश्च।
लोट्	भूयताम् त्वया मया अन्यैश्च।
लङ्	अभूयत त्वया मया अन्यैश्च।
विधिलिङ्	भूयेत त्वया मया अन्यैश्च।

आशीर्लिङ्	भाविषीष्ट, भविषीष्ट त्वया मया अन्यैश्च।
लुङ्	अभावि त्वया मया अन्यैश्च।
लृङ्	अभाविष्यत, अभविष्यत त्वया मया अन्यैश्च।

यहाँ **ध्यान योग्य** है – अकर्मक धातु कभी उपसर्ग वशीभूत होकर सकर्मक होता है। यथा भू धातु अकर्मक है किन्तु अनु इस उपसर्ग के योग से अनुभव अर्थ प्रतीत होता है। यथा देवदत्तः आनन्दम् अनुभवति यहाँ अनु उपसर्गपूर्वक भू धातु सकर्मकता को प्राप्त करती है। अतः इस वाक्य का कर्मवाच्य में प्रयोग परिवर्तन किया जाता है तो देवदत्तेन आनन्दः अनुभूयते यह प्रयोग होगा। अतः देवदत्तेन आनन्दः **अनुभूयते** यहाँ अनुभूयते यह **कर्मार्थ** में उदाहरण है। यहाँ कर्म में लकार है। अतः कर्म तिङ् उक्त है इस कारण से आनन्दः यहाँ कर्म में द्वितीया विभक्ति नहीं हुई है, अपितु प्रातिपदिकार्थ लिङ्गपरिमाणवचनमात्रे प्रथमा इस सूत्र से प्रातिपदिकार्थ में प्रथमा विभक्ति हुई है। कर्म उक्त है इस कारण से अन्य सभी के अनुक्त होने से कर्ता अनुक्त होता है। इसलिए ही कर्तृकरणयोस्तृतीया इस सूत्र से अनुक्त कर्ता में तृतीया विभक्ति होता है, अतः देवदत्तेन यहाँ तृतीया विभक्ति है। भाववाच्य में प्रथमपुरुष एकवचन मात्र ही होता है, किन्तु सकर्मक स्थल पर कर्मवाच्य में सभी पुरुष और सभी वचन होते हैं यह सम्यक् रूप से स्मरण रखना चाहिए। और कर्म के वचनानुसार तङ् में वचन होता है, अतः अनुभूयते यहाँ एकवचन होता है। इसके अतिरिक्त उदाहरण यहाँ प्रर्दशित किए गए हैं, उन प्रयोगों को कृपया देखिए–

- **प्रथमपुरुष कर्ता**– चैत्रेण चैत्रमैत्राभ्याम् चैत्रमैत्रगोपालैः आनन्दः अनुभूयते, आनन्दौ अनुभूयेते, आनन्दा अनुभूयन्ते।
- **मध्यमपुरुष कर्ता**– त्वया, युवाभ्याम्, युष्माभिः, आनन्दः अनुभूयते, आनन्दौ अनुभूयेते, आनन्दा अनुभूयन्ते।
- **उत्तमपुरुष कर्ता**–मया, आवाभ्याम्, अस्माभिः, आनन्दः अनुभूयते, आनन्दौ अनुभूयेते, आनन्दा अनुभूयन्ते।

किन्तु युष्मदर्थ यदि कर्म होता है तब युष्मदर्थ की क्रिया में मध्यमपुरुष होता है–

- **प्रथमपुरुष कर्ता**– चैत्रेण चैत्रमैत्राभ्याम् चैत्रमैत्रगोपालैः त्वम् अनुभूयसे, युवाम् अनुभूयेथे, यूयम् अनुभूयध्वे।
- **उत्तमपुरुष कर्ता**–मया, आवाभ्याम्, अस्माभिः त्वम् अनुभूयसे, युवाम् अनुभूयेथे, यूयम् अनुभूयध्वे।

यदि अस्मदर्थ कर्म होता है तब अस्मदर्थ की क्रिया में उत्तमपुरुष होता है–

- **प्रथमपुरुष कर्ता**– चैत्रेण चैत्रमैत्राभ्याम् चैत्रमैत्रगोपालैः अहम् अनुभूये, आवाम् अनुभूयावहे, वयम् अनुभूयामहे।
- **मध्यमपुरुष कर्ता**– त्वया, युवाभ्याम्, युष्माभिः अहम् अनुभूये, आवाम् अनुभूयावहे, वयम् अनुभूयामहे। एवम् अन्यत्रापि चिन्त्यताम्।

पाठगत प्रश्न 27.1

1. अकर्मक धातुओं से किस अर्थ में लकार होता है?
2. सकर्मक धातुओं से किस अर्थ में लकार होता है?
3. भाव और कर्म में कौन सा लकार होता है?
4. भाव और कर्म से आत्मनेपदविधायक सूत्र कौन सा है?
5. चिण्भावकर्मणोः इस का सूत्रार्थ लिखिए।
6. भू धातु से भाव में लुङ् करने पर क्या रूप होता है?
7. चिण् परे रहते कितने अङ्गकार्य होते हैं?
8. भाव में सभी वचन और पुरुष होते हैं। क्या यह उचित है अथवा अनुचित है?
9. कर्म में सभी वचन और पुरुष होते हैं। क्या यह उचित है अथवा अनुचित है?
10. भाव में किस प्रकार के वचन और पुरुष होते हैं?
11. अनुभूयते क्या यह सकर्मक है?
12. स्यसिच्-आदि सूत्र को पूरा कीजिए?

लभ्धातोः लुङि प्रथमपुरुषैकचने च्लेः चिण्-आदेशे अलभ् इ त इति स्थिते सूत्रमिदमारभ्यते -

27.5 विभाषा चिण्णमुलोः॥ (७.१.६९)

सूत्रार्थ - लभ् धातु को नुमागम विकल्प से हो चिण् और णमुल् परे रहते।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र पद द्वयात्मक है। विभाषा (१/१), चिण्णमुलोः (७/२) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। चिण् च णमुल् च तयोरितरेतरयोगद्वन्द्वे चिण्णमुलौ, तयोः चिण्णमुलोः। लभेश्च यहाँ लभेः इसकी और इदितो नुम् धातोः यहाँ से नुम् इसकी अनुवृत्ति होती है। इस प्रकार चिण् परे रहते अथवा णमुल् परे रहते लभ् धातु से विकल्प से नुम् आगम होता है यह सूत्रार्थ है।

विशेष- इस सूत्र में व्यवस्थित विभाषा आश्रित होती है। अतः उपसर्ग रहित धातु से विकल्प से नुम् आगम होता है। उपसर्ग सहित लभ् धातु से तो नित्य ही नुमागम होता है। अतः उपालम्भि यह रूप होता है न कि उपालाभि।

उदाहरण - अलम्भि, अलाभि।

सूत्रार्थसमन्वय - और इस प्रकार लभ् धातु से लुङ् लकार में त प्रत्यय, चिण् होने पर अलभ् इ त यह होता है।और वहाँ चिण् परे है इस कारण से प्रकृत सूत्र से विकल्प से नुमागम होता

है। तत्पश्चात् नकार का अनुस्वार होने पर और अनुस्वार का परसवर्ण होने पर चिणो लुक् इस सूत्र से त प्रत्यय का लोप होने पर अलम्भि यह रूप सिद्ध होता है। जब नुम् नहीं होता है तब चिण् के णित्त्व होने से उपधावृद्धि होने पर अलाभि यह रूप सिद्ध होता है।

भञ्ज आमर्दने इस धातु से कर्मवाच्य में लुङ् लकार प्रथमपुरुष एकवचन की विवक्षा में तप्रत्यय, यक्, च्लि, चिण् होने पर अभन्ज् इ त इस स्थिति में यह सूत्र आरम्भ करते हैं-

27.6 भञ्जेश्चिणि॥ (६.४.३३)

सूत्रार्थ - भञ्ज् धातु के नकार का लोप हो चिण् परे रहते विकल्प से।

सूत्रव्याख्या - यह सूत्र पदद्वयात्मक है। भञ्जेः (६/१), चिणि (७/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। श्नान्नलोपः यहाँ से नलोपः इस पद की अनुवृत्ति होती है।और भी जान्तनशां विभाषा यहाँ से विभाषा इसकी अनुवृत्ति होती है।और चिण् परे रहते भन्ज् धातु के नकार का विकल्प से लोप होता है यह सूत्रार्थ है।

उदाहरण - अभाजि, अभञ्जि।

सूत्रार्थसमन्वय - यहाँ भन्ज् धातु से लुङ् लकार होने पर अभन्ज् इ त इस स्थिति में प्रकृत सूत्र से नकार का लोप होता है। क्योकिं यहाँ भन्ज् धातु से परे चिण्प्रत्यय है। तत्पश्चात् अत उपधायाः इस सूत्र से उपधावृद्धि होने पर अभाज् इत इस स्थिति में चिणो लुक् इस सूत्र से तकार का लोप होने पर अभाजि यह सिद्ध होता है। जब तो नकार का लोप नहीं होता है तब उपधा में अकार नहीं होता है, इस कारण से वृद्धि भी नहीं होती है अतः अभञ्जि यह रूप भी सिद्ध होता है।

तनु विस्तारे इस सकर्मक धातु से कर्म में लट् लकार, त आदेश, यक्-विकरण,तन् य त इस स्थिति में यह सूत्र आरम्भ करते हैं। -

27.7 तनोतर्यकि॥ (६.४.४४)

सूत्रार्थ - तन् धातु को आकार अन्तादेश होता है विकल्प से यक् परे रहते।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र पद द्वयात्मक है। तनोतेः (६/१), यकि (७/१) इति सूत्रगत पदों का विच्छेद है। विड्वनोरनुनासिकस्यात् यहाँ से आत् इसकी अनुवृत्ति होती है और ये विभाषा इससे विभाषा इसकी अनुवृत्ति होती है। तत्पश्चात् तन् धातु के स्थान पर विकल्प से आकार अन्तादेश होता है यक् परे रहते यह सूत्रार्थ है। अलोन्त्यस्य इति परिभाषा से (अन्त्य के) नकार को ही यह आदेश होता है।

उदाहरण - तायते, तन्यते।

सूत्रार्थसमन्वय - इस प्रकार तन् य त इस स्थिति में प्रकृत सूत्र से नकार के स्थान पर आकार आदेश होता है। क्योंकि यहां तन् धातु से यक् विहित है। तत्पश्चात् सवर्णदीर्घ होने पर तायत इस

टिप्पणियाँ

स्थिति में टेः सूत्र से एत्त्व होने पर तायते यह रूप सिद्ध होता है। आत्त्व अभाव दशा में तो तन्यते यह रूप होता है। इस प्रकार रूप द्वय सिद्ध होते हैं।

तप् धातु से लुङ् में प्रथम पुरुष एकवचन में च्लौ अ तप् च्लि त इस स्थिति में चिण्भावकर्मणोः इस सूत्र से च्लि के स्थान पर चिण् प्राप्त होने पर यह सूत्र आरम्भ करते हैं –

27.8 तपोऽनुतापे च॥ (३.१.६५)

सूत्रार्थः – तप् से च्लि को चिण् न हो कर्मकर्ता और अनुताप अर्थ में।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र पदत्रयात्मक है। तपः (५/१), अनुतापे (७/१) च यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। च्लेः सिच् यहाँ से च्लेः इसकी, चिण् ते पदः यहाँ से चिण् इसकी, न रुधः यहाँ से न इसकी और अचः कर्मकर्तरि यहाँ से कर्मकर्तरि इसकी अनुवृत्ति होती है। इस प्रकार तप् धातु से उत्तर के च्लि के स्थान पर चिण् आदेश नहीं होता है कर्मकर्ता और अनुताप(पश्चाताप) अर्थ में।

यहाँ विशेष – कर्मकर्ता का उदाहरण काशिका अथवा वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी के कर्मकर्तृप्रकरण में देखिए। यहाँ तो प्रकरण वश भावकर्म प्रक्रिया में अनुताप अर्थ में उदाहरण प्रदर्शित करते हैं।

उदाहरण– अन्वतप्त पापेन।

सूत्रार्थसमन्वय – यहाँ भाव में अथवा कर्म में अनु उपसर्गपूर्वक तप् धातु से लुङ्, च्लि, त प्रत्यय होने पर अनु अ तप् च्लि त इस दशा में अनुताप अर्थ के होने से प्रकृत सूत्र से चिण् निषेध होता है। तत्पश्चात् च्लेः सिच् इस सूत्र से सिच् आदेश, अनुबन्धलोप होने पर अनु अ तप् स् त इस स्थिति में झलो झलि इस सूत्र से सकार के लोप होने पर इको यणचि इस सूत्र से यण् वकार होने पर अन्वतप्त यह रूप सिद्ध होता है।जब तो अनुताप अर्थ नहीं होता है तब चिण् होता ही है यथा– उदतापि सुवर्ण सुवर्णकारेण।

शम्धातोः लुङि प्रथमपुरुषैकवचने अ शम् इ त इति स्थिते उपधावृद्धौ प्राप्तायां सूत्रमिदमारभ्यते–

27.9 नोदात्तोपदेशस्य मान्तस्यानाचमेः॥ (७.३.३४)

सूत्रार्थ – उपदेश अवस्था में उदात्त अकारान्त धातु की उपधा को वृद्धि नहीं होती है चिण्, ञित्, णित् और कृत् परे रहते, आपूर्वक चम् धातु के अतिरिक्त।

सूत्रव्याख्या – इस विधिसूत्र में चार पद हैं। न (अव्ययम्), उदात्तोपदेशस्य (६/१), मान्तस्य (६/१), अनाचमेः (६/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। उदात्त उपदेशो यस्य स उदात्तोपदेशः, बहुव्रीहिः। मोऽन्ते यस्य स मान्तः तस्य मान्तस्य, बहुव्रीहिः। न आचमिः अनाचमिः तस्य अनाचमेः। मृजेर्वृद्धिः यहाँ से वृद्धिः इसकी, अत उपधायाः यहाँ से उपधायाः इसकी, अचो ञ्णिति यहाँ से ञ्णिति इसकी और आतो युक् चिण्कृतोः यहाँ से चिण्कृतोः इसकी अनुवृत्ति होती है। इस प्रकार पूर्वोक्त सूत्रार्थ सिद्ध होता है।

उदाहरण – अशमि।

सूत्रार्थसमन्वय – इस प्रकार शम् धातु से लुङ् में त प्रत्यय, च्लि, च्लि के स्थान पर सिच्, सिच् के स्थान पर चिण्भावकर्मणोः इस सूत्र से चिणादेश होने पर अ शम् इ त इस स्थिति में उपधावृद्धि प्राप्त होने पर प्रकृत सूत्र से यहाँ वृद्धि का निषेध होता है। क्योंकि यहाँ शम् इस मान्त से पर चिण् है। तत्पश्चात् चिणो लुक् इस सूत्र से चिण् का लोप होने पर अशमि यह रूप सिद्ध होता है। इस प्रकार ही अदमि इत्यादि सिद्ध होता है।

दा धातु अनिट् है। अतः वलादिलक्षण के इट् का निषेध प्राप्त है। किन्तु उपदेशावस्था में अजन्त होने से स्यसिच्सीयुडादि सूत्र से पक्ष में चिण्वद् इट होने पर यह सूत्र प्रवर्तित होता है–

27.10 आतो युक्चिण्कृतोः।। (७.३.३३)

सूत्रार्थ – आदन्त धातुओं को युगागम हो चिण् ञित् और कृत् परे रहते।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र पद त्रयात्मक है। आतः (६/१), युक् (१/१), चिण्कतोः (७/२) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। अङ्गस्य इसका अधिकार है। आतः यह अङ्गस्य का विशेषण है। विशेषण होने से तदन्त विधि में आदन्त अङ्ग से यह अर्थ होता है। चिण् च कृत् च तयोरितरेतरयोगद्वन्द्वे चिण्कृतौ, तयोः चिण्कृतोः। अचो ञ्णिति यहाँ से ञ्णिति इत्सकी अनुवृत्ति होती है। ञ्णिति इसका चिण्कृतोः यहाँ के कृत् अंश के साथ सम्बन्ध है। युगागम के कित्त्व होने से आद्यन्तौ टकितौ इस परिभाषा से अन्त्य अवयव होता है। इस प्रकार सूत्र का अर्थ है – आदन्त अङ्ग को युगागम होता है चिण् परे रहते अथवा ञित्, णित् और कृत् प्रत्यय परे रहते। युक् का ककार इत्संज्ञक है, उकार उच्चारण के लिए है। अतः य्–मात्र ही शेष रहता है,यह ध्यान योग्य है।

उदाहरणम– दायिता,दाता।

सूत्रार्थसमन्वय – प्रसङ्ग होने से चिण् का उदाहरण ही यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है। शेष के उदाहरण कृदन्त प्रकरण में प्राप्त होते हैं। दा धातु से भावकर्म में लुट्, प्रथमपुरुष एकवचन में त प्रत्यय तास्, स्यसिच्सीयुडादि सूत्र से पक्ष में चिण्वद् इट् होने पर दा इतास् त इस स्थिति में तास् का चिण्वद्भाव होने से चिण् पर में ही है। और दा यह आदन्त अङ्ग भी है। अतः प्रकृत सूत्र से युगागम होने पर लुट् के स्थान पर ड आदेश और टिलोप होने पर दाय् इ त् आ इस स्थिति में सभी का वर्णसम्मेलन होने पर दायिता यह रूप सिद्ध होता है, चिण्वदिट् अभाव में दाता यह रूप सिद्ध होता है। ये रूप द्वय सिद्ध होते हैं।

ण्यन्त शम् धातु से हेतुमण्णिचि लुट् में तप्रत्यय तास् होने पर शमि इ तास् त यह होता है। अतः यह धातु णिजन्त है इस कारण से धातु के अजन्त होने से चिण्वद्भाव और इट् होने पर शम् इ इ इतास् त इस स्थिति में णेरनिटि इस सूत्र से प्रथम और द्वितीय दोनों णिचों का लोप होने पर शम् इ तास् त इस दशा में यह सूत्र आरम्भ किया गया है –

टिप्पणियाँ

27.11 चिण्णमुलोर्दीर्घोऽन्यतरस्याम्॥ (६.४.९३)

सूत्रार्थ - चिण् और णमुल् परक णिच् परे रहते मित् की उपधा का दीर्घ हो विकल्प से।

सूत्रव्याख्या - इस विधिसूत्र में तीन पद है। चिणण्णमुलोः (७/२), दीर्घः (१/१), अन्यतरस्याम् (सप्तमीविभक्तिप्रतिरूपकमव्ययम्) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। चिण् च णमुल् च तयोरितरेतरयोगद्वन्द्वे चिण्णमुलौ तयोः चिण्णमुलोः। दोषो णौ यहाँ से णौ इसकी, ऊदुपधायाः गोहः यहाँ से उपधायाः इसकी और मितां ह्रस्वः यहाँ से मिताम् इसकी अनुवृत्ति होती है। इस प्रकार सूत्रार्थ है- चिण्परक और णमुल्परक णिच् पर में रहते मित्संज्ञक धातु की उपधा का विकल्प से दीर्घ हो।

उदाहरण- शामिता, शमिता, शमयिता।

सूत्रार्थसमन्वय- इस प्रकार शम् इ तास् त इस स्थिति में उपधा भूत अकार का चिण्णमुलोर्दीर्घोऽन्य तरस्याम् इस योग से विकल्प से दीर्घ होने पर शाम् इ तास् त इस स्थिति में त प्रत्यय को डादेश होने पर डित्त्वसामर्थ्य से भसंज्ञक नहीं होने पर भी टि आस् का लोप होने पर शामिता यह रूप सिद्ध होता है, दीर्घ अभाव पक्ष में शमिता यह रूप सिद्ध होता है। और चिण्वद्भाव विकल्प से होता है, इस कारण से जब चिण्वद्भाव नहीं होता है तब णि के इकार का गुण एकार होने पर उसका अय् आदेश और सर्व वर्णसम्मेलन होने पर शमयिता यह रूप सिद्ध होता है। इस प्रकार तीन रूप होते हैं।

द्विकर्मकधातुस्थल में प्रयोग परिवर्तन के प्रकार

लः कर्मणि च भावे चाकर्मकेभ्यः इस सूत्र से कर्म में लकार होता है यह आप पूर्व में जान चुके हैं। किन्तु वहां प्रश्न उठता है कि द्विकर्मक धातु के स्थल में अर्थात् जिस धातु में दो कर्म होते हैं उनमें किस कर्म में लकार होता है। उसके उत्तर के लिए हम कारकप्रकरणस्थ सूत्रों को देखते हैं। वहाँ अकथितञ्च इस सूत्र से अपादानादिकारकों से अविवक्षित कारक की कर्मसंज्ञा होती है। वह अप्रधान अथवा गौण कर्म कहलाता है। कर्तुरीप्सिततमं कर्म इत्यादि सूत्र से जिसकी कर्मसंज्ञा होती है, वह प्रधान अथवा मुख्य कर्म कहलाता है। इस प्रकार कर्म के भेद द्वय को सम्यक् रूप से जानना चाहिए। वहाँ मुख्य कर्म में लकार होता है अथवा गौण कर्म में लकार होता है यह पूछने पर कहते हैं -

गौणे कर्मणि दुह्यादेः प्रधाने नीहृकृष्वहाम्। इति

दुह, याच्, पच्, दण्ड्, रुध्, प्रच्छ्, चि, ब्रू, शास्, जि, मथ्, मुष् इन द्वादश धातुओं से गौण कर्म में लकार होता है। नी, हृ, कृष्, वह् इन चारों धातुओं से प्रधान कर्म में प्रत्यय होता है।

यथा- गां दोग्धि पयः गोपः इस कर्तृवाच्य का कर्मवाच्य में परिवर्तन किया जाता है तो - गौः दुह्यते पयः गोपेन यह वाक्य होता है। यहाँ दुह् धातु द्विकर्मक है। पयः यह प्रधान कर्म है,और उसकी कर्मसंज्ञा कर्तुरीप्सिततमं कर्म इस सूत्र से होती है, गाम् यह अप्रधान कर्म है और उसकी

कर्मसंज्ञा अकथितं च इससे होती है। पूर्वोक्त श्लोक के अनुसार यहाँ अप्रधान कर्म में लकार होता है। अप्रधान कर्म में लकार होता है इस कारण से अप्रधान कर्म ही उक्त होता है। और प्रधान कर्म पयः यह अनुक्त है। क्योंकि वहां लकार विहित नहीं है। कर्मणि द्वितीया इस सूत्र से तो अनुक्त कर्म में द्वितीया विभक्ति होती है न कि उक्त कर्म में। अतः पयः यहाँ द्वितीया विभक्ति है पयः यह प्रथमान्त है, यह चिन्तन करके भ्रान्त नहीं होना चाहिए।

आपके सौकर्य के लिए नीचे स्तम्भनिर्माण से उदाहरणों को आलोचित जा रहा है, पहले अकथितं च इस सूत्र में स्थित दुह्यादि धातुओं के उदाहरण प्रदर्शित किए जाते हैं-

कर्ता में प्रयोगः	कर्म में प्रयोग	अप्रधान कर्म	प्रधान कर्म
गां दोग्धि पयः	गौः दुह्यते पयः	गौः	पयः
बलिं याचते वसुधाम्	बलिः याच्यते वसुधाम्	बलिः	वसुधा
अविनीतं विनयं याचते	अविनीतो विनयं याच्यते	अविनीतः	विनयः
तण्डुलान् ओदनं पचति	तण्डुलाः ओदनं पच्यन्ते	तण्डुलाः	ओदनः
गर्गान् शतं दण्डयति	गर्गाः शतं दण्ड्यन्ते	गर्गाः	शतम्
व्रजम् अवरुणद्धि गाम्	व्रजः अवरुध्यन्ते गाम्	व्रजः	गौः
माणवकं पन्थानं पृच्छति	माणवकः पन्थानं पृच्छ्यते	माणवकः	पन्थाः
वृक्षम् अवचिनोति फलानि	वृक्षः अवचीयते फलानि	वृक्षः	फलानि
माणवकं धर्मं ब्रूते	माणवको धर्मं उच्यते	माणवकः	धर्मः
माणवकं धर्मं शास्ति	माणवको धर्मं शिष्यते	माणवकः	धर्मः
शतं जयति देवदत्तम्	शतं जीयते देवदत्तः	देवदत्तः	शतम्
सुधां क्षीरनिधिं मथ्नाति	सुधां क्षीरनिधिः मथ्यते	क्षीरनिधिः	सुधा
देवदत्तं शतं मुष्णाति	देवदत्तः शतं मुष्यते	देवदत्तः	शतम्

अब नी आदि धातुओं के उदाहरण प्रदर्शित करते हैं-

कर्तृवाच्य	कर्मवाच्य	अप्रधान कर्म	प्रधान कर्म
अजां ग्रामं नयति	अजा ग्रामं नीयते	अजा	ग्रामः
अजां ग्रामं हरति	अजा ग्रामं ह्रियते	अजा	ग्रामः
अजां ग्रामं कर्षति	अजा ग्रामं कृष्यते	अजा	ग्रामः
अजां ग्रामं वहति	अजा ग्रामं उह्यते	अजा	ग्रामः

अतः–

बुद्धिभक्षार्थयोः शब्दकर्मकाणां निजेच्छया।।
प्रयोज्यकर्मण्यन्येषां ण्यन्तानां लादयो मताः।

गतिबुद्धिप्रत्यवसानार्थशब्दकर्माकर्मकाणामणि कर्ता स णौ इस सूत्र से जिनकी कर्मसंज्ञा होती है, उनमें बुद्ध्यर्थक धातु से भक्षणार्थक धातु से और शब्द सकर्मक धातु से वक्ता स्वेच्छानुसार प्रधान अथवा अप्रधान कर्म में लकार विधान कर सकता है। अर्थात् वहाँ पहले कहा गया नियम नहीं है। गत्यर्थकादि धातुओं के लिए तो जिसकी कर्मसंज्ञा होती है उसके समान कर्म में और प्रयोज्य कर्म में लकारादि प्रत्यय होता है। बोध्यते माणवकं धर्मः अथवा माणवको धर्मम् इस वाक्य में प्रधान कर्म धर्मः है, और अप्रधान माणवकः है। अतः वहाँ स्वेच्छानुसार कर्म में लकार होता है, इस कारण से प्रधान कर्म में लकार होता है। और उक्त प्रधान कर्म में प्रथमा का विधान करके गुरुणा बोध्यते माणवकं धर्मः यह वाक्य होता है। जब अप्रधान कर्म में लकार होता है, तब तो उक्त प्रधान कर्म में प्रथमा का विधान करके गुरुणा माणवको धर्म बोध्यते यह वाक्य होता है। अनुक्त कर्म में द्वितीया होती है, कर्मणि द्वितीया इसके योग से यह तो आप जानते ही हैं इसलिए यहाँ बुद्ध्यर्थक धातुओं के उदाहरण आलोचित किए गए हैं। मात्रा भोज्यते माणवकम् ओदनः, माणवक ओदनं वा भोज्यते यह प्रत्यवसानार्थक का उदाहरण है।

यज्ञदत्तेन देवदत्तो ग्रामं गम्यते। यहाँ प्रयोज्यकर्म देवदत्तः है। प्रयोज्यकर्मण्यन्येषां ण्यन्तानां लादयो मताः इससे प्रयोज्यकर्म में ही लकार होता है, जिससे प्रयोज्यकर्म देवदत्त आदि के उक्त होने से प्रथमाविभक्ति होती है। उससे देवदत्तो ग्रामं गम्यते इत्यादि वाक्य सिद्ध होता है। प्रयोज्यकर्म से भिन्न ईप्सिततम कर्म ग्राम शब्द से तो द्वितीया ही होती है। गम्यते यहाँ हेतुमण्णिजन्त गम् धातु से प्रयोज्यकर्म में लकार होता है।

कुछ धातुओं के कर्मवाच्य और भाववाच्य में लट् लकार प्रथमपुरुष एकवचन में रूप नीचे प्रदर्शित किए जा रहे हैं, जिससे आप उन रूपों का प्रयोग व्यवहार में कर सकेंगें।

मूल धातु	कर्तृवाच्य	भावकर्मरूप	अर्थ (हिन्दीभाषा)
अर्च्	अर्चति	अर्च्यते	(किसी से) पूजा जाता है।
अस्	अस्ति	भूयते	हुआ जाता है।
आप्	आप्नोति	आप्यते	पाया जाता है।
इङ्	अधीते	अधीयते	पढ़ा जाता है।
इष्	इच्छति	इष्यते	चाहा जाता है।
कथ्	कथयति	कथ्यते	कहा जाता है।
कृ	करोति	क्रियते	किया जाता है।

कृष्	कर्षति	कृष्यते	जोता जाता है।
क्री	क्रीणाति	क्रीयते	खरीदा जाता है।
क्षिप्	क्षिपति	क्षिप्यते	फेंका जाता है।
खाद्	खादति	खाद्यते	खाया जाता है।
गण्	गणयति	गण्यते	गिना जाता है।
गम्	गच्छति	गम्यते	जाया जाता है।
गै	गायति	गीयते	गाया जाता है।
ग्रह्	गृह्णाति	गृह्यते	ग्रहण किया जाता है।
चिन्त्	चिन्तयति	चिन्त्यते	सोचा जाता है।
चुर्	चोरयति	चोर्यते	चुराया जाता है।
ज्ञा	जानाति	ज्ञायते	जाना जाता है।
तृ	तरति	तीर्यते	पार किया जाता है।
त्यज्	त्यजति	त्यज्यते	छोड़ा जाता है।
दह्	दहति	दह्यते	जलाया जाता है।
दा	ददाति	दीयते	दिया जाता है।
दुह्	दोग्धि	दुह्यते	दुहा जाता है।
दृश्	पश्यति	दृश्यते	देखा जाता है।
ध्यै	ध्यायति	ध्यायते	ध्यान किया जाता है।
नम्	नमति	नम्यते	नमस्कार किया जाता है।
नी	नयति	नीयते	ले जाया जाता है।
पच्	पचति	पच्यते	पकाया जाता है।
पठ्	पठति	पठ्यते	पढ़ा जाता है।
पा	पिबति	पीयते	पिया जाता है।
पाल्	पालयति	पाल्यते	पाला जाता है।
पूज्	पूजयति	पूज्यते	पूजा किया जाता है।
प्रच्छ्	पृच्छति	पृच्छ्यते	पूछाँ जाता है।

टिप्पणियाँ

बन्ध्	बध्नाति	बध्यते	बाँधा जाता है।
ब्रू	ब्रवीति	उच्यते	कहा जाता है।
भाष्	भाषते	भाष्यते	कहा जाता है।
याच्	याचते	याच्यते	माँगा जाता है।

विवक्षा से कारक होते हैं। अतः कोई भी वाक्य कर्तृवाच्य में,कर्मवाच्य में अथवा भाववाच्य में वक्ता प्रयोग कर सकता है पारयति। नीचे उन तीनों वाच्यों में कुछ वाक्यों के प्रयोग प्रदर्शित करते हैं –

कर्तृवाच्य	भाववाच्य
सः भवति।	तेन भूयते।
त्वं भवसि।	त्वया भूयते।
अहं भवामि।	मया भूयते।
प्रसिद्धः पुरुषो भवेत्।	प्रसिद्धेन पुरुषेण भूयेत।

कर्तृवाच्य	कर्मवाच्य
रामः विद्यालयं गच्छति।	रामेण विद्यालयः गम्यते।
रामः ओदनं खादति।	रामेण ओदनः खाद्यते।
त्वं घटं कुरु।	त्वया घटः क्रियताम्।
त्वं पुस्तकं पठ।	त्वया पुस्तकं पठ्यताम्।
अहं जलं न पास्यामि।	मया जलं न पास्यते।
बालाः पुष्पाणि चिन्वन्ति।	बालैः पुष्पाणि चीयन्ते।
भवान् ग्रामं गच्छतु।	भवता ग्रामः गम्यताम्।
यूयं कार्यम् अकार्ष्ट।	युष्माभिः कार्यम् अकारि।
ते देवान् यजेयुः।	तैः देवाः इज्येरन्।
वयं युवां द्रक्ष्यामः।	अस्माभिः युवां द्रक्ष्येथे।
आवां युष्मान् रक्षेव।	आवाभ्यां यूयं रक्षेध्वम्।
त्वं मां परिचिनु	त्वया अहं परिचीयै।
भवन्तः आवाम् अजानन्।	भवद्भिः आवाम् अज्ञायावहि।
तौ अस्मान् अस्तौष्टाम्।	ताभ्यां वयम् अस्ताविष्महि।

पाठगत प्रश्न 27.2

1. विभाषा चिण्णमुलोः इस सूत्र का क्या अर्थ है?
2. णिजन्त शम् धातु से लुट् लकार प्रथमपुरुष एकवचन में कितने रूप होते हैं और वे कौन से हैं?
3. आतो युक्चिण्कृतोः इस सूत्र से किसका विधान किया जाता है?
4. दा धातु से लुट् लकार प्रथमपुरुष एकवचन में कितने रूप होते हैं और वे कौन से है?
5. नोदात्तोपदेशस्य मान्तस्यानाचामेः इस सूत्र से क्या किया जाता है?
6. तपोऽनुतापे च इसका उदाहरण कौन सा है?
7. तन्धातु से कर्म में लट् लकार प्रथमपुरुष एकवचन में कितने रूप होते हैं और वे कौन से है?
8. भञ्ज् धातु से कर्म में लुङ् लकार प्रथमपुरुष एकवचन मे कितने रूप होते है और वे कौन से है?

पाठ का सार

लः कर्मणि च भावे चाकर्मकेभ्यः इस सूत्र से कर्ता, कर्म और भाव ये तीन लकार अर्थ कह गये है। यहाँ तो विशेष है कि अकर्मक धातुओं से कर्ता और भाव में लकार होते हैं। सकर्मक धातुओं से तो कर्ता और कर्म में। भाव, क्रिया, व्यापार, भावना, उत्पादना ये पर्याय शब्द है। वस्तुतः भाव धातु का ही अर्थ है अतः लकार से अनुवाद मात्र किया जाता है। भाव अमूर्त पदार्थ है। अतः उसमें लिङ्गसंख्या का अन्वय नहीं होता है इस कारण से पदसाधुत्वार्थमेव एकवचनमुत्सर्गतः करिष्यते इस न्याय से प्रथमपुरुष एकवचनान्त रूप ही प्रत्येक लकार में होता है, यह सम्यक् रूप से समझना चाहिए।। कर्म में लकार में तो सभी पुरुष और सभी वचन होते हैं यह विशेष है। और अन्त में द्विकर्मक धातु के विषय में चर्चा की गई है। द्विकर्मक धातु के स्थल पर कैसे वाच्य परिवर्तन होता है, इस विषय में बहुत उदाहरण प्रदर्शित किए गए हैं। और अन्त में अनेक वाक्यों में भाव अथवा कर्म में वाच्य परिवर्तन दर्शाये गए हैं। उनका अभ्यास करना चाहिए।

पाठांत प्रश्न

1. भावकर्मणोः इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
2. भाव में लकार होने पर किस प्रकार वचन और पुरुष होते हैं यह व्याख्या कीजिए।

3. कर्म में लकार होने पर किस प्रकार वचनपुरुष होते हैं यह व्याख्या कीजिए।
4. चिण्णमुलोर्दीर्घोऽन्यतरस्याम् इस सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
5. भूयते इस रूप को सिद्ध कीजिए।
6. स्यसिच्सीयुट्-आदि सूत्र को पूरा करके व्याख्या कीजिए।
7. भावार्थक लकार और कर्मार्थक लकार में से विशेष कौन सा है यह विवेचन कीजिए।
8. भूयते यहाँ प्रथमपुरुष एकवचन ही किसलिए होता है यह इति स्पष्ट कीजिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

27.1

1. भाव और कर्ता अर्थ में।
2. कर्म और कर्ता अर्थ में।
3. आत्मनेपद।
4. भावकर्मणोः।
5. भावकर्मवाचक त शब्द परे रहते च्लि के स्थान पर चिण् आदेश होता है।
6. अभावि।
7. चार।
8. असाधु।
9. साधु।
10. प्रथमपुरुष एकवचन ही होता है।
11. हाँ, सकर्मक है।
12. स्यासिच्सीयुट्तासिषु भावकर्मणोरुपदेशेज्झनग्रहदृशां वा चिण्वदिट् च।

27.2

1. चिण् परे होने पर अथवा णमुल् परे होने पर लभ् धातु से विकल्प से नुम् आगम होता है।

2. रूपत्रय। शामिता, शमिता, शमयिता।

3. युगागम होता है।

4. रूपद्वय। दाता, दायिता।

5. उपधावृद्धि का निषेध।

6. अन्वतप्त पापेन।

7. रूपद्वय। तायते, तन्यते।

8. रूपद्वय। अभाजि, अभञ्जि।

॥ सताइसवां पाठ समाप्त॥

28

अपत्याधिकार प्रकरण

'तद्धिता:' इसके अधिकार में जो प्रत्यय आते हैं, उन प्रत्ययों क तद्धित नाम प्रख्यात होता है और भी हितभवादि विविध अर्थों में तद्धित प्रत्यय प्रयोग किए जाते हैं। अभी अपत्य अर्थ में विद्यमान तद्धित प्रत्ययों का विवरण करते हैं। अत एव इस प्रकरण का नाम अपत्याधिकार प्रकरण है। इस प्रकरण में न केवल अपत्य अर्थ में प्रत्यय होता है, अपितु हितभवादि अर्थ मंत भी प्रत्यय होते हैं। इस प्रकरण में अधिक रूप से अपत्य अर्थ में तद्धित प्रत्ययों के विधान से अपत्याधिकार प्रकरण यह नाम है। यहाँ तद्धिता: समर्थानां प्रथमाद्वा प्रत्यय: परश्च ये अधिकार सूत्र प्रत्यय विधायक सूत्र में आते हैं। अपत्यार्थ में विद्यमान तद्धित प्रत्यय का उदाहरण का गर्गस्य अपत्यं पुमान् यह लौकिक विग्रह होने पर अपत्य अर्थ में यञ्प्रत्यय होने पर प्रक्रिया कार्य में गार्ग्य: यह रूप हुआ। और भी पुंसु भव: यह लौकिक विग्रह करने पर अपत्य भिन्न भव अर्थ में स्नञ्प्रत्यय करने पर प्रक्रिया कार्य में पौंस्न: यह रूप हुआ। अपत्यार्थ में विहित अण्, अञ्, इञ्, ठक्, फक्, ये प्रत्यय 'तद्धिता:' के अधिकार आते है:। और पुन: अपत्य अर्थ में प्रत्यय होते हैं, अत: हेतु से अपत्यार्थिक प्रत्यय कहते हैं।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप सक्षम होंगे :

- अपत्य अर्थ में विद्यमान प्रत्ययों को जान पाने में;
- अपत्यार्थभिन्न भवहितादि अर्थ में विद्यमान प्रत्ययों को भी जान पाने में;
- अपत्याधिकार में विद्यमान सूत्रों को जानने में योग्य होगें। लौकिक विग्रह और अलौलिक विग्रह को जान पाने में;

- अपत्याधिकार में विद्यमान सूत्रों के उदाहरण जान पाने में;
- तद्धित प्रत्यय के प्रयोग विषय को ज्ञात कर पाने में;
- अनुवृत्ति माध्यम से सूत्रार्थ कैसे होता है, यह स्पष्ट ज्ञान प्राप्त कर पाने में।

28.1 स्त्रीपुंसाभ्यां नञ्स्नञौ भवनात् (५.१.८७)

सूत्रार्थ – धान्यानां भवने क्षेत्रे खञ् इससे पूर्व अर्थ में स्त्री और पुंस शब्दों से क्रमशः तद्धित संज्ञक नञ् और स्नञ् प्रत्यय हो यह सूत्र का सामान्य अर्थ है।

सूत्रव्याख्या – यह अधिकार सूत्र है। इस सूत्र में तीन पद है। स्त्री च पुमान् स्त्रीपुंसौ, ताभ्यां स्त्रीपुंसाभ्याम् यहाँ इतरेतर योग द्वन्द्व समास है। स्त्रीपुंसाभ्यां यह पञ्चमी द्विवचन का रूप है। नञ् च स्नञ् च इति नञ्स्नञौ यहाँ इतरेतर द्वन्द्व समास है। स्त्रीपुंसाभ्याम् यह प्रथमाद्विवचनान्त पद है। भवनात् यह पञ्चमी एकवचनान्त पद है।

प्राग्दीव्यतोऽण् यहाँ से प्राग् की अनुवृत्ति होती है। प्रत्ययः, परश्च ङ्याप्रातिपदिकात्, तद्धिताः, समर्थानां प्रथम द्वितीय ये अधिकार सूत्र आते हैं। यह अधिकार सूत्र है। अतः भवनात् यह पद तो अवधि के लिए स्वीकार किया गया है। अतः सूत्रार्थ होता है – धान्यानां भवने क्षेत्रे खञ् इससे पूर्व अर्थों में स्त्री और पुंस शब्दों से क्रमशः तद्धित संज्ञक नञ् और स्नञ् प्रत्यय हो सूत्र का सामान्य अर्थ है।

उदाहरण –

स्त्रीषु भवः स्त्रिया अपत्यम्। स्त्रीणां समूहः स्त्रीभ्यः आगतः स्त्रीभ्यो हितः यह लौकिक विग्रह होने पर स्त्री ङस् यह अलौकिक विग्रह है। वहाँ भवहितापत्यादि अर्थों में स्त्रीपुंसाभ्यां नञ्स्नञौ भवनात् इस अधिकार सूत्र से तस्यापत्यम् इत्यादि उस सूत्र से नञ् प्रत्यय होने पर अनुबन्ध लोप होने पर स्त्री ङस् न यह स्थिति होती है। अय समुदाय तद्धितान्त है। अतः कृत्तद्धितसमासाश्च इस सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा होती है। तत्पश्चात् 'सुपो प्रातिपदिकयोः' इस सूत्र से सुप् का लोप होने पर स्त्री न यह स्थिति हाती है। तत्पश्चात् तद्धितेष्वचामादेः इस सूत्र से स्त्री शब्द के आदि अच् ईकार की वृद्धि ऐकार होने पर 'स्त्रै न' होता है। इसके पश्चात् अटकुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि इस सूत्र से णत्व होता है। तत्पश्चात् एकादेश विकृतमनन्यवत् इस सूत्र से प्रतिपादक संज्ञा होती है। तत्पश्चात् विभक्ति कार्य करने पर 'स्त्रैणः' यह रूप बनता है।

इस प्रकार ही पुंसोऽपत्यम् पुंसु भवः पुंसां समूहः पुंभ्यः आगतः, पुंभ्यो हितः यह विग्रह होने पर भवहितापत्यादि अर्थों में स्त्रीपुंसाभ्यां नञ्स्नञौ भवनात् इस अधिकार सूत्र से तस्यापत्यम् इत्यादि से तत् सूत्र से स्नञ् प्रत्यय होने पर पुंस ङस् स्न होता है। स्नञ् प्रत्यय की तद्धितान्त होने से प्रातिपदिक संज्ञा होती तत्पश्चात् सुप् लोप होने और आदिवृद्धि होने पर पौंस स्न यह स्थिति होती है। इसके पश्चात् 'संयोगान्तस्य लोपः' इस पदान्त संकर के लोप होने पर पौं स्न यह स्थिति होती है। तत्पश्चात् विभक्ति कार्य होने पर निमित्तापाये नैमित्तिकस्यापायः इस परिभाषा के अनुसार अनुस्वार का मकार

टिप्पणियाँ

होता है। तत्पश्चात् नश्चापदान्तस्य झलि इस सूत्र से पुनः मकार के अनुस्वार में विभक्ति कार्य होने पर पौंस्नः यह रूप होता है।

28.2 तस्याऽपत्यम् (४.२.९२)

सूत्रार्थ – षष्ठ्यन्त कृतसन्धि समर्थ पद से अपत्य अर्थ में पूर्वोक्त और आगे कहे जाने वाले प्रत्यय हो।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में दो पद है। तस्य यह पञ्चम्यन्त पद है। तस्य यहाँ षष्ठ्यन्त शब्द से पञ्चमी आयी है उसका पञ्चम्याः सूत्र से अदर्शन होता है। अपत्यम् यह सप्तम्यन्त पद है। यहाँ भी अपत्यम् इस शब्द से सप्तमी आयी है। उसका भी 'सप्तम्याः' सूत्र से अदर्शन होता है। अर्थात् सूत्र में विभक्तियों का लोप और विपरिणाम हुआ है। अतः प्रकृत सूत्र में सौत्रत्व होने से पञ्चमी और सप्तमी का लुक् होता है, दूसरे ग्रन्थों में।

तद्धित की उत्पत्ति सुबन्त से होती है। अतः समर्थः पदविधिः इस परिभाषा से समर्थात् यह पद प्राप्त होता है। प्राग्दीव्यतोऽण् इससे अण् की अनुवृत्ति होती है। प्रत्ययः परश्च ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः ,समर्थानां प्रथम द्वितीय ये अधिकार सूत्र आते हैं। पुनः प्रकृत सूत्र में तस्य, अपत्यं यह पद स्वरूप बोधक नहीं है, अपितु अर्थबोधक है। अतः सूत्रार्थ होता हैं – षष्ठ्यन्त कृतसन्धि समर्थ पद से अपत्यार्थ में पूर्वोक्त और आगे कहे जाने वाले प्रत्यय हो।

उदाहरण – उपगोः अपत्यम् यह लौकिक विग्रह है। उपगु ङस् यह अलौकिक विग्रह है। तस्यापत्यम् इस सूत्र से अपत्य अर्थ में प्राग्दीव्यतोऽण् इस सूत्र से अण् प्रत्यय का विधान होता है। अनुबन्ध लोप करने पर 'उपगु ङस् अ यह स्थिति होती है। यह समुदाय तद्धितान्त है। अतः उसकी प्रातिपदिक संज्ञा होती है। सुप्लोप होने पर उपगु अ यह स्थिति होने पर तद्धितेष्वचामादेः इस सूत्र से आदि वृद्धि होती है। तब औपगु + अ यह स्थिति होती है –

28.3 ओर्गुणः (६.४.१४६)

सूत्रार्थ – उवर्णान्त भसंज्ञक अङ्ग को गुण हो तद्धित परे।

व्याख्या – यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में दो पद है। ओः यह षष्ठ्यन्त पद है। गुण यह प्रथमान्त पद है। भस्य, अङ्गस्य ये दोनों अधिकार सूत्र आये हैं। नस्तद्धिते इस सूत्र से 'तद्धिते' इसकी अनुवृत्ति हुई है। ओः यह उवर्ण की षष्ठी एकवचन का रूप है। ओः यह भसंज्ञक औ अङ्ग को विशेषण होने से येन विधिस्तदन्तस्य इस सूत्र से विशेषण उवर्ण का तदन्त विधि में उवर्णान्त का यह अर्थ प्राप्त होता है। अतः सूत्रार्थ होता है –

उदाहरण – औपगु + अ यह स्थिति होने पर यचिभम् इस सूत्र से औपगु इसकी भसंज्ञा है। और पुनः उपगु शब्द से प्रत्यय विधान होने से उपगु इसकी अङ्ग संज्ञा भी होती है। और अण् यह प्रत्यय 'तद्धिताः' के अधिकार में विद्यमान होने से अण् की तद्धितसंज्ञा होती है। अतः ओर्गुणः इस सूत्र से 'औपगु अ' यहाँ तद्धित संज्ञा विशिष्ट होने पर अण् प्रत्यय परे रहते अङ्गसंज्ञा विशिष्ट

भसंज्ञक के उवर्णान्त का गुण ओकार होता है। तब औपगो अ यह स्थिति हुई। तत्पश्चात् एचोऽयवायावः इस सूत्र से ओकार का अवादेश प्रकिया कार्य होने पर 'औपगवः' यह रूप हुआ।

28.4 अपत्यं पौत्रप्रभृति गोत्रम् (४.१.१६२)

सूत्र-अर्थ – पौत्रादि को अपत्य कहना इष्ट हो तब उनकी गोत्र संज्ञा होती है।

सूत्रव्याख्या – यह संज्ञा सूत्र है। इस सूत्र में तीन पद है। सभी पद प्रथमान्त है। इस सूत्र का अर्थ होता है – अपत्य विवक्षित होने से पौत्रादि की गोत्र संज्ञा हो। 'तस्यापत्यम्' इससे अपत्य विद्यमान होने पर पुनः पौत्रादि का अपत्य विवक्षा में अपत्य ग्रहण है गोत्रत्व अर्थ बोध के लिए ही है। यदि पौत्रादि की पौत्रत्वादि की विवक्षा नहीं होती अर्थात् यदि पौत्र प्रपौत्र आदि की अपत्य रूप से विवक्षा होती है तो पौत्र – प्रपौत्रादि की गोत्र संज्ञा होती है।

28.5 एको गोत्रे (४.१.९३)

सूत्र-अर्थ – गोत्र अर्थ में एक ही अपत्य प्रत्यय हो।

सूत्रव्याख्या – यह संज्ञा सूत्र है। इस सूत्र में दो पद है। पद प्रथमान्त है। गोत्रे यह सप्तम्यन्त है।

अपत्याधिकार और प्रत्ययाधिकार के सामर्थ्य से अपत्यप्रत्यय आता है। ङ्यप्प्रातिपदिकात् ,प्रत्ययः,परश्च ये अधिकार सूत्र आते हैं। यहाँ एकः इस कथन से अन्य संख्या के व्यवच्छेद होने से एक ही नियम प्राप्त होता है। अतः सूत्रार्थ होता है – गौत्र अर्थ में एक ही अपत्य प्रत्यय हो।

उदाहरण – उपगोः अपत्यम् औपगवः, तस्य औपगवस्य अपि अपत्यम् उस औपगव का भी अपत्य औपगवः, उसका भी अपत्य औपगवः इसी प्रकार आगे भी। अर्थात् मूलपुरुष से किया गया अपत्य प्रत्यय गोत्रत्व विवक्षित सभी पौत्रप्रपौत्रादि का बोधक है। प्रत्येक वंश में तो नवीन प्रत्यय नहीं 'होता है' इस प्रकार यथा उपगोः अपत्यम् औपगवः।

जैसे उपगोः का अपत्य औपगवः है वैसे औपगव का भी अपत्य औपगवः ही है।

पाठगत प्रश्न 28.1

1. नञ्प्रत्यय विधायक सूत्र कौन सा है?
2. स्त्रीपुंसाभ्याम् यहाँ कौन सा समास है?
3. 'तस्यापत्यम्' इस सूत्र का अर्थ क्या है?
4. गोत्रसंज्ञाविधायक सूत्र कौन सा है?
5. ओर्गुणः यह सूत्र क्या विधान करता है?
6. एको गोत्रे इस सूत्र का अर्थ क्या है?

टिप्पणियाँ

28.6 गर्गादिभ्यो यञ् (४.१.१०५)

सूत्रार्थ – गर्गादि गण में पठित शब्दों से गोत्रापत्य अर्थ में तद्धितसंज्ञक यञ् प्रत्यय हो।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र है। इस सूत्र में दो पद है। गर्ग शब्द जिनके आरम्भ में है (गर्गशब्दः आदिर्येषां ते गर्गादयः) पञ्चमी में गर्गादिभ्यः तद्गुणसंविज्ञानबहुव्रीहि समास है। गर्गादिभ्यः यह पञ्चम्यन्त पद है। यञ् यह प्रथमान्त है।

'गोत्रे कृञ्तादिभ्यश्चफञ्' यहाँ से 'गोत्रे' यह अनुवर्तित होता है। तस्यापत्यम् यहाँ से अपत्यम् यह अनुवर्तित होता है। उसका विभक्ति विपरिणाम होने पर अपत्ये यह प्राप्त होता है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः, समर्थानां प्रथम द्वितीय ये अधिकार सूत्र आते हैं। अतः सूत्रार्थ होता है – गर्गादि गण में पठित शब्दों से गोत्रापत्य अर्थ में तद्धितसंज्ञक यञ् प्रत्यय हो।

उदाहरण – 'गर्गस्य गोत्रापत्यम्' यह लौकिक विग्रह होने पर गर्ग + ङस् यह अलौकिक विग्रह है। गर्ग शब्द गर्गादि गण में पठित है। अतः गर्गादिभ्यो यञ् सूत्र से यञ् प्रत्यय का विधान होता है। तत्पश्चात् अनुबन्धलोप होने पर गर्ग ङस् य यह स्थिति होती है। यह समुदाय तद्धितान्त है। अतः कृतद्धितसमासाश्च इस सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा होती है। इसके बाद सुपो धातुप्रातिपदिकयोः सूत्र से सुप् का लोप होत है। उसके बाद तद्धितेष्वचामादेः सूत्र से गर्ग इस समुदाय के आदि अकार की वृद्धि होने पर गार्ग य यह स्थिति होती है। तत्पश्चात् यस्येति च सूत्र से गकारोत्तरवर्ती अकार का लोप होकर विभक्ति कार्य होने पर गार्ग्यः यह रूप हुआ। इसी प्रकार की वत्सस्य गोत्रापत्यं वात्स्यः इत्यादि।

28.7 यञञोश्च (२.४.६४)

गोत्र अर्थ में जो यञन्त और अञन्त है उनके अवयव (यञ् और अञ्) का लोप हो, यदि उन्हीं के अर्थ अर्थात् (अर्थात् गोत्र का) बहुत्व विवक्षित हो, किन्तु स्त्रीलिङ्ग में नहीं होता।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में दो पद हैं। यञ् च अञ् च यञञौ, तयोः यञयोः यह इतरतरयोग द्वन्द्व है। यञञोः यह षष्ठ्यन्त है। च यह अव्यय पद है।

ण्यक्षत्रियार्षञितो यूनि लुगणिञोः यहाँ से लुक्, यस्कादिभ्यो गोत्रे यहाँ से गोत्रे तद्राजस्य बहुषु तेनैवाऽस्त्रियाम् यहाँ से बहुषु तेन, एव अस्त्रियाम् इन पदों की अनुवृत्ति होती है। अतः सूत्रार्थ होता है – गोत्र अर्थ में जो यञन्तं और अञन्त है उनके अवयव (यञ्, और अञ्) का लोप हो यदि उन्हीं के अर्थ (अर्थात् गोत्र का) बहुत्व विवक्षित हो, किन्तु स्त्रीलिङ्ग में नहीं होता।

उदाहरण – गर्गस्य गोत्रापत्यम् यह विग्रह है। तत्पश्चात् प्रकृतसूत्र से यञ् प्रत्यय करने पर गर्ग + यञ् स्थिति है। और यह यञन्त है, बहुत्वविशिष्ट है, और स्त्रीलिङ्ग भिन्न है अतः गोत्र में जो यञन्त है उसके अवयव का लोप होने पर प्रक्रिया कार्य में गार्गाः यह रूप हुआ।

28.8 जीवति तु वंश्ये युवा (४.१.१६३)

अर्थ – वंश में पितृ आदि के जीवित रहने पर पौत्रादि के अपत्य हो चौथी पीढ़ी में, उसकी युव संज्ञा हो।

सूत्रव्याख्या – यह सूत्र संज्ञासूत्र है। इस सूत्र में चार पद है। जीवति यह सप्तमी एकवचनान्त है। तु यह अव्यय पद है। वंश्ये यह सप्तमी एकवचनान्त है। युवा यह प्रथमान्त है। अपत्यं पौत्रप्रभृति गोत्रम् यहाँ से पौत्रप्रभृति तस्याऽपत्यम् यहाँ से अपत्यम् इन दो पदों की अनवृत्ति होती है। वंश में उत्पन्न हुए वंश्य अर्थात् पिता, पितामह आदि। अतः सूत्रार्थ होता है – वंश में हुए पिता, पितामह के जीवित रहते जो पौत्र आदि का अपत्य हो चौथी पीढ़ी आदि में, उसकी युव संज्ञा हो।

उदाहरण – मूलपुरुष वंश प्रवर्तक प्रथम है। मूलपुरुष का पुत्र द्वितीय है। मूलपुरुष का पौत्र तृतीय है, मूलपुरुष का प्रपौत्र चतुर्थ है। यदि पिता, पितामह और प्रपितामह के जीवित होने पर चतुर्थादि (प्रपौत्र) की युवसंज्ञा होती है। यह संज्ञा गोत्र संज्ञा का अपवाद है।

28.9 गोत्राद्यून्यस्त्रियाम् (४.१.९४)

सूत्रार्थ – युवापत्य में गोत्र प्रत्ययान्त से ही प्रत्यय हो, स्त्रीलिङ्ग में तो युव संज्ञा न हो।

सूत्रव्याख्या – यह नियम सूत्र है। इस सूत्र में तीन पद है। गोत्रात् यह पञ्चमी एकवचनान्त है। यूनि यह सप्तमी एकवचनान्त है। अस्त्रियाम् यह सप्तमी एकवचनान्त है।

युवा अपत्य अर्थ में प्रत्यय होता है, वह गोत्र प्रत्ययान्त से ही होता न कि मूल प्रकृति से। अतः सूत्रार्थ होता है – युवाऽपत्य अर्थ में गोत्र प्रत्ययान्त से ही प्रत्यय हो, स्त्रीलिङ्ग में युवाऽपत्य संज्ञा न होती।

उदाहरण – उपगोः अपत्यम् यहाँ तस्यापत्यम् इस सूत्र से औत्सर्गिक अण् प्रत्यय होने पर औपगवः यह हुआ। तब युवापत्य अर्थ में अत इञि इससे इञ् प्रत्यय होने, अनुबन्ध लोप और प्रक्रिया कार्य होने पर औपगविः यह रूप हुआ।

28.10 यञिञोश्च (४.१.१०१)

सूत्रार्थ – गोत्र अर्थ में जो यञ् और इञ् प्रत्यय है, तदन्त शब्द से फक् प्रत्यय से युवापत्य अर्थ में।

उदाहरण – गर्गस्य गोत्रापत्यम् यह लौकिक विग्रह है। उसके बाद गर्ग ङस् यह स्थिति होने पर पहले गर्गादिभ्यो यञ् इस सूत्र से गोत्रापत्य में यञ् करने पर गार्ग्यः यह बना। तत्पश्चात् गोत्राद यून्यस्त्रियाम् इस नियम से युवापत्य अर्थ में यञिञोश्च सूत्र से फक् प्रत्यय का विधान होता है।

तब अनुबन्ध लोप होने तद्धितान्तत्व से प्रातिपदिक संज्ञा होने पर सुब्लोप होने पर 'आयनेयीनीयिय:फढखछघां प्रत्ययादीनाम् इस सूत्र से फकार के स्थान पर आयनादेश होता है।

टिप्पणियाँ

तब गार्ग्य + आयन यह स्थिति होने पर यस्येति च से अकार लोप होने पर अट्कुप्वा. सूत्र से णत्व होकर विभक्ति कार्य होने पर 'गार्ग्यायणः' यह रूप हुआ।

28.11 अत इञ् (४.१.९५)

सूत्रार्थ – जो प्रातिपदिक अदन्त है, उसकी इञ् हो अपत्य अथ में।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र है। इस सूत्र में दो पद है। अतः यह पञ्चम्यन्त पद है, इञ् यह प्रथमान्त पद है।

तस्याऽपत्यम् यह सम्पूर्ण सूत्र अनुवर्तित होता है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः, समर्थानां प्रथम द्वितीय ये अधिकार सूत्र आते है। अतः यह प्रातिपदिक का विशेषण है। अतः विशेषण का येन विधिस्तदन्तस्य सूत्र से तदन्त विधि से अदन्तात् (अदन्त से) प्राप्त होता है। अतः सूत्रार्थ है – जो प्रातिपदिक अदन्त है, उसकी षष्ठ्यन्त प्रकृति से इञ् हो, अपत्यार्थ में।

उदाहरण – दक्षस्य अपत्यं पुमान् यह लौकिक विग्रह है। दक्ष ङस् यह स्थिति होने पर दक्ष यह अदन्त प्रातिपदिक है। अतः अपत्य अर्थ में अत इञ् सूत्र से इञ् प्रत्यय होता है। तत्पश्चात् अनुबन्ध लोप होने पर तद्धितत्व से प्रातिपदिक संज्ञा होने सुब्लोप पर दक्ष + इ यह स्थिति होती है। तब दक्ष यहाँ दकारोत्तरवर्ती अकार की आदिवृद्धि और षकारोत्तर अकार का लोप होता है। तब विभक्ति कार्य करने पर दाक्षि यह रूप हुआ।

28.12 बह्वादादिभ्यश्च (४.१.९६)

सूत्रार्थ – बह्वादि गण में पठित शब्दों से अपत्य अर्थ में इञ् प्रत्यय होता है।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र है। इस सूत्र में पद द्वय है। बाहुशब्दः आदिः येषां ते बाह्वादयः तेभ्यः बाह्वादिभ्यः इस प्रकार तद्गुणसंविज्ञानबहुव्रीहि समास हुआ। बाह्वादिभ्यः यह पञ्चम्यन्त है। चेति यह अव्ययपद है।

अत इञ् यहाँ से इञ् की अनुवृत्ति होती है। तस्याऽपत्यम् इस सम्पूर्ण सूत्र की अनुवृत्ति होती है। परश्च, प्रत्ययः, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः, ये अधिकार सूत्र आते है। अतः सूत्रार्थ होता है – बाह्वादि गण में पठित शब्दों से अपत्य अर्थ में इञ् प्रत्यय होता है।

उदाहरण – बाहोः अपत्यम् यह लौकिक विग्रह है। उसके बाद बाहु ङस् इस स्थिति में बाहु शब्द का बाह्वादिगण में पाठ है। अतः अपत्य अर्थ में बाह्वादिभ्यश्च इस सूत्र से इञ् प्रत्यय होकर अनुबन्ध लोप होने पर बाहु ङस् इ यह स्थिति हुई। यह समुदाय तद्धितान्त है। उसके बाद प्रातिपदिक संज्ञा होकर सुप् का लोप होने पर बाहु + इ यह स्थिति होती है। तब बाहु यहां बकारोत्तर अकार की आदिवृद्धि होती है। तब ओर्गुणः सूत्र से उकार का गुण ओकार होता है। तत्पश्चात् 'एचोऽयवायावः' सूत्र से अवादेश होने व विभक्ति कार्य होने पर बाहविः यह रूप होता है। इस प्रकार औडुलोमिः यहाँ भी इञ् प्रत्यय होने पर प्रक्रिया कार्य में रूप होते हैं।

पाठगत प्रश्न 28.2

1. गर्गादि से कौन सा प्रत्यय होता है?
2. यञञोश्च इस सूत्र का अर्थ क्या है?
3. युवसंज्ञाविधायक सूत्र कौन सा है?
4. फक्-प्रत्यय विधायक सूत्र कौन सा है?
5. दाक्षिः यहा कौन सा प्रत्यय है?
6. बह्वादि से कौन सा प्रत्यय होता है?

28.13 शिवादिभ्योऽण्

सूत्र अर्थ – शिवादिगण में पठित प्रातिपदिकों से अपत्य में अण् प्रत्यय हो।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र है। इस सूत्र में दो पद है। शिव शब्दः आदिः येषां ते शिवादयः, तेभ्यः शिवादिभ्यः यहाँ तद्गुणसंविज्ञानबहुव्रीहि समास है। शिवादिभ्यः यह पञ्चम्यन्त है। अण् यह प्रथमान्त पद है।

तस्याऽपत्यम् यहाँ से अपत्यम् इसकी अनुवृत्ति होती है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः, समर्थानां प्रथम द्वितीय ये अधिकार सूत्र आते हैं। अतः सूत्रार्थ होता है – शिवादि गण में पठित प्रातिपदिकों से अपत्य अर्थ में अण प्रत्यय के उदाहरण – शिवस्य अपत्यम् यह लौकिक विग्रह है। शिव ङस् स्थिति में शिव का शिवादिगण में पाठ है। अतः अपत्य अर्थ में शिवादिभ्योऽण् सूत्र से अण् -प्रत्यय होकर अनुबन्धलोप होने पर शिव ङस् अ यह स्थिति हुई। यह समुदाय तद्धितान्त है। अतः प्रातिपदिक संज्ञा सुब्लोप होने पर शिव+अ यह स्थिति होती है। तब शिव यहाँ शकारोत्तर इकार की और वकारोत्तर अकार का लोप होता है। तब शैव् अ स्थिति होने पर विभक्ति कार्य होकर शैवः यह रूप बना। इसी प्रकार ही गाङ्गः यहाँ भी होता है।

28.14 ऋष्यन्धकवृष्णिकुरुभ्यश्च (४.१.११४)

सूत्रार्थ – ऋषि, अन्धक, वृष्णि और कुरु इनसे अपत्य अर्थ में अण् प्रत्यय हो।

व्याख्या – यह विधि सूत्र है। इस में दो पद है। ऋषयश्च, अन्धकाश्च, वृष्णश्च, कुरवश्च, ऋष्यन्ध, कवृष्णिकुरवः, तेभ्यः ऋष्यन्धकवृष्णिकुरुभ्यश्चः यहाँ इतरेतर द्वन्द्व समास है। ऋ. यह पञ्चम्यन्त है। च यह अव्यय पद है।

तस्याऽपत्यम् यह सम्पूर्ण सूत्र अनुवर्तित होता है। प्रत्ययः,परश्च,ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः, समर्थानां प्रथम द्वितीय ये अधिकार सूत्र आते हैं। अतः सूत्र का अर्थ होता है- ऋषि, अन्धक, वृष्णि और कुरु इनसे अपत्य अर्थ में अण् प्रत्यय हो।

टिप्पणियाँ

उदाहरण – वसिष्ठस्य अपत्यम् यह लौकिक विग्रह है। वसिष्ठ ङस् स्थिति में वसिष्ठ यह ऋषिवाचक प्रतिपादक है। अतः अपत्य अर्थ में ऋ. सूत्र से अण् प्रत्यय होने पर अनुबन्ध लोप् करने पर वसिष्ठ ङस् अ यह स्थिति होती है। यह समुदाय तद्धितान्त है। अतः समुदाय की प्रातिपदिक संज्ञा व सुब्लोप होने पर वसिष्ठ अ यह स्थिति हुई। तब वसिष्ठ के वकारोत्तर अकार की वृद्धि में आकार होता है। तत्पश्चात् वसिष्ठ के ठकारोत्तर अकार का लोप होकर विभक्ति कार्य और वर्णमेलन होने पर वासिष्ठः यह रूप बना।

इस प्रकार ही इस सूत्र से अधिक वंश में श्वफल्क का, वृषिण वंश में वासुदेव का, कुरुवंश में नकुल का अन्तर्भाव होता है। अतः इन प्रतिपदिकों से अपत्य अर्थ में ऋष्य. सूत्र से अण् प्रत्यय होता है। उसके बाद प्रक्रिया कार्य होने पर श्वफल्कः, वासुदेवः, नकुलः इत्यादि रूप सिद्ध होते है।

28.15 स्त्रीभ्यो ढक् (४.१.१२०)

सूत्रार्थ – स्त्रीप्रत्ययान्त से अपत्य अर्थ में ढक् प्रत्यय हो।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र है। इस सूत्र में दो पद है। स्त्रीभ्यः, यह पञ्चम्यन्त पद है। ढक् यह प्रथमान्त पद है।

तस्याऽपत्यम् यहाँ से 'अपत्यम्' की अनुवृत्ति होती है। उसका विभक्ति परिणाम होने से अपत्ये यह रूप है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः ये अधिकार सूत्र आते हैं। स्त्रीभ्यः इससे 'टाप्', ङीप्, इत्यादि ग्रहण इष्ट है। प्रत्यय ग्रहण होने पर तदन्ताः ग्राह्याः इस परिभाषा से स्त्रीप्रत्ययान्तों की प्राप्ति होती है। अतः सूत्रार्थ होता है – स्त्री प्रत्ययान्त शब्दों से अपत्य अर्थ में ढक् प्रत्यय हो।

उदाहरण – विनतायाः अपत्यम् यह लौकिक विग्रह है। विनता ङस् इस स्थिति में विनता यह टाप् प्रत्ययान्त है। अतः अपत्य अर्थ में स्त्रीभ्यो ढक् इस सूत्र से ढक् – प्रत्यय होता है। तत्पश्चात् अनुबन्ध लोप करने पर प्रातिपदिक संज्ञा और सुब्लोप होता है। तब विनता ढ इस स्थिति में किति च इस सूत्र से आदि वृद्धि होती है। उसके बाद 'आयनेयीनीयियः फढखछघां प्रत्ययादीनाम् इस सूत्र से ढकार का एयादेश होता है। उसके बाद यस्येति च इस सूत्र से आकार का लोप होने और विभक्ति कार्य होने पर वैनतेयः यह रुप बनता है।

28.16 कन्यायाः कनीन च (४.१.११६)

सूत्रार्थ – कन्या शब्द से अपत्य अर्थ में कनीन आदेश हो और प्रकृति से अण् हो।

सूत्रव्याख्या – इय विधिसूत्र है। इस सूत्र में तीन पद है। कन्यायाः यह षष्ठ्यन्त है कनीन यह लुप्त प्रथमान्त है। च यह अव्ययपद है।

इस सूत्र में शिवादिभ्योऽण् यहाँ से अण् की अनुवृत्ति होती है। तस्यापत्यम् यह सम्पूर्ण सूत्र अनुवर्तित होता है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः, ये अधिकार सूत्र आते है। अतः सूत्र का अर्थ होता है– कन्या शब्द से अपत्य अर्थ में कनीन आदेश हो और प्रकृति से अण् हो।

उदाहरण – कन्यायाः अपत्यम् यह लौकिक विग्रह है। 'कन्या ङस्' इस स्थिति में अपत्य अर्थ में कन्यायाः कनीन च इस सूत्र से कन्या प्रकृति को कनीनादेश और अण् प्रत्यय होता है। तत्पश्चात् अनुबन्ध लोप होने पर कनीन + अ यह स्थिति होती है। यह समुदाय तद्धितान्त है। अतः प्रातिपदिक संज्ञा एवं सुप् का लोप होता है। तत्पश्चात् आदिवृद्धि अकार लोप होकर विभक्ति कार्य होने पर कानीनः यह रूप बना।

28.17 राजश्वशुराद्यत् (४.१.१३७)

सूत्रार्थ – राजन् और श्वसुर प्रातिपदिक से अपत्य अर्थ में यत् प्रत्यय हो।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र है। इस सूत्र में दो पद हैं। राजा च श्वशुरश्च राजश्वशुरम् तस्मात् राजश्वशुरात् यह समाहारद्वन्द्व है। राजश्वशुरात् यह पञ्चम्यन्त पद है। यत् यह प्रथमान्त पद है।

तस्यापत्यम् यह सम्पूर्ण सूत्र अनुवर्तित होता है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः, ये अधिकार सूत्र आते है। अतः सूत्रार्थ होता है। – राजन् और श्वसुर प्रातिपदिक से अपत्य अर्थ में यत् प्रत्यय हो। यहाँ राज्ञो जातावितेि वाच्यम् यह वार्तिक है। अर्थात् राजन् प्रतिपादिक से जाति वाच्य होने पर ही यत् होता है।

28.18 ये चाऽभावकर्मणः (६.४.१३८)

सूत्रार्थ – यकारादि तद्धित प्रत्यय परे रहते अन् को प्रकृतिभाव हो, परन्तु भाव और कर्म अर्थ में न हो।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र है। इस सूत्र में तीन पद है। ये यह सप्तम्यन्त पद है। य यह अव्यय पद है। भावश्च कर्म च भावकर्मणी तयोः भावकर्मणोः, न भावकर्मणोः यह द्वन्द्व गर्भ नञ् तत्पुरुष समास है। अभावकर्मणोः यह सप्तम्यन्त पद है।

अन् यह सम्पूर्ण सूत्र आपत्यस्य च तद्धितेऽनाति यहाँ से तद्धिते और प्रकृत्यैकाच् यहाँ से प्रकृत्या अनुवर्तित होते है। अङ्गस्य यह अधिकार में पढ़ा गया है। अतः प्रत्यये यह पद प्राप्त होता है। ये यह प्रत्यये इसका विशेषण है अतः इस विधि से यादि प्रत्यय परे रहते यह अर्थ प्राप्त होता है अतः सूत्रार्थ होता है –यकारादि तद्धित प्रत्यय परे रहते अन् को प्रकृतिभाव हो, परन्तु भाव और कर्म अर्थ में न हो।

उदाहरण – राज्ञः अपत्यम् जातिः यह लौकिक विग्रह है। राजन् ङस् स्थिति में अपत्य अर्थ में क्षत्रिय जाति वाच्य होने पर 'राजश्वशुराद्यत' सूत्र से यत् प्रत्यय होता है। तत्पश्चात् अनुबन्ध लोप करने पर यह समुदाय तद्धितान्त है। अतः प्रातिपदिक संज्ञा होने व सुप् लोप होने पर राजन् + य यह स्थिति होती है। तब यचिभम् इससे भ संज्ञा होती है। तत्पश्चात् नस्तद्धिते सूत्र से अन् के लोप की प्राप्ति होती है। तब ये चाऽभावकर्मणोः इस सूत्र से यादि तद्धित परे रहते अन् का प्रकृतिभाव होने से लोप नहीं होता है। तब वर्ण मेलन और विभक्ति कार्य होने पर राजन्यः यह रूप हुआ।

टिप्पणियाँ

29.19 क्षत्राद् घः (४.१.१२८)

क्षत्र शब्द से अपत्य अर्थ में **तद्धितसंज्ञक** घ प्रत्यय हो।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र है। इस सूत्र में दो पद हैं। क्षत्राद् यह पञ्चम्यन्त पद है। घः यह प्रथमान्त पद है।

तस्याऽपत्यम् यहाँ से अपत्यम् की अनुवृत्ति आती है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः, ये अधिकार सूत्र आते हैं। अतः सूत्रार्थ होता है – यहाँ भी क्षत्र प्रातिपदिक से जाति वाच्य होने पर ही घ प्रत्यय होता है, अन्यथा नहीं।

उदाहरण – क्षत्रस्य अपत्यं जातिः यह लौकिक विग्रह है। क्षत्र ङस् यह स्थिति में क्षत्रप्रातिपदिक का जाति में गम्यमान होने पर अपत्य अर्थ में क्षत्रात् घः सूत्र से प्रत्यय होता है। तत्पश्चात् क्षत्र ङस् घ इस स्थिति में तद्धितान्त होने से प्रातिपदिकसंज्ञा और सुप् का लोप होता है। तत्पश्चात् आयनेयीनीयियः फढखछघां प्रत्ययादीनाम् इस सूत्र से घकार को इ्यादेश होने पर क्षत्र इ्य यह स्थिति है। उसके बाद क्षत्र इसके ककारोत्तर अकार का लोप होता है। तब विभक्ति कार्य होने पर क्षत्रियः यह रूप बना।

पाठगत प्रश्न 28.3

1. शैवः यहाँ कौन सा प्रत्यय है?
2. वासिष्ठः यहाँ किस सूत्र से कौन सा प्रत्यय हुआ है?
3. स्त्री प्रत्ययान्त से कौन सा प्रत्यय होता है?
4. कन्या से कौन सा आदेश और कौन सा प्रत्यय होता है?
5. क्षत्र प्रातिपदिक से कौन सा प्रत्यय होता है?
6. ये चाभावकर्मणोः सूत्र का क्या अर्थ है?

28.20 रेवत्यादिभ्यष्ठक् (४.१.१४६)

सूत्रार्थ – रेवती आदि गण में पठित पातिपदिकों से अपत्य अर्थ में ठक् प्रत्यय हो।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में दो पद है। रेवतीशब्दः आदिः येषां ते रेवत्यादयः, तेभ्यः रेवत्यादिभ्यः यहाँ तद्गुणसंविज्ञानबहुव्रीहि समास है। रेवत्यादिभ्यः यह पञ्चम्यन्त है। ठक् यह प्रथमान्त है।

तस्याऽपत्यम् यह सम्पूर्ण सूत्र अनुवर्तित होता है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः ये अधिकार सूत्र आते हैं। यहा सूत्रार्थ होता है– रेवती आदि गण में पठित पातिपदिकों से अपत्य अर्थ में ठक् प्रत्यय हो।

उदाहरण – रेवत्याः अपत्यम् यह लौकिक विग्रह है। उसके बाद रेवती ङस् स्थिति में रेवती इसका रेवत्यादिगण में पाठ है। अतः रेवत्यादिभ्यष्ठक् सूत्र से अपत्य अर्थ में ठक् प्रत्यय होने पर अनुबन्ध लोप होने पर रेवती ङस् ठ यह स्थिति हुई। तत्पश्चात् प्रातिपदिक संज्ञा एवं सुब्लोप होने पर रेवती+ठ यह स्थिति हुई। तब –

28.21 ठस्येकः (७.३.५०)

सूत्रार्थ – अङ्ग से परे ठकार को इकादेश है।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र है इस सूत्र में दो पद है। ठस्य यह षष्ठ्यन्त पद है। इकः यह प्रथमान्त पद है। यहाँ अङ्गस्य इसको अधिकार है। अतः सूत्रार्थ होता है – अङ्ग से पर ठकार को इकादेश हो। इक यह आदेश अदन्त है। उदाहरण – रेवती ठ इस स्थिति में ठस्येकः इस सूत्र से ठ को इकादेश होता है। तत्पश्चात् रेवती + इक् स्थिति में किति च इससे आदिवृद्धिः होती है। तब रेवती के तकारोत्तरवर्ती ईकार की लोप होने पर विभक्ति कार्य होने पर रेवतिकः यह रूप बना।

28.22 जनपदशब्दात् क्षत्त्रियादञ् (४.१.१६१)

सूत्रार्थ – जनपद वाचक क्षत्रिय शब्द से अञ् हो, अपत्य अर्थ में।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में तीन पद है। जनपदवाचकः शब्दः जनपदशब्दः तस्मात् जनपदशब्दात् यह पञ्चम्यन्त है। क्षत्त्रियात् यह भी पञ्चम्यन्त है। अञ् यह प्रथमान्त पद है।

तस्याऽपत्यम् यहाँ से अपत्यम् की अनुवृत्ति होती है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः ये अधिकार सूत्र आते हैं। यह सूत्रार्थ होता है – उदाहरण – पञ्चालस्य अपत्यम् यह लौकिक विग्रह है। पञ्चाल ङस् इस स्थिति में जनपद शब्द से क्षत्रियादञ् इस सूत्र से अञ् प्रत्यय होता है। अनुबन्ध लोप होकर पञ्चाल ङस् अ इस स्थिति में प्रातिपदिक संज्ञा होकर सुब्लोप होता है। उसके पश्चात् पञ्चाल अ स्थिति में आदिवृद्धि और अकार का लोप होता है। तब विभक्ति कार्य होने पर पाञ्चालः यह रूप बना।

28.23 कुरुनादिभ्यो ण्यः (४.१.१७२)

सूत्रार्थ – जनपद क्षत्रिय वाचक कुरु शब्दों से और नकारादि शब्दों से अपत्य अर्थ मे ण्यः प्रत्यय हो।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में दो पद है। नकारः आदिर्येषां ते नादयः यह बहुव्रीहि समास है। कुरुश्च नादयश्च कुरुनादयः तेभ्यः कुरुनादिभ्यः यहाँ इतरेतरद्वन्द्व है। कुरुनादिभ्यः यह पञ्चम्यन्त है। ण्यः यह प्रथमान्त पद है।

तस्याऽपत्यम् यह सम्पूर्ण सूत्र अनुवर्तित होता है। जनपद शब्दात् क्षत्रियादञ् यहाँ से जनपद शब्दात् क्षत्रियात् यह पद अनुवर्तित होता है। प्रत्ययः परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः ये अधिकार सूत्र

टिप्पणियाँ

आते हैं। अत: सूत्रार्थ होता है – जनपद क्षत्रिय वाचक कुरु शब्दों से और नकारादि शब्दों से अपत्य अर्थ मे ण्य प्रत्यय हो।

उदाहरण – कुरो: अपत्यम् यह लौकिक विग्रह है। कुरु ङस् स्थिति में कुरु शब्द जनपद विशेष क्षत्रिय का वाचक है। अत: कुरुनादिभ्यो ण्य: इस सूत्र में अपत्य अर्थ में ण्य प्रत्यय होता है। तत्पश्चात् अनुबन्ध लोप होने पर प्रातिपदिक संज्ञा और सुप् का लोप होता है। उसके बाद कुरु + अ स्थिति में ओर्गुण: इस से उकार को गुण ओकार होता है। तब वान्तो यि प्रत्यये सूत्र से ओकार को अवादेश होता है। तत्पश्चात् आदिवृद्धि और विभक्ति कार्य होने पर 'कौरव्य:' यह रूप सिद्ध होता है। इस प्रकार नैषध्य: इत्यादि में उसी प्रकार होगा।

28.24 ते तद्राजा: (४.१.१७९)

सूत्रार्थ – जनपदशब्दात् क्षत्त्रियादञ् सूत्र से विहित अञादय प्रत्यय तद्-राज संज्ञक हो।

सूत्र व्याख्या– यह संज्ञा सूत्र है।इसमें दो पद है। ते यह प्रथमान्त पद है। तद्राज यह भी प्रथमान्त पद है। सूत्रार्थ – तत् शब्द से पूर्व का परामर्श होता है। अत: सूत्रार्थ होता है – जनपदशब्दात्क्षत्त्रियादञ् सूत्र से विहित प्रत्यय अञ्, अण्, ङ्यण्, ण्य ये चार तद्राज संज्ञक है। अष्टाध्यायी आदि में इत् भी तद्राजप्रत्यय प्राप्त होता है।

28.15 तद्राजस्य बहुषु तेनैवास्त्रियाम् (२.४.६२)

सूत्रार्थ – बहुत्व की विवक्षा में तद्-राज का लोप हो यदि बहुत्व तद् – राज के अर्थ का ही हो परन्तु स्त्री लिङ्ग में न हो।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र है। यहाँ पञ्च पद है। तद्राजस्य षष्ठ्यन्त है। बहुषु यह सप्तम्यन्त है। तेन यह तृतीयान्त है। एव यह अव्यय पद है।

ण्यक्षत्रियार्षञितो यूनि लुगणिञो: यहाँ से लुग् इसकी अनुवृत्ति होती है। अत: यह सूत्रार्थ होता है। – बहुत्व की विवक्षा में तद्-राज का लोप हो यदि बहुत्व तद् – राज के अर्थ का ही हो परन्तु स्त्री लिङ्ग में न हो।

उदाहरण – पञ्चालस्य अपत्यानि अथवा पाञ्चालानां जनपदानां राजानो यह लौकिक विग्रह है।पञ्चाल ङस् इस स्थिति में जनपद सूत्र से अञ् प्रत्यय होकर प्रक्रिया कार्य हाने पर का पाञ्चाल: यह रूप होता है। यहाँ पाञ्चाल शब्द तो अञ्प्रत्ययान्त है। अत: पाञ्चाल शब्द की बहुत्व विवक्षा होने पर जस् प्रत्यय होता है। वह तद्राजा: इस सूत्र से तद्राजसंज्ञक होता है। यहाँ तद्राजसंज्ञक की बहुत्व विवक्षा है। अत: तद्राज सूत्र से तद्राजसंज्ञक प्रत्यय का लोप होता है। तदनन्तर निमित्तापाये नैमित्तिकस्याप्यपाय: इस से आदि वृद्धि का अभाव होता है। तब प्रथमयो: पूर्वसवर्ण: इस से सवर्णदीर्घ होकर प्रक्रिया कार्य में पञ्चाला: यह रूप है।

पाठगत प्रश्न 28.4

1. ठक् प्रत्यय विधायक सूत्र कौन सा है?
2. 'ठ' को क्या आदेश होता है?
3. पाञ्चालः यहाँ किस सूत्र से कौन सा प्रत्यय है?
4. कुरुनादिभ्यः से कौन सा प्रत्यय होता है?
5. तद्राजसंज्ञाविधायक सूत्र कौन सा है।
6. पञ्चालाः यहाँ तद्राज का लुक् किस सूत्र से होता है?

पाठ का सार

इस पाठ में अपत्य अर्थ में प्रत्यय विधान किया जाता है। जैसे उपगोः अपत्यम् यह विग्रह होने पर तस्याऽपत्यम् इस सूत्र से अण्, प्रत्यय का विधान होता है। अर्थात् तद्धितवृत्ति उपगु सम्बन्धी अपत्य यह अर्थ आता है। और भी इस पाठ में अपत्य अर्थ में अञ्, ठक्, अण्, फक्, और इञ् इन प्रत्ययों का विधान किया जाता है।

और गोत्रापत्य, युवापत्य आदि संज्ञा भी इस प्रकरण में स्थापित है। गौत्रापत्य और युवापत्य अर्थ प्रत्ययों का विधान होता है। तद्राजसंज्ञक प्रत्यय का बहुत्व गम्यमान होने से लोप होता है। और इस प्रकरण में न केवल अपत्य अर्थ में तद्धित प्रत्ययों का विधान होता है अपि तु अपत्यभिन्नार्थ भवहितादि अर्थ में भी तद्धित प्रत्यय होते हैं। यथा पुंसु भवः यह विग्रह होने पर भवार्थ में सन् प्रत्यय करने पर प्रकिया कार्य में पौंस्नः यह रूप है। परन्तु अपत्यार्थ में अधिक प्रत्यय होते हैं। अतः अपत्याधिकार नाम होता है।

विशेषशब्दावली

1. **आदिवृद्धि** – तद्धितेष्वचामादेः और किति च इत्यादि सूत्र से ञित्, णित् और कित् परे रहते आदि अच् की वृद्धि होती है। यथा उपगोः अपत्यम् यहाँ अण्-प्रत्यय होता है। यह णित् प्रत्यय है। अतः उपगु इस शब्द का आदि अच् उकार है। अतएव उसके ही आदि अच् के उकार की वृद्धि होती है।

2. **सौत्रत्वात् लुक्** – छन्द के अनुसार सूत्र होते हैं यह महाभाष्यकार का वचन है। अतः छन्द के मेलन के लिए कहीं विभक्ति का अदर्शन होता है। यथा प्रकृत प्रकरण में तस्यापत्यम् इस सूत्र में तस्य इस शब्द से पञ्चमी आई है। परन्तु सूत्र में समागत पञ्चमी का अदर्शन होता है। अतः शास्त्र में कहा जाता है – सौत्रत्व होने से लोप होता है।

3. **विभक्तिविपरिणाम** – लोक में जैसे विभक्तियों का प्रयोग होता है,वैसे शास्त्र में कभी अन्यथा भी होता है। गर्गादिभ्यो यञ् इस सूत्र में तस्याऽपत्यम् यहाँ से अपत्यम् यह प्रथमान्त पद अनुवर्तित

टिप्पणियाँ

होता है। परन्तु सूत्र में प्रथमान्त अपत्यशब्द का तो सप्तमीत्व होने से परिवर्तन होता है। यह ही विभक्ति विपरिणाम है।

पाठांत प्रश्न

1. 'तस्यापत्यम्' इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
2. 'अपत्यं पौत्रप्रभृति गोत्रम्' इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
3. 'एको गोत्रे' इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
4. 'गार्ग्यः' यह रूप सिद्ध कीजिए।
5. 'जीवति तु वंश्ये युवा' इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
6. 'गार्ग्यायणः' यह रूप को सिद्ध कीजिए।
7. दाक्षिः यह रूप सिद्ध कीजिए।
8. 'जनपदशब्दात्क्षत्रियादञ्' इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
9. राजन्यः यह रूप सिद्ध कीजिए।
10. 'तद्राजस्य बहुषु तेनैवास्त्रियाम्' इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
11. बाहविः यह रूप सिद्ध कीजिए।
12. गाङ्गः यह रूप सिद्ध कीजिए।
13. 'ऋष्यन्धकवृष्णिकुरुभ्यश्च' इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
14. ये चाऽभावकर्मणोः इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
15. पाञ्चालः इस रूप को सिद्ध कीजिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

यहाँ ऊपर में प्रदत्त प्रश्नों के उत्तर दिए गए हैं–

28.1

1. स्त्रीपुंसाभ्यां नञ्स्नञौ भवनात् यह सूत्र है।
2. स्त्रीपुंसाभ्याम् यहाँ इतरेतरद्वन्द्व है।
3. षष्ठ्यन्त कृतसन्धि समर्थ पद से अपत्य अर्थ में पूर्वोक्त और आगे कहे जाने वाले प्रत्यय हो यह अर्थ है।

4. अपत्यं पौत्रप्रभृति गोत्रम् सूत्रम्।
5. गुण।
6. गोत्र में एक ही अपत्यप्रत्यय हो यह अर्थ है।

28.2

1. यञ-प्रत्यय।
2. गोत्र अर्थ में जो यञन्त और अञन्त है उनके अवयव (यञ् और अञ्) का लोप हो, यदि उन्हीं के अर्थ अर्थात् (अर्थात् गोत्र का) बहुत्व विवक्षित हो, किन्तु स्त्रीलिङ्ग में नहीं होता।
3. जीवति तु वंश्ये युवा यह सूत्र है।
4. यञिञोश्च यह सूत्र।
5. इञ्-प्रत्यय।
6. इञ्-प्रत्यय।

28.3

1. अण्-प्रत्यय।
2. ऋष्यन्धकवृष्णिकुरुभ्यश्च
3. ढक्-प्रत्यय।
4. कनीन यह आदेश, अण्-प्रत्यय।
5. घ-प्रत्यय।
6. यकारादि तद्धित प्रत्यय परे रहते अन् को प्रकृतिभाव हो, परन्तु भाव और कर्म अर्थ में न हो।

28.4

1. रेवत्यादिभ्यष्ठक्।
2. इकादेश।
3. जनपदशब्दात्क्षत्रियादञ् इस सूत्र से अञ्-प्रत्यय।
4. ण्य-प्रत्यय।
5. ते तद्राजाः यह सूत्र।
6. तद्राजस्य बहुषु तेनैवास्त्रियाम्।

॥ अठाइसवां पाठ समाप्त॥

29

मत्वर्थीय प्रकरण

तद्धित प्रत्ययों में मतुप् कोई तद्धित प्रत्यय है। तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् (५.२.९४) इस सूत्र से आरंभ करके मत्बर्थीय प्रकरण आरंभ होता है। वह इसका है, और वह इसमें है, इस अर्थ में मतुप् प्रत्यय होता है। जैसे बुद्धि इसकी है अथवा इसमें है इस अर्थ में मतुप् प्रत्यय होता है। बुद्धिमान्, धनवान्, ज्ञानवान् इत्यादि रूप होते हैं। मतुपर्थीयप्रकरण में न केवल मतुप्-प्रत्यय का अन्तर्भाव है अपितु तदस्यास्त्यस्मिन्निति अर्थ में विद्यमान प्रत्ययों का भी मतुपर्थप्रकरण में अन्तर्भाव होता है। यथा- तदस्यास्त्यस्मिन् इस अर्थ में विन्, लच्, इन्, अण् इत्यादि भी अनेक प्रत्यय होते हैं। यथा- माया अस्य अस्ति इस अर्थ में इन्प्रत्यय, तपः अस्य अस्ति इस अर्थ में विन् इत्यादि प्रत्यय होते हैं। इन प्रत्ययों का मतुपर्थीयप्रकरण में अन्तर्भाव विद्यमान है।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप सक्षम होंगे :

- मतुपर्थीयप्रत्यय को जान पाने में;
- मतुप्-प्रत्यय किस अर्थ में होते हैं यह जान पाने में;
- मतुप्-प्रत्यय विधायक सूत्रों के उदाहरण जान पाने में;
- मतुप्-प्रत्यय से निर्मित शब्दों के अर्थ को जान पाने में;
- मतुप्-प्रत्यय से शब्द निर्माण कर पाने में;
- वृत्ति के द्वारा महावाक्य को कैसे लघु रूप में प्रयुक्त किया जाता है उस विषय में भली-भाँति जान पाने में;
- सूत्र से कैसे अर्थ निर्णय होता है, यह जान पाने में;
- अनुवृत्ति और अधिकार इनको जान पाने में।

29.1 तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्॥ (५.२.९४)

सूत्रार्थ – प्रथमान्त प्रातिपदिक से तदस्यास्त्यस्मिन् इस अर्थ में तद्धित संज्ञक मतुप् प्रत्यय पर में होता है।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र है। इस सूत्र में षट् पद है। तद् यह प्रथमान्तम् है। यहां पंचमी अर्थ में प्रथमा होती है। अस्य यह षष्ठ्यन्त है। अस्ति यह क्रियापद है। अस्मिन् यह सप्तम्यन्त पद है। इति अव्ययपद है। मतुप् यह प्रथमान्त है।

तद्धिताः, प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, समर्थानां प्रथम द्वितीय इति एते यह अधिकार सूत्र आते हैं। अतः सूत्रार्थ होता है – प्रथमान्त प्रातिपदिक से तदस्यास्त्यस्मिन् इस अर्थ में तद्धितसंज्ञक मतुप् प्रत्यय पर होता है।

जैसे – गावः अस्य अस्मिन् वा सन्ति इस अर्थ में प्रयुक्त सूत्र से मतुप् प्रत्यय होता है। मतुप् के के पकार की हलन्त्यम् इससे तथा उकार की उपदेशेऽजनुनासिक इस सूत्र से इत् संज्ञा करने पर करने पर मत यही मात्र शेष रहता है। अर्थात् वह इसका है अथवा वह इसमें है इस अर्थ में मतुप्-प्रत्ययः होता है। प्रकृतसूत्र में इति शब्द के सन्निधान से वह इसका है अथवा वह इसमें है इस प्रसिद्ध अर्थ के साथ अन्य अर्थ में भी मतुप् का प्रयोग होता है। महाभाष्यकार ने एक श्लोक के द्वारा कहा है –

"भूमनिन्दाप्रशंसासु नित्ययोगेऽतिशायने।
संसर्गेऽस्तिविवक्षायां भवन्ति मतुबादयः॥ " इति

अर्थात् बहुत्व की विवक्षा में, निंदा में, प्रशंसा में, नित्य संबंध में, अतिशय में, संसर्ग में मतुप् आदि प्रत्यय होते हैं। जैसे- बह्व्यो गावः सन्ति अस्य इति गोमान् तो बहुत्व की विवक्षा का उदाहरण है।

पुनः प्रकृतसूत्र में अस्ति यह एकवचन का प्रयोग है फिर भी एक वचन विवक्षित नहीं है उससे एकत्व में द्वित्व में और बहुत्व में मतुपादि प्रत्यय होते हैं। इसलिए ही गावः सन्ति अस्य यहाँ बहुत्व होने पर भी मतुप् होता है। इस प्रकार ही अस्य यहाँ भी एकवचन विवक्षित नहीं है। इसलिए ही धनानि सन्ति एषाम् यहाँ बहुत्व होने पर भी मतुप्-प्रत्यय होता है।

परन्तु अस्ति इससे तो वर्तमान काल विवक्षित होता है। उससे भूतकाल अर्थ में और भविष्यत् अर्थ में मतुप्-प्रत्यय नहीं होता है। इसलिए धनम् आसीत् अस्य उत धनं भविष्यति अस्य इस अर्थ में मतुप् प्रत्यय नहीं होता है। अर्थात् अस्ति यहाँ संख्या का अभाव होने पर भी काल की विवक्षा तो है।

उदाहरण – गावः सन्ति अस्य यह अलौकिक विग्रह होने पर वर्तमान काल और वह इसका है यह अर्थ है। अतः गो जस् इस स्थिति में प्रकृत सूत्र से प्रथमान्त गो इस प्रातिपदिक से मतुप् होता है। मतुप् के उकार और पकार का लोप होने पर गो जस् मत् यह स्थिति होती है। यह समुदाय तद्धितान्त है। अतः कृत्तद्धितसमासाश्च इस सूत्र से प्रातिपदिकसंज्ञा संज्ञा होती है। तत्पश्चात् सुपो

टिप्पणियाँ

धातुप्रातिपदिकयोः इस सूत्र से सुप् का लोप होता है। तब गो मत् इस स्थिति में एकदेशविकृतमनन्यवत् इस न्याय से प्रतिपादिक संज्ञा होती है। तत्पश्चात् स्वौजस् सूत्र से विभक्ति कार्य करने पर सुप् में अनुबंध लोप करने पर गोमत् स् यह स्थिति होती है। तत्पश्चात अत्वसन्तस्य चाधातोः इससे उपधा में स्थित अकार का दीर्घ होने पर गोमात् स् यह स्थिति होती है। तब उगिदचां सर्वस्थानेऽधातोः इस सूत्र से नुम् करने पर और अनुबन्धलोप होने पर गोमान् त् स् यह स्थिति होती है। तत्पश्चात् हल्ङ्याब्भ्यो दीर्घात्सुतिस्यपृक्तं हल् इस सूत्र से अपृक्त सकार का लोप होता है। तब गोमान् त् इस स्थिति में संयोगान्तस्य लोपः इस सूत्र से संयोगान्तस् तकार का लोप होकर वर्णमेलन होने पर गोमान् यह रूप हुआ।

29.2 रसादिभ्यश्च॥ (५.२.९५)

सूत्रार्थ – वह इसका है इस अर्थ में अथवा वह इसमें है इस अर्थ में रसादिगण में पठित प्रातिपदिक से मतुप् प्रत्यय होता है।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र है। इस सूत्र में दो पद हैं। रस आदिः येषां ते रसादयः। तेभ्यः रसादिभ्यः यह तद्गुणसंविज्ञान बहुव्रीहि समास है। रसादिभ्यः यह पञ्चम्यन्तं पद है। चेति यह अव्ययपद पद है।

तद्धिताः, प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, समर्थानां प्रथम द्वितीय ये अधिकार सूत्र आते हैं। तदस्यास्त्यस्मिन्निति यह संपूर्ण सूत्र यह अनुवर्तित होता है। अतः सूत्रार्थः होता है – वह इसका है इस अर्थ में अथवा वह इसमें है इस अर्थ में रसादिगण में पठित प्रातिपदिकों से मतुप्-प्रत्यय होता है। रस, रूप, वर्ण, गन्ध, स्पर्श, शब्द, स्नेह और भाव ये शब्द रसादिगण में पठित हैं। वह इसका है इस अर्थ में अथवा वह इसमें है इस अर्थ में इन शब्दों से पर मतुप् प्रत्यय होता है।

शङ्का – तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् सूत्र से वह इसका है इस अर्थ में अथवा वह इसमें है इस अर्थ में रसादिगण में पठित प्रातिपदिकों से मतुप् प्रत्यय का विधान सम्भव होता है। अतः शङ्का उत्पन्न होती है कि रसादिभ्यश्च इस सूत्र से पुनः मतुप्-प्रत्यय विधान किसलिए किया गया है।

समाधान – यहाँ समाधान दिया गया है – रसादिगण में पठित प्रातिपदिक अदन्त हैं। अतः अदन्त प्रातिपदिक का अत इनिठनौ इस सूत्र से वह इसका है अथवा वह इसमें है इस अर्थ में इन्प्रत्यय और ठन् प्रत्यय प्राप्त होता है। ठन्प्रत्यय और इन्प्रत्यय को बांधकर पुनः मतुप्-प्रत्यय का विधान करने के लिए रसादिभ्यश्च यह सूत्र आवश्यक है।

उदाहरण – रसः अस्य अस्मिन् वा अस्ति यह अलौकिक विग्रह है। रस शब्द रसादिगण में पढ़ा गया है। अतः रसादिभ्यश्च सूत्र से वह इसका है अथवा वह इसमें है इस अर्थ में मतुप् होता है। तब अनुबन्ध लोप करने पर रस स् मत् यह स्थिति होती है। यह समुदाय तद्धितान्त है। अतः कृत्तद्धितसमासाश्च सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा होती है। तत्पश्चात् सुपो धातुप्रातिपदिकयोः इस सूत्र से सुप् का लोप होता है। तब रस मत् यह स्थिति हुई। तब मादुपधायाश्च मतोर्वोऽयवादिभ्यः इससे मकार के स्थान पर वकार आदेश होता है। तत्पश्चात् एकदेशविकृतमनन्यवत् इस न्याय से विभक्ति

कार्य करने पर सु प्रत्यय हुआ। उसके बाद रस वत् स् इस स्थिति में उपधा दीर्घ और नुमागम होने पर रस वान् स् यह स्थिति है। तब हल्ङ्याब्भ्यः इत्यादि सूत्र से सुलोप होने पर संयोगान्त तकार का लोप होने और वर्णमेलन होने से रसवान् यह रूप है।

प्रकृति के मकार के स्थान पर वकार आदेश का विधान होता है। उसके लिए सूत्र –

29.3 मादुपधायाश्च मतोर्वोऽयवादिभ्यः॥ (८.२.९)

सूत्रार्थ – मवर्णान्त और अवर्णान्त तथा मवर्णोपध और अवर्णोपध से पर मत् के म को व आदेश हो,परन्तु यवादि से वर्जित हो।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र है। म् च अश्च अनयोः समाहारः इति मम्, तस्मात् मात् यह समाहार द्वन्द्व है। मात् यह पञ्चम्यन्त पद है। यवः आदिर्येषां ते यवादयः, न यवादयः अयवादयः, तेभ्यः अयवादिभ्यः यह पञ्चम्यन्त पद है। उपधायाः यह पञ्चम्यन्त पद है। च यह अव्यय पद है। मतोः यह षष्ठ्यन्त पद है।

पदस्य इसका अधिकार है। उपधायाः इसका विशेषण मत् होने पर येन विधिस्तदन्तस्य सूत्र से स तदन्तविधि से मकारान्त और अवर्णान्त प्राप्त होता है। मात् इसका दो बार ग्रहण होता है। माद् यह उपधा का विशेषण होता है। उससे मकारोपधा और अवर्णोपधा प्रातिपदिक से यह भी प्राप्त होता है। सूत्रे में चकार ग्रहण के सामर्थ्य से दो अर्थ आते हैं। मात् से परे मत् के मकार को वकार हो यह एक अर्थ है।और मात् उपधा से परे के मकार को वकार हो यह दूसरा अर्थ है। दोनों अर्थ मिलकर कोई एक अर्थप्रतिपादित करते हैं वह तो – मवर्णान्त और अवर्णान्त तथा मवर्णोपधा और अवर्णोपधा से पर मत् के मकार को वकार हो, परन्तु यवादिवर्जित हो अर्थात् मकार को वकारादेश होता है। वहाँ निर्मित्त होते हैं–

१. मकारान्त प्रातिपदिक, अवर्णान्त प्रातिपदिक, मवर्णोपधा प्रातिपदिक अथवा अवर्णोपधा प्रातिपदिक इनमें से कोई भी हो।

२. वह प्रातिपदिक यवादिगण पठित में पठित न हो।

मकारान्त प्रातिपदिक, अवर्णान्त प्रातिपदिक, मवर्णोपध प्रातिपदिक अथवा, अवर्णोपधा प्रातिपदिक और वह यवादिगण में पठित प्रातिपदिक से भिन्न, इनके परे मत् के मकार के स्थान पर वकार होता है यह फलितार्थ होता है।

उदाहरण

१. यवादिगणपठितप्रातिपदिक भिन्न मकारान्त प्रातिपदिक का उदाहरण होता है किंवान्। किम् +वान् यवादिगण में किम्– शब्द का पाठ नहीं है। और पुनः मकारान्त प्रातिपदिक है। अतः मत् के मकार का वकार होने और प्रक्रिया कार्य होने पर किंवान् यह रूप है।

२. यवादिगण पठित प्रातिपदिक भिन्न अवर्णान्त प्रातिपदिक का उदाहरण रसवान् होता है। रस यह अदन्त प्रतिपादक है। और रस यह प्रातिपदिक यवादिगण में पठित नहीं है। अतः रस

टिप्पणियाँ

इस अदन्त प्रातिपदिक से पर मकार को वकार आदेश होने और प्रक्रिया कार्य होने पर रसवान् यह रूप बना।

३. यवादिगण पठित प्रातिपदिक भिन्न मवर्णोपधा प्रातिपदिक का उदाहरण होता है लक्ष्मीवान्। लक्ष्मी+ मत् यहाँ मकारोपधा प्रातिपदिक लक्ष्मी है। और वह प्रातिपदिक यवादिगण में भी पठित नहीं है। अतः लक्ष्मी इस मवर्णोपधा से परे मत् के मकार को वकार आदेश होने और प्रक्रियाकार्य होने पर लक्ष्मीवान् यह रूप है।

४. यवादिगण पठित प्रातिपदिक भिन्न अवर्णोपधा प्रातिपदिक का उदाहरण होता है यशस्वान्। यशस् + मत् इस स्थिति में यशस् यह प्रातिपदिक अवर्णोपधा है। और वह यवादिगण में भी पठित नहीं है। अतः यशस् इस अवर्णोपधा प्रातिपदिक पर के मत् के मकार का वकार होने परौ और प्रक्रियाकार्य होने पर यशस्वान् यह रूप है।

29.4 तसौ मत्वर्थे।। (१.४.१९)

सूत्रार्थ – तान्त और सान्त भंसज्ञक होते हैं, मत्वर्थ प्रत्यय परे रहते।

सूत्रव्याख्या – यह संज्ञासूत्र है। इस सूत्र में दो पद हैं। मतोः अर्थः मत्वर्थः, तस्मिन् मत्वर्थे यह सप्तमी तत्पुरुष है। मत्वर्थे यह सप्तम्यन्त पद है। तश्च स च तसौ यह इतरेतरद्वन्द्व है। तसौ यह प्रथमान्त पद है।

यचि भम् यहां से भम् यह अनुवर्तित होता है। मतुप् प्रत्यय है। अतः मतुप् प्रत्यय से प्रातिपदिक का आक्षेप होता है। प्रातिपदिक का विशेषण तसौ है। अतः विशेषण होने से येन विधिस्तदन्तस्य इस सूत्र से तदन्त विधि से तान्त और सान्त प्राप्त होते हैं। अतः सूत्रार्थः होता है – तान्त और सान्त भसज्ञक हो मत्वर्थ प्रत्यय परे रहते।

यह सूत्र स्वादिष्वसर्वनामस्थाने सूत्र का अपवाद है। प्रकृतस्थल में स्वादिष्वसर्वनामस्थाने इस सूत्र से पदसंज्ञा होती है। तसौ मत्वर्थे इस सूत्र से भसंज्ञा होती है। परन्तु आकडारादेका संज्ञा इस अधिकार सूत्र के सामर्थ्य से एक संख्या का ही ग्रहण होता है। तब जो संज्ञा पर एवं अवकाश रहित होती है, उसका ग्रहण होता है। इस कारण भसंज्ञा पदसंज्ञा का बाध करती है।

उदाहरण – गुरुतौ स्तः अस्य इति यह विग्रह पर होने पर तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् इस शास्त्र से मतुप् होता है। उसके बाद अनुबन्धलोप होने पर प्रातिपदिकसंज्ञा होती है। तब गुरुत् औ मत् इस स्थिति में स्वादिष्वसर्वनामस्थाने इस सूत्र से गुरुत् इसकी पदसंज्ञा प्राप्त हुई। गुरुत् यह तान्त प्रातिपदिक है। अतः प्रकृत सूत्र से तान्त प्रातिपदिक की भसंज्ञा प्राप्त हुई। अतः प्रकृत सूत्र से पदसंज्ञा को बांधकर भसंज्ञा का विधान होता है, पर होने से तथा अनवकाश होने पर। अतः पदसंज्ञा के अभाव होने से तकार का झलां जशोऽन्ते इस शास्त्र से दकार नहीं होता है। तत्पश्चात् विभक्तिकार्य में सु के उपधादीर्घ होने, सुलोप और संयोगान्त का लोप होने पर प्रक्रिया कार्य में गुरुत्मान् यह रूप है।

29.5 गुणवचनेभ्यो मतुपो लुगिष्टः॥ (वा)

अर्थ- गुणवाचक प्रातिपदिक से पर मतुप, (मत्) का लोप हो।

व्याख्या- यह वार्तिक है। तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् इस सूत्र के भाष्य में यह प्रकृत वार्तिकम् है। प्रकृतवार्तिक से मतुप्-प्रत्यय के लोप का विधान होता है। अतः यह विधिशास्त्र है। यहाँ चत्वार पद हैं। गुणवचनेभ्यः यह पञ्चम्यन्त पद है। मतुपः यह षष्ठ्यन्त पद है। लुग् और इष्टिः ये दोनों पद प्रथमान्त है। गुणम् उक्तवन्तः इति गुणवचनाः। अर्थात् आदि में गुण को कहकर पश्चात् गुणयुक्त द्रव्य को अभिन्नरूप से कहता है,वह गुणवचन होता है। यथा शुक्लः इत्यादि प्रथम रूप से गुण को कहकर बाद में अभिन्न रूप से गुणयुक्त द्रव्य को कहता है। अतः शुक्लशब्द गुणवचन है। अतः सूत्रार्थ होता है- गुणवचन प्रातिपदिक से परे मतुप् (मत्) का लोप हो।

उदाहरण- शुक्लः (गुणः) अस्य अस्ति इस विग्रह में तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् इस शास्त्र से मतुप् प्रत्यय होता है। तत्पश्चात् अनुबन्धलोप होने पर शुक्ल + मत् यह स्थिति होती है। प्रकृत में शुक्ल शब्द समानरूप से गुण और गुणी कहता है। अतः शुक्ल शब्द गुणवचन है। उससे शुक्ल यह गुणवचन प्रातिपदिक से परे के मत् का प्रकृतवार्तिक से लोप होता है। तब विभक्तिकार्य में शुक्लः यह रूप है।

पाठगत प्रश्न 29.1

यहाँ कुछ पाठगत प्रश्न दिए गए हैं-

1. मतुप् प्रत्यय किस सूत्र से विधान किया जाता है?
2. गोमान् यहाँ किस सूत्र से कौन सा प्रत्यय है?
3. अस्ति यहाँ कालविवक्षा है अथवा नहीं?
4. रसादिभ्यश्च इसका क्या अर्थ है?
5. मादुपधायाश्च मतोर्वोऽयवादिभ्यः इस सूत्र से क्या विधान किया जाता है?
6. तसौ मत्वर्थे इस सूत्र से कौन सी संज्ञा विधान की जाती है?

29.6 प्राणिस्थादातो लजन्यतरस्याम्॥ (५.२.९६)

सूत्रार्थ - प्राणिस्थवाचक प्रथमान्त आदन्त प्रातिपदिक से तदस्यास्त्यस्मिन् इस अर्थ में विकल्प से तद्धितसंज्ञक लच् प्रत्यय पर में होता है।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में चार पद हैं। प्राणिषु तिष्ठति इति प्राणिस्थम्, तस्मात् प्राणिस्थात् यह पञ्चमी एकवचनान्त पद है। आतः यह भी पञ्चमी एकवचनान्त पद है। लच् यह प्रथमा एकवचनान्त है। अन्यतरस्याम् यह अव्ययपद है।

टिप्पणियाँ

तद्धिताः, प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, समर्थानां प्रथम द्वितीय ये अधिकार सूत्र आते हैं। तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् यहाँ से तदस्यास्त्यस्मिन्निति यह अनुवर्तित होता है। प्राणिस्थात् इस से प्राणिस्थवाचकात् यह बोध्य है। आतः यह प्रातिपदिक का विशेषण होने से आदन्तात् यह अर्थ प्राप्त होता है। अतः सूत्रार्थ होता है – प्राणिस्थवाचक प्रथमान्त आदन्त प्रातिपदिक से तदस्यास्त्यस्मिन् इस अर्थ में विकल्प से तद्धितसंज्ञक लच् प्रत्यय पर में होता है। अर्थात् इस ससूत्र की प्रवृत्ति में निमित्त हैं –

१. प्राणिस्थवाचक प्रातिपदिक आवश्यक है।

२. और वह प्रातिपदिक अदन्त हो।

३. और वह अदन्त प्रातिपदिक प्रथमा विभक्त्यन्त हो।

उदाहरण– चूडालः और चूडावान् प्रकृतसूत्र के उदाहरण है। चूडा यह प्रातिपदिक प्राणिस्थवाचक है। क्योंकि प्राणियों में स्थित केश समूह का वाचक चूडापद है। और वह अदन्त प्रातिपदिक है। और प्रथमान्त पद भी है। अतः चूडा अस्य अस्ति इस विग्रह में प्रकृतशास्त्र से विकल्प से लच्प्रत्यय का विधान होता है। तत्पश्चात् अनुबन्धलोप होने पर तद्धितान्त की प्रातिपदिकसंज्ञा होती है। तत्पश्चात् सुब्लोप होने पर चूडा+ल यह स्थिति होती है। उसके बाद एकदेशविकृतमनन्यवत् इस न्याय से प्रातिपदिकसंज्ञा होने और विभक्ति कार्य होकर चूडालः यह रूप है। लच् के अभाव पक्ष में तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् इस शास्त्र से मतुप्-प्रत्यय होता है। तत्पश्चात् अनुबन्धलोप होने पर मकारक को वकारादेश होकर प्रक्रिया कार्य और वर्णमेलन से चूडावान् यह रूप है।

29.7 लोमादिपामादिपिच्छादिभ्यः शनेलचः॥ (५.२.१००)

सूत्रार्थ – तदस्यास्त्यस्मिन् इस अर्थ में लोमादि पामादि पिच्छादि गण में पठित प्रथमान्त प्रातिपदिकों से विकल्प से तद्धितसंज्ञक श, न तथा इलच् प्रत्यय हो।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र है। इस शास्त्र में दो पद हैं। लोमन् शब्दः आदिर्येषां ते लोमादयः, पामन् शब्दः आदिर्येषां ते पामादयः, पिच्छशब्दः आदिर्येषां ते पिच्छादयः। दोनों स्थान पर तो तद्गुणसंविज्ञानबहुव्रीहि है। लोमादयश्च पामादयश्च पिच्छादयश्च लोमादिपामादिपिच्छादयः, तेभ्यः लोमादिपामादिपिच्छादिभ्यः यह इतरेतरद्वन्द्व है। लोमादिपामादिपिच्छादिभ्यः यह पञ्चम्यन्त पद है। श च न च इलच्च इति शनेलचः यह इतरेतरद्वन्द्व है। शनेलचः यह प्रथमान्त पद है।

तद्धिताः, प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, समर्थानां प्रथमाद्वा ये अधिकार सूत्र आते हैं। तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् इस सूत्र से तद्, अस्य, अस्ति, अस्मिन्, यह पद अनुवर्तित होता है। प्राणिस्थादातो लजन्यतरस्याम् यहाँ से अन्यतरस्याम् यह पद अनुवर्तित होता है। अतः सूत्रार्थ होता है – तदस्यास्त्यस्मिन् इस अर्थ में लोमादिपामादिपिच्छादिगण में पठित प्रथमान्त प्रातिपदिक से विकल्प से तद्धितसंज्ञक श, न, इलच् प्रत्यय हो। यथासंख्यमनुदेशः समानाम् इस परिभाषा से लोमादिगणपठित प्रातिपदिकों से विकल्प से श प्रत्यय, पामादिगण पठित प्रातिपदिकों से विकल्प से न प्रत्यय,

पिच्छादिगण पठित प्रातिपदिकों से विकल्प से इलच् प्रत्यय होता है दूसरे पक्ष में तो मतुप्-प्रत्यय होता है।

उदाहरण- लोमानि अस्य सन्ति इस विग्रह में लोमन् - शब्द का लोमादिगण में पाठ है। अतः लोमादिपामादिपिच्छादिभ्यः शनेलचः इस सूत्र से श प्रत्यय होता है।यह समुदाय तद्धितान्त है। अतः तद्धितान्त की प्रातिपदिक संज्ञा होने पर सुप् का लोप होकर लोमन् + श यह स्थिति होती है। स्वादिष्वसर्वनामस्थाने इस शास्त्र से लोमन् की पदसंज्ञा होती है। तत्पश्चात् न लोपः प्रातिपदिकान्तस्य इस शास्त्र से नकार लोप होता है। तब विभक्ति कार्य होने पर लोमशः यह रूप है। श प्रत्यय के अभाव पक्ष में तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् इस शास्त्र से मतुप् प्रत्यय होता है। तत्पश्चात् अनुबन्ध लोप करने पर मकार को वकारादश होने पर विभक्ति कार्य और वर्णमेलन होने पर लोमवान् यह रूप है।

पाम अस्य अस्ति इस विग्रह में पामन् - शब्द का पामादिगण में पाठ है। अतः लोमादिपामादि पिच्छादिभ्यः शनेलचः इस सूत्र से न प्रत्यय होता है।यह समुदाय तद्धितान्त है। अतः तद्धितान्त की प्रातिपदिक संज्ञा होने पर सुप् का लोप होने पर पामन् + न यह स्थिति होती है। स्वादिष्वसर्वनामस्थाने इस शास्त्र से पामन् की पदसंज्ञा होती है। न लोपः प्रातिपदिकान्तस्य इति शास्त्र से नकारलोप होने पर विभक्तिकार्य होकर पामनः यह रूप है। न प्रत्यय के अभाव पक्ष में तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् इस शास्त्र से मतुप्-प्रत्यय होता है। तत्पश्चात् अनुबन्धलोप होकर मकार को वकारादेश होने पर विभक्ति कार्य और वर्णमेलन होने से पामवान् यह रूप है।

पिच्छम् अस्य अस्ति इस विग्रह में पिच्छ शब्द का पिच्छादिगण में पाठ है। अतः लोमादिपामादि पिच्छादिभ्यः शनेलचः इस शास्त्र से इलच् प्रत्यय होता है। तत्पश्चात् अनुबन्धलोप होने पर इस तद्धितान्त समुदाय की प्रातिपदिक संज्ञा होने पर सुप् का लोप होने पर पिच्छ + इल यह स्थिति होती है। यचि भम् इस शास्त्र से पिच्छ शब्द की भसंज्ञा होती है। उसके बाद यस्येति च इस सूत्र से छकारोत्तर अकार का लोप होता है। तत्पश्चात् विभक्ति कार्य और वर्णमेलन से पिच्छिलः यह रूप होता है। इलच् प्रत्यय के अभाव पक्ष में तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् इस शास्त्र से मतुप् प्रत्यय होता है। तत्पश्चात् अनुबन्धलोप करने पर मकार को वकारादेश होने पर विभक्ति कार्य होकर पिच्छवान् यह रूप है।

29.8 प्रज्ञाश्रद्धार्चाभ्यो णः॥ (५.२.१०१)

सूत्रार्थ - प्रज्ञा, श्रद्धा और अर्चा प्रथमान्त प्रातिपदिकों से तदस्यास्त्यस्मिन्निति इस अर्थ में विकल्प से तद्धितसंज्ञक ण प्रत्यय होता है।

सूत्रव्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस शास्त्र में दो पद हैं। प्रज्ञा च श्रद्धा च अर्चा च प्रज्ञाश्रद्धार्चाः, ताभ्यः प्रज्ञाश्रद्धार्चाभ्यः यह इतरेतरद्वन्द्व है। प्रज्ञाश्रद्धार्चाभ्यः यह पञ्चम्यन्त पद है। णः यह तो प्रथमान्त पद है।

टिप्पणियाँ

तद्धिताः, प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, समर्थानां प्रथम द्वितीय ये अधिकार सूत्र आते हैं। तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् इस सूत्र से तद्, अस्य, अस्ति, अस्मिन् यह पद अनुवर्तित होता है। प्राणिस्थादातो लजन्यतरस्याम् यहाँ से अन्यतरस्याम् यह पद अनुवर्तित होता है अतः सूत्रार्थ होता है – प्रज्ञा, श्रद्धा और अर्चा प्रथमान्त प्रातिपदिकों से तदस्यास्त्यस्मिन्निति इस अर्थ में विकल्प से तद्धितसंज्ञक ण प्रत्यय होता है। ण प्रत्यय अभावपक्ष में तो मतुप् होता है।

उदाहरण – प्रज्ञा अस्मिन् अस्ति इस विग्रह में प्रज्ञाश्रद्धार्चाभ्यो णः इस सूत्र से ण प्रत्यय होता है। तत्पश्चात् अनुबन्धलोप होने पर प्राज्ञ+अ यह स्थिति है। यह समुदाय तद्धितान्त है। अतः प्रातिपदिकसंज्ञा और सुलोप होता है। तत्पश्चात् तद्धितेष्वचामादेः इस शास्त्र से आदिवृद्धि होती है। तब प्राज्ञ+अ इस स्थिति में यस्येति च इससे अकारलोप और विभक्ति कार्य होने पर प्राज्ञः यह रूप है। ण प्रत्यया अभावपक्ष में तो तु मतुप् होने पर प्रज्ञावान् यह रूप है।

श्रद्धा अस्मिन् अस्ति इस विग्रह में प्रज्ञाश्रद्धार्चाभ्यो णः इस सूत्र से ण प्रत्यय, अनुबन्धलोप और आदिवृद्धि होती है। तत्पश्चात् श्राद्ध+अ यह स्थिति होती है। तत्पश्चात् प्रक्रियाकार्य तथा वर्णमेलन से श्राद्धः यह रूप है। ण प्रत्यय अभावपक्ष में तो मतुप् होने पर श्रद्धावान् यह रूप है।

अर्चा अस्मिन् अस्ति इस विग्रह में प्रज्ञाश्रद्धार्चाभ्यो णः इस सूत्र से ण प्रत्यय, अनुबन्धलोप और आदिवृद्धि होती है। तत्पश्चात् आर्चा+अ इस स्थिति में यस्येति च इस से आकारलोप और विभक्ति कार्य होने पर आर्चः यह है। ण प्रत्यय अभावपक्ष में तो मतुप् होने पर अर्चावान् यह रूप है।

29.9 दन्त उन्नत उरच्॥ (५.२.१०६)

सूत्रार्थ – उन्नत दन्त गम्यमान होने पर प्रथमान्त दन्त प्रातिपदिक से तदस्यास्त्यस्मिन्निति इस अर्थ में तद्धितसंज्ञक उरच् प्रत्यय होता है।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में तीन पद हैं। दन्ते यह सप्तम्यन्त पद है। उन्नते यह सप्तम्यन्त पद है। उरच् यह प्रथमान्त पद है।

तद्धिताः, प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, समर्थानां प्रथमाद्वा ये अधिकार सूत्र आते हैं। तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् इस सूत्र से तद्, अस्य, अस्ति, अस्मिन् यह पद अनुवर्तित होता है। प्रकृत में दन्तपद की आवृत्ति की जाती है। और वह पञ्चम्यन्त पद है। अतः सूत्र का सामान्यार्थ है – उन्नत दन्त गम्यमान होने पर प्रथमान्त दन्त प्रातिपदिक से तदस्यास्त्यस्मिन्निति इस अर्थ में तद्धितसंज्ञक उरच् प्रत्यय होता है।

उदाहरण– उन्नताः दन्ताः अस्य सन्ति इस अर्थ में दन्त उन्नत उरच् इस शास्त्र से उरच् प्रत्यय होता है। तत्पश्चात् अनुबन्धलोप होने पर दन्त जस् उर यह स्थिति होती है। यह समुदाय तद्धितान्त है। अतः प्रातिपदिकसंज्ञा होती है। तत्पश्चात् सुप् का लोप होने पर दन्त + उर यह स्थिति होती है। उसके बाद यस्येति च इस से तकारोत्तरवर्ती अकार का लोप होने पर विभक्ति कार्य और वर्णमेलन से दन्तुरः यह रूप है।

पाठगत प्रश्न 29.2

1. प्राणिस्थादातो लजन्यतरस्याम् इस सूत्र का अर्थ लिखिए।
2. प्राणिस्थादातो लजन्यतरस्याम् यह किस प्रकार का सूत्र है?
3. लोमादिपामादिपिच्छादि से कौन से प्रत्यय होते हैं?
4. प्राज्ञः यहाँ किस सूत्र से कौन सा प्रत्यय होता है?
5. उन्नत दन्त गम्यमान होने पर कौन सा प्रत्यय होता है?
6. प्रज्ञाश्राद्धार्चाभ्यः यहाँ कौन सा समास है?

29.10 ऊषसुषिमुष्कमधोः रः॥ (५.२.१०७)

सूत्रार्थ – ऊष, सुषि, मुष्क और मधु इन प्रथमान्त प्रातिपदिकों से तद्धितसंज्ञक र प्रत्यय हो।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में पद द्वय है। ऊषश्च सुषिश्च मुष्कश्च मधु च इति ऊषसुषिमुष्कमधु, तस्मात् ऊषसुषिमुष्कमधोः यह समाहारद्वन्द्व है। ऊषसुषिमुष्कमधोः यह पञ्चम्यन्त पदम है। रः यह प्रथमान्त पद है।

तद्धिताः, प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, समर्थानां प्रथम द्वितीय ये अधिकार सूत्र आते हैं। तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् इस सूत्र से तद्, अस्य, अस्ति, अस्मिन् यह पद अनुवर्तित होता है। अतः सूत्रार्थ होता है – ऊष, सुषि, मुष्क और मधु इन प्रथमान्त प्रातिपदिकों से तद्धितसंज्ञक र प्रत्यय हो।

उदाहरण – ऊषः अस्य अस्ति इस विग्रह में ऊषसुषिमुष्कमधोः रः इस शास्त्र से र प्रत्यय होता है। यह समुदाय तद्धितान्त है। अतः तद्धितान्त होने से प्रातिपदिकसंज्ञा और सुलोप होता है। तत्पश्चात् विभक्ति कार्य होकर वर्णमेलन से ऊषरः यह रूप है।

सुषिः अस्य अस्ति इस विग्रह में ऊषसुषिमुष्कमधोः रः इस शास्त्र से र प्रत्यय होने पर प्रातिपदिकसंज्ञा, सुलोप और विभक्ति कार्य होने पर सुषिरः यह रूप है।

मुष्कः अस्य अस्ति इस विग्रह में ऊषसुषिमुष्कमधोः रः इस शास्त्र से र प्रत्यय होने पर प्रातिपदिकसंज्ञा, सुलोप और विभक्ति कार्य होने पर मुष्करः यह रूप है।

मधु अस्य अस्ति इस विग्रह में ऊषसुषिमुष्कमधोः रः इस शास्त्र से र प्रत्यय होने पर प्रातिपदिकसंज्ञा, सुलोप और विभक्ति कार्य होने पर मधुरः यह रूप है।

29.11 केशाद्वोऽन्यतरस्याम्॥ (५.२.१०९)

सूत्रार्थ – प्रथमान्त केशप्रातिपदिक से तदस्यास्त्यस्मिन्निति अर्थ में विकल्प से तद्धितसंज्ञक व प्रत्यय हो।

टिप्पणियाँ

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्रम् है। इस सूत्र में तीन पद हैं। केशात् यह पञ्चम्यन्त पद है। वः यह प्रथमान्त पद है। अन्यतरस्याम् यह अव्ययपद है।

तद्धिताः, प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, समर्थानां प्रथम द्वितीय ये अधिकार आते हैं। तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् इस सूत्र से तद्, अस्य, अस्ति, अस्मिन् यह पद अनुवर्तित होता है। अतः सूत्रार्थ होता है – प्रथमान्त केश प्रातिपदिक से तदस्यास्त्यस्मिन्निति अर्थ में विकल्प से तद्धितसंज्ञक व प्रत्यय हो।

शङ्का – प्राणिस्थादातो लजन्यतरस्याम् यहाँ से अन्यतरस्याम् इस पद की अनुवृत्ति सम्भव होती है। तथापि प्रकृतसूत्र में अन्यतरस्याम् यह पद किसलिए है।

समाधान – प्रकृतसूत्र में अन्यतरस्याम् यह पद नहीं दिया जाता तो व प्रत्यय के अभावपक्ष में केवल मतुप् प्रत्यय होता है। परन्तु व प्रत्यय के अभावपक्ष में भी मतुप् प्रत्यय के साथ अत इनिठनौ इस सूत्र से प्राप्त इनि और ठन् के संग्रहण के लिए अन्यतरस्याम् है।

उदाहरण – केशाः अस्य सन्ति इस विग्रह में केशाद्वोऽन्यतरस्याम् इस शास्त्र से व प्रत्यय होता है। यह समुदाय तद्धितान्त है। अतः तद्धितान्त प्रातिपदिकसंज्ञा और सुलोप होता है। तत्पश्चात् केश + व इस स्थित में विभक्ति कार्य होने पर केशवः यह रूप है। व प्रत्यय के अभावपक्ष में तो तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् इस सूत्र से मतुप् प्रत्यय, विभक्ति कार्य होने पर केशवान् यह रूप है। और पुनः व प्रत्यय के अभावपक्ष में अत इनिठनौ इस सूत्र से इन्-प्रत्यय और ठन् प्रत्यय होते हैं। तत्पश्चात् अनुबन्धलोप होने पर विभक्ति कार्य और वर्णमेलन होने से केशी, केशिकः रूप होते हैं।

29.12 अत इनिठनौ॥ (५.२.११५)

सूत्रार्थ – अदन्त प्रातिपदिक से तदस्यास्त्यस्मिन्निति इस अर्थ में विकल्प से तद्धितसंज्ञक इनि और ठन् प्रत्यय होते हैं।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र है। इस सूत्र में पद द्वय है। अत यह पञ्चम्यन्त पद है। इनिश्च ठन् च इति इनिठनौ यह इतरेतरद्वन्द्व है। इनिठनौ यह प्रथमान्त पद है।

तद्धिताः, प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, समर्थानां प्रथम द्वितीय इति ये अधिकार सूत्र आते हैं। तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् इस सूत्र से तद्, अस्य, अस्ति, अस्मिन् यह पद अनुवर्तित होता है। प्राणिस्थादातो लजन्यतरस्याम् इससे अन्यतरस्याम् यह पद अनुवर्तित होता है। अतः यह प्रातिपदिक का विशेषण है। अतः येन विधिस्तदन्तस्य इस सूत्र से तदन्तविधि में अदन्तात् प्रातिपदिकात् यह अर्थ आता है। अतः सूत्रार्थ होता है – अदन्त प्रातिपदिक से तदस्यास्त्यस्मिन् इस अर्थ में विकल्प से तद्धितसंज्ञक इनि और ठन् प्रत्यय होते हैं। विकल्प ग्रहण से इनि और ठन् के अभाव में मतुप् प्रत्यय होता है।

उदाहरण – दण्डः अस्य अस्ति इस विग्रह में दण्ड इस अदन्त प्रातिपदिक से अत इनिठनौ इस सूत्र से इनिप्रत्यय होता है। यह समुदाय तद्धितान्त है। अतः प्रातिपदिकसंज्ञा और सुलोप होता है।

तत्पश्चात् दण्ड+इन् इस स्थिति में यस्येति च इस से डकारोत्तरवर्ती अकार का लोप होने पर दण्डिन् यह स्थिति होती है। तत्पश्चात् विभक्तिकार्य में सौ च इस से उपधादीर्घ और सुलोप होने पर पदान्त नकार का लोप होने पर दण्डी यह रूप है।

दण्डः अस्य अस्ति इस विग्रह में दण्ड यह अदन्त प्रातिपदिक है। अत इनिठनौ इससे ठन्प्रत्यय होता है। उसके बाद अनुबन्धलोप करने पर दण्ड+ठ यह स्थिति होती है। तत्पश्चात् यह समुदाय तद्धितान्त है। अतः प्रातिपदिकसंज्ञा और सुलोप होता है। उसके बाद दण्ड+ठ इस स्थिति में ठस्येकः इस सूत्र से इकादेश होने पर दण्ड+इक यह स्थिति है। तत्पश्चात् यस्येति च इससे डकारोत्तरवर्ती अकार का लोप और विभक्ति कार्य होने पर दण्डिकः यह रूप है।

अत इनिठनौ इस सूत्र से विकल्प से इनि और ठन् का विधान होने से इनिठन्प्रत्यय के अभावपक्ष में मतुप्-प्रत्यय होता है। तब दण्डवान् यह रूप है। दण्ड इस अदन्त प्रातिपदिक से दण्डी, दण्डिकः, दण्डवान् ये तीन रूप होते हैं। अतः अदन्त प्रातिपदिकों से मतुप्, इन्, ठन् ये तीन प्रत्यय होते हैं।

29.13 रूपादाहतप्रशंसयोर्यप्॥ (५.२.१२०)

सूत्रार्थ – आहतार्थ और प्रशंसार्थ में वर्तमान प्रथमान्त रूप प्रातिपदिक से तदस्यास्त्यस्मिन्निति इस अर्थ में तद्धितसञ्ज्ञक यप् प्रत्यय होता है।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र है। इस सूत्र में तीन पद हैं। रूपाद् यह पञ्चम्यन्त पद है। आहतं च प्रशंसा च इति आहतप्रशंसे, तयोः आहतप्रशंसयोः यह इतरेतरद्वन्द्व है। आहतप्रशंसयोः यह सप्तम्यन्त पद है। यप् यह प्रथमान्त पद है।

तद्धिताः, प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, समर्थानां प्रथम द्वितीय ये अधिकार सूत्र आते हैं। तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् इस सूत्र से तद्, अस्य, अस्ति, अस्मिन् यह पद अनुवर्तित है। अतः सूत्रार्थ होता है – आहतार्थ में और प्रशंसार्थ में वर्तमान प्रथमान्त रूप प्रातिपदिक से तदस्यास्त्यस्मिन्निति इस अर्थ में तद्धितसंज्ञक यप् प्रत्यय होता है।

उदाहरण – आहतं रूपमस्य अस्ति यह विग्रह होने पर आहतार्थ में विद्यमान रूप इस प्रथमान्त प्रातिपदिक से मत्वर्थ में रूपादाहतप्रशंसयोर्यप् इस सूत्र से यप्-प्रत्यय और अनुबन्धलोप होता है। यह समुदाय तद्धितान्त है। अतः प्रातिपदिकसंज्ञा और सुप् का लोप होता है। तब रूप+य इस स्थिति में यस्येति च इस से अकार का लोप होने पर पुनः एकदेशविकृतमनन्यवत् इस न्याय से विभक्ति कार्य होने पर रूप्यम् यह रूप है। आहतं रूपमस्य अस्ति- रूप्यः कार्षायणः।

प्रशस्तं रूपमस्य अस्ति इस विग्रह में प्रशंसार्थ में विद्यमान रूप इस प्रथमान्त प्रातिपदिक से मत्वर्थ में रूपादाहतप्रशंसयोर्यप् इस सूत्र से यप्, अनुबन्धलोप, तद्धितान्त होने से प्रातिपदिक संज्ञा होने और सुप् का लोप होने पर रूप+य इस स्थिति में यस्येति च से अकार का लोप होने पर पुनः एकदेशविकृतमनन्यवत् इस न्याय से विभक्ति कार्य होने पर रूप्यम् यह रूप है। प्रशस्तं रूपमस्य अस्ति – रूप्यो गौः।

टिप्पणियाँ

29.14 व्रीह्यादिभ्यश्च॥ (५.२.११६)

सूत्रार्थ – व्रीह्यादि प्रथमान्त प्रातिपदिकों से तदस्यास्त्यस्मिन् इस अर्थ में इनि और ठन् प्रत्यय विकल्प से होते हैं।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में पद द्वय है। व्रीहिः आदिर्येषां ते व्रीह्यादयः, तेभ्यः व्रीह्यादिभ्यः यह बहुव्रीहिसमासान्त पद है। च यह अव्ययपद है।

तद्धिताः, प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, समर्थानां प्रथमाद्वा ये अधिकार सूत्र आते हैं। तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् इस सूत्र से तद्, अस्य, अस्ति, अस्मिन् यह पद अनुवर्तित होता है। प्राणिस्थादातो लजन्यतरस्याम् यहाँ से अन्यतरस्याम् यह पद अनुवर्तित होता है। व्रीह्यादिभ्यः इसके साथ प्रथमान्तस्य प्रातिपदिकस्य इसका सम्बन्धवश वचनपरिवर्तन होने से प्रथमान्तेभ्यः प्रातिपदिकेभ्यः यह अर्थ आता है। अतः सूत्रार्थ होता है – व्रीह्यादि प्रथमान्त प्रातिपदिकों से तदस्यास्त्यस्मिन् इस अर्थ में इनि और ठन् प्रत्यय विकल्प से होते हैं। दूसरे पक्ष में मतुप् प्रत्यय होता है। चकार से मतुप्-प्रत्यय का संग्रहण किया जाता है।

उदाहरण – व्रीहयः सन्त्यस्मिन् इस विग्रह में व्रीहि प्रातिपदिक से व्रीह्यादिभ्यश्च इस सूत्र से इनिप्रत्यय और ठन्प्रत्यय होता है। इनि प्रत्यय पक्ष में अनुबन्धलोप होने पर इनिप्रत्यय का तद्धितान्त होने से प्रातिपदिकसंज्ञा और सुलोप होता है। यस्येति च इस से इकार का लोप होने पर विभक्ति कार्य में व्रीही यह रूप है।

ठन्प्रत्यय पक्ष में तो व्रीहि प्रातिपदिक से प्रकृतशास्त्र से ठन्प्रत्यय होता है। तत्पश्चात् अनुबन्धलोप, प्रातिपदिकसंज्ञा और सुलोप होता है। तत्पश्चात् ठस्येकः इस शास्त्र से ठकार को इकादेश होता है। उसके बाद यस्येति च इस शास्त्र से इकार का लोप होने पर व्रीहिकः यह रूप है। चकार से मतुप्-प्रत्यय के संग्रहण से मतुप् होने पर व्रीहिमान् यह रूप है।

पाठगत प्रश्न 29.3

1. ऊषसुषिमुष्कमधोः सूत्र से कौन सा प्रत्यय होता है?
2. मधुरः यहाँ लौकिक विग्रह क्या है?
3. केशवः यहाँ किस सूत्र से कौन सा प्रत्यय है?
4. अदन्त प्रातिपदिक से कौन सा प्रत्यय होता है?
5. आहतप्रशंसयोः यहाँ कौन सी विभक्ति है?
6. व्रीह्यादिभ्यः सूत्र से कौन से प्रत्यय होते हैं?

29.15 अस्मायामेधास्रजो विनिः॥ (५.२.१२१)

सूत्रार्थ – असन्त माया-मेधा-स्रज् इन प्रथमान्त प्रातिपदिकों से तदस्यास्त्यस्मिन् इस अर्थ में तद्धितसंज्ञक विनि प्रत्यय विकल्प से होता है।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र है। इस सूत्र में पद द्वय है। अस् च माया च मेधा च स्रक् च इति अस्मायामेधास्रज्, तस्मात् अस्मायामेधास्रजः यहाँ समाहारद्वन्द्व है। अस्मायामेधास्रजः यह पञ्चम्यन्त पद है। विनिः यह प्रथमान्त पद है।

तद्धिताः, प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, समर्थानां प्रथम द्वितीय अधिकार सूत्र आते हैं। तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् इस सूत्र से तद्, अस्य, अस्ति, अस्मिन् यह पद अनुवर्तित होता है। प्राणिस्थादातो लजन्यतरस्याम् इससे अन्यतरस्याम् यह पद अनुवर्तित होता है। अस् यह प्रातिपदिक का विशेषण है। अत येन विधिस्तदन्तस्य इस सूत्र से असन्तं प्रातिपदिकम् यह प्राप्त होता है। अतः सूत्रार्थ होता है – असन्त माया-मेधा-स्रज् इन प्रथमान्त प्रातिपदिकों से तदस्यास्त्यस्मिन् इस अर्थ में तद्धितसंज्ञक विनि प्रत्यय विकल्प से होता है। अन्यतरस्याम् इस पदस्य ग्रहण होने से विनिप्रत्यय अभावपक्ष में मतुप्-प्रत्यय होता है।

उदाहरण – यशः अस्य अस्ति इस विग्रह में यशस् यह असन्त प्रातिपदिक है। अतः अस्मायामेधास्रजो विनिः इस शास्त्र से विनिप्रत्यय होता है। तब अनुबन्धलोप होने पर यशस्+विन् यह स्थिति होती है। यह समुदाय तद्धितान्त है। अतः प्रातिपदिकसंज्ञा और सुलोप होता है। तत्पश्चात् यशस्विन् यह होने पर एकदेशविकृतमनन्यवत् इस न्याय से प्रातिपदिकसंज्ञा होती है। तब सुप्रत्यय होता है। तत्पश्चात् सौ च इस शास्त्र से उपधादीर्घ होता है। उसके बाद अपृक्त सकार और पदान्त नकार का लोप तथा वर्णमेलन होने पर यशस्वी यह रूप है। विनिप्रत्यय के अभावपक्ष में मतुप्-प्रत्यय होने पर यशस्वान् यह रूप है। इस प्रकार ही मायामेधास्रज् इन प्रातिपदिकों से विनिप्रत्यय करने पर मायावी, मेधावी, स्रग्वी ये रूप होते हैं। विनिप्रत्यय के अभावपक्ष मे तो मतुप्-प्रत्यय होने पर मायावान्, मेधावान्, स्रग्वान् ये रूप हैं।

29.16 वाचो ग्मिनिः॥ (५.२.१२४)

सूत्रार्थ – प्रथमान्त प्रातिपदिक वाच् तदस्यास्त्यस्मिन् इस अर्थ में तद्धितसंज्ञक ग्मिनि प्रत्यय हो।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र है। इसमें दो पद हैं। वाचः यह पञ्चम्यन्त पद है। ग्मिनिः यह प्रथमान्त पद है।

तद्धिताः, प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, समर्थानां प्रथम द्वितीय ये अधिकार सूत्र आते हैं। तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् इस सूत्र से तद्, अस्य, अस्ति, अस्मिन् यह पद अनुवर्तित होता है। अतः सूत्रार्थ होता है – प्रथमान्त प्रातिपदिक वाच् से तदस्यास्त्यस्मिन् अर्थ में तद्धितसंज्ञक ग्मिन प्रत्यय हो।

टिप्पणियाँ

उदाहरण – प्रशस्ता वाग् अस्य अस्ति इस विग्रह में प्रथमान्त प्रातिपदिक वाच् से तदस्य अस्ति इस अर्थ में वाचो ग्मिनिः इस सूत्र से ग्मिनिप्रत्यय होता है। तत्पश्चात् अनुबन्धलोप होने पर तद्धितान्त होने से प्रातिपदिकसंज्ञा होने पर सुप् का लोप होने पर वाच् + ग्मिन् यह स्थिति होती है। ततः स्वादिष्वसर्वनामस्थाने इस सूत्र से पदसंज्ञा होती है। उसके बाद चोः कुः इससे पदान्त चकार का ककार होता है। उसके बाद झलां जशोऽन्ते इस सूत्र से ककार का गकार होता है। तत्पश्चात् प्रातिपदिकसंज्ञा होने और विभक्ति कार्य होने पर वर्णमेलन से वाग्ग्मी यह रूप है।

29.17 आलजाटचौ बहुभाषिणि॥ (५.२.१२५)

सूत्रार्थ – बहुभाषण अर्थ में प्रथमान्त प्रातिपदिक वाच् से तदस्यास्त्यस्मिन् अर्थ में तद्धितसंज्ञक आलच् तथा आटच् प्रत्यय होते है।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र है। इसमें सूत्र में दो पद हैं। आलच् च् आटच् च इति आलजाटचौ यह इतरेतरद्वन्द्व समास है। आलजाटचौ यह प्रथमान्त पद है। बहुभाषिणि यह सप्तम्यन्त पद है।

तद्धिताः, प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, समर्थानां प्रथम द्वितीय ये अधिकार सूत्र आते हैं। तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् इस सूत्र से तद्, अस्य, अस्ति, अस्मिन् यह पद अनुवर्तित होता है। वाचो ग्मिनिः इस सूत्र से वाचः यह पद अनुवर्तित होता है। अतः सूत्रार्थ होता है – बहुभाषिणी अर्थ में प्रथमान्त वाच् इस प्रातिपदिक से तदस्यास्त्यस्मिन् इस अर्थ में तद्धितसंज्ञक आलच् और आटच् प्रत्यय होते हैं। वार्तिककार के मत से कुत्सित होने पर यह कहना चाहिए। उससे जो व्यक्ति बहुत बुरा बोलता है,उसके लिए वाचालः, वाचाटः यह प्रयोग होता है। जो बहुत बोलता है किन्तु अच्छा बोलता है, तो उसके लिए वाग्ग्मी यह प्रयोग होता है।

उदाहरण– कुत्सितं बहु भाषते इस विग्रह में प्रथमान्त वाच् इस प्रातिपदिक से मत्वर्थ में और बहुभाषण अर्थ में आलजाटचौ बहुभाषिणि इस सूत्र से आलच् तथा आटच् होते हैं। आलच् प्रत्यय पक्ष में अनुबन्धलोप होने पर वाच्+आल यह स्थिति होती है। यह समुदाय तद्धितान्त है। अतः प्रातिपदिकसंज्ञा और सुप् का लोप होता है। तत्पश्चात् प्रातिपदिकसंज्ञा और विभक्ति कार्य होने पर वर्णमेलन से वाचालः यह रूप है।

आटच्प्रत्यय पक्ष में अनुबन्धलोप होने पर वाच्+आट यह स्थिति होती है। यह समुदाय तद्धितान्त है। अतः प्रातिपदिकसंज्ञा और सुप् का लोप होता है। तत्पश्चात् प्रातिपदिकसंज्ञा और विभक्ति कार्य होने पर वर्णमेलन से वाचाटः यह रूप है।

29.18 अर्शआदिभ्योऽच्॥ (५.२.१२७)

सूत्रार्थ – अर्श आदि प्रथमान्त प्रातिपदिकों से तदस्यास्त्यस्मिन् इस अर्थ में तद्धितसंज्ञक अच्प्रत्यय होता है।

सूत्रव्याख्या – इस सूत्र से अच् का विधान होता है। अतः यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में पदद्वय है। अर्शस् आदिर्येषां ते अर्शादयस्तेभ्यः अर्शादिभ्यः यह बहुव्रीहिसमास है। अर्शआदिभ्यः यह पञ्चम्यन्त पद है। अच् यह प्रथमान्त पद है।

तद्धिताः, प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, समर्थानां प्रथम द्वितीय ये अधिकार सूत्र आते हैं। तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् इति सूत्रात् तद्, अस्य, अस्ति, अस्मिन् यह पद अनुवर्तित होता है। अतः सूत्रार्थ होता है– अर्शआदि प्रथमान्त प्रातिपदिकों से तदस्यास्त्यस्मिन् इस अर्थ में तद्धितसंज्ञक अच्प्रत्यय होता है। यह आकृतिगण है। अर्थात् जिन शब्दों का अर्शआदिगण में पाठ नहीं है, तथापि अर्शादिगण में पढ़े गए शब्दों के समान दृष्टिगोचर होता है। अतः अर्शआदिगण आकृतिगण स्वीकार होने से प्रकृतसूत्र से अच् प्रत्यय होता है।

उदाहरण – अर्शांसि विद्यन्ते यस्य इस विग्रह में अर्शआदिगण में पठित अर्शस् इस शब्द का अर्शआदिभ्योऽच् इति सूत्र से अच्–प्रत्यय होता है। तत्पश्चात् अनुबन्धलोप होने पर तद्धितान्तस् की प्रातिपदिकसंज्ञा और सुलोप होता है। तत्पश्चात् अर्शस् + अ इस स्थिति में एकदेशविकृतमनन्यवत् इस न्याय से तत्पश्चात् प्रातिपदिकसंज्ञा तथा विभक्तिकार्य होने पर वर्णमेलन से अर्शसः यह रूप होता है।

29.19 सुखादिभ्यश्च॥ (५.२.१३१)

सूत्रार्थ – सुखादिगण में पठित प्रथमान्त प्रातिपदिकों से तदस्यास्त्यस्मिन् अर्थ में तद्धितसंज्ञक इनि प्रत्यय होता है।

सूत्रव्याख्या – प्रकृतसूत्र से इनि प्रत्यय का विधान है। इसलिए यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में दो पद है। सुखम् आदिर्येषां ते सुखादयः, तेभ्यः सुखादिभ्यः यह बहुव्रीहिसमासान्त पद है। सुखादिभ्यः इति पञ्चम्यन्त पद है। च यह अव्ययपद है।

तद्धिताः, प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, समर्थानां प्रथमाद्वा ये अधिकार सूत्र आते हैं। तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् इति सूत्रात् तद्, अस्य, अस्ति, अस्मिन् यह पद अनुवर्तित होता है। द्वन्द्वोपतापगर्ह्यात् प्राणिस्थादिनिः इस सूत्र से इनिः अनुवर्तित होता है। अतः सूत्रार्थ होता है – सुखादिगण में पठित प्रथमान्त प्रातिपदिकों से तदस्यास्त्यस्मिन् अर्थ में तद्धितसंज्ञक इनि प्रत्यय होता है।

शङ्का– सुखादिप्रातिपदिक अदन्त है। अतः अदन्तत्व होने से अत इनिठनौ इस सूत्र से इनि प्रत्यय होता है। तो सुखादिभ्यश्च यह शास्त्र किसलिए किया गया है।

समाधान – अत इनिठनौ इस सूत्र से अदन्त प्रातिपदिक से इनिप्रत्यय और ठन्प्रत्यय होते हैं। सुखादि प्रातिपदिकों से केवल इनिप्रत्यय हो यह चिन्तन करके यह प्रकृतशास्त्र है। इन अदन्तप्रातिपदिकों से इनि प्रत्यय और ठन्प्रत्यय प्राप्त होने पर सुखादिभ्यः इस सूत्र से केवल इनि प्रत्यय होता है, ठन्प्रत्यय नहीं।

उदाहरण – सुखम् अस्य अस्ति इस विग्रह में सुखादिगण में पठित प्रातिपदिक सुख यह है अतः सुखादिभ्यश्च इस सूत्र से इनिप्रत्यय होता है। तत्पश्चात् अनुबन्धलोप होने पर तद्धितान्त होने के

टिप्पणियाँ

कारण प्रातिपदिक संज्ञा और सुप् का लोप होने पर सुख + इन् यह स्थिति होती है। एकदेशविकृत मनन्यवत् इति न्याय से तत्पश्चात् प्रातिपदिक संज्ञा होने व विभक्ति कार्य होने पर सुखी यह रूप है।

29.20 धर्मशीलवर्णान्ताच्च॥ (५.२.१३२)

सूत्रार्थ – प्रथमान्त धर्मशीलवर्णान्त प्रातिपदिकों से तदस्यास्त्यस्मिन् अर्थ में तद्धितसंज्ञक इनिप्रत्यय हो।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र है इस सूत्र में दो पद हैं। धर्मश्च शीलञ्च वर्णश्च धर्मशीलवर्णास्ते अन्ते यस्य स धर्मशीलवर्णान्तः, तस्मात् धर्मशीलवर्णान्तात् यह द्वन्द्वगर्भबहुव्रीहिसमासान्त पद है। धर्मशीलवर्णान्तात् यह पञ्चम्यन्त पद है। च यह अव्ययपद है।

तद्धिताः, प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, समर्थानां प्रथमाद्वा ये अधिकार सूत्र आते हैं। तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् इस सूत्र से तद्, अस्य, अस्ति, अस्मिन् यह पद अनुवर्तित होता है। द्वन्द्वोपतापगर्ह्यात् प्राणिस्थादिनिः इस सूत्र से इनिः अनुवर्तित होता है। अतः सूत्रार्थ होता है – प्रथमान्त धर्मशीलवर्णान्त प्रातिपदिकों से दस्यास्त्यस्मिन् अर्थ में तद्धितसंज्ञक इनिप्रत्यय हो।

उदाहरण – ब्राह्मणधर्मः अस्य अस्ति इस विग्रह में ब्राह्मणधर्म यह प्रातिपदिक धर्मशब्दान्त है। अतः धर्मशीलवर्णान्ताच्च इस शास्त्र से इनिप्रत्यय होता है। तत्पश्चात् अनुबन्धलोप, तद्धितान्त की प्रातिपदिकसंज्ञा सुलोप होने पर ब्राह्मणधर्म + इन् यह स्थिति होती है। तत्पश्चात् यस्येति च इस से मकारोत्तर अकार का लोपे व विभक्तिकार्य होने पर ब्राह्मणधर्मी यह रूप है। इस प्रकार ही शीलान्तशब्द और वर्णान्तशब्दों का धर्मशीलवर्णान्ताच्च इस सूत्र से इनिप्रत्यय होने पर ब्राह्मणशील, ब्राह्मणधर्मी इत्यादि रूप हैं।

29.21 अहंशुभमोर्युस्॥ (५.२.१४०)

सूत्रार्थ – अहम् और शुभम् इन दोनों अव्ययों से तदस्यास्त्यस्मिन् अर्थ में तद्धितसंज्ञक युस्प्रत्यय होता है।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र है। अहं च शुभं च इति अहंशुभमौ, तयोः अहंशुभयोः इस प्रकार इतरेतरद्वन्द्व समास है। अहंशुभयोः यह षष्ठ्यन्त पद है। परन्तु इस सूत्र में पञ्चम्यर्थ में षष्ठी प्रयोग होता है। युस् यह प्रथमान्त पद है।

तद्धिताः, प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, समर्थानां प्रथम द्वितीय ये अधिकार सूत्र आते हैं। तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् इस सूत्र से तद्, अस्य, अस्ति, अस्मिन् यह पद अनुवर्तित होता है। अहंशुभम् इसका वयं विभक्तिप्रतिरूप अव्यय है। अतः सूत्रार्थ होता है – अहम् तथा शुभम् इन दोनों अव्ययों से तदस्यास्त्यस्मिन् अर्थ में तद्धितसंज्ञक युस्प्रत्यय होता है।

उदाहरण – अहम् अस्य अस्ति इस विग्रह में अहम् यह मकारान्त अव्यय है। अतः अहंशुभमोर्युस् इस सूत्र से युस् प्रत्यय होता है। तत्पश्चात् अनुबन्धलोप होने पर अहम् + यु यह स्थिति होती

है। यह समुदाय तद्धितान्त है। अतः प्रातिपदिकसंज्ञा और सुलोप होता है। तत्पश्चात् यचि भम् इति सूत्र से भसंज्ञा प्राप्त होती है। तत्पश्चात् सिति च इस सूत्र के द्वारा भसंज्ञा को बांधकर पदसंज्ञा का विधान किया जाता है। अहम् इसके मकार के पदान्त होने से मोऽनुस्वारः इस सूत्र से अनुस्वार होने पर अथवा पदान्तस्य इस शास्त्र से अनुस्वार का वैकल्पिक परसवर्ण होने पर अहँय्युः, अहंयुः यह दो रूप होते हैं।

एवमेव शुभम् अस्य अस्ति इस विग्रह में शुभम् यह मकारान्त अव्ययत्व है। अतः अहंशुभमोर्युस् इस सूत्र से युस्-प्रत्यय होता है। तत्पश्चात् अनुबन्धलोप होने पर शुभम् + यु यह स्थिति होती है। यह समुदाय तद्धितान्त है। अतः प्रातिपदिकसंज्ञा और सुलोप होता है तत्पश्चात् यचि भम् इस सूत्र से भसंज्ञा प्राप्त होती है। तत्पश्चात् सिति च इस सूत्र से भसंज्ञा को बांध कर पदसंज्ञा का विधान होता है। शुभम् इसके मकार का पदान्त होने से मोऽनुस्वारः इस सूत्र से अनुस्वार होने पर अथवा पदान्तस्य इस शास्त्र से अनुस्वार का वैकल्पिक परसवर्ण होने पर शुभँय्युः, शुभंयुः यह दो रूप होते है।

पाठगत प्रश्न 29.4

1. 'विनिप्रत्ययविधायक' सूत्र कौन सा है?
2. वाग्मी यहाँ किस सूत्र से कौन सा प्रत्यय है?
3. वाचालः नाम कौन है?
4. अर्शादि से कौन सा प्रत्यय होता है?
5. सुखी यहाँ किस सूत्र से कौन सा प्रत्यय है?
6. अहंशुभमोर्युस् इस का सूत्रार्थ क्या है?

पाठ का सार

तद्धिताः इसके अधिकार में बहुत प्रत्यय विधान किए जाते है। उनमें मतुप्-प्रत्यय भी कोई तद्धितप्रत्यय होता है। प्रायः तद् अस्य अस्ति उत तद् अस्मिन् अस्ति इस अर्थ में मतुप्-प्रत्यय विधान किए जाते हैं। इस अर्थ में ही मतुप्, इनि, ठन्, यप्, विनि, अच्, आटच्, आलच्, युस् ये प्रत्यय विधान किए जाते हैं। यथा- रसः अस्य अस्मिन् वा अस्ति इस अर्थ में रसवान् यह रूप होता है और तद् अस्य अस्मिन् वा अस्ति इस अर्थ में न केवल मतुप्-प्रत्यय होता है अपितु लच्, अच्, इनि, ठन् ये प्रत्यय भी होते हैं। परन्तु मतुप्-प्रत्यय का आधिक्य और प्राथम्य प्रयोग होने से मतुपर्थीयप्रकरणम यह नाम है। इस प्रकरण में गुणवचन प्रातिपदिकों तदस्य अस्मिन् वा अस्ति इस अर्थ में जो मतुप्-प्रत्यय विधान किए जाते हैं। उनका गुणवचनेभ्यो मतुपो लुगिष्ट इस से मतुप्-प्रत्ययों का लोप होता है। जैसे शुक्लः। पुनः ग्मिनि, आलच्, आटच् इत्यादि प्रत्यय भी होते हैं। यथा वाक्

अस्य अस्ति इस अर्थ में ग्मिनि-प्रत्यय होने पर वाग्ग्मी यह रूप है। कुत्सितं बहु भाषते इस विग्रह में आलच्-प्रत्यय और आटच्-प्रत्यय होने पर वाचाल:, वाचाट: इत्यादि रूप होते हैं और अहं शुभं इन दोनों अव्ययों से युस्-प्रत्यय होता है इन सभी प्रत्ययों को स्वीकार करके मतुपर्थीयप्रकरण यह है।

पाठांत प्रश्न

1. 'तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्' इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
2. गोमान् इस रूप को सिद्ध कीजिए।
3. 'प्राणिस्थादातो लजन्यतरस्याम्' इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
4. लोमश: इस रूप को सिद्ध कीजिए।
5. 'लोमादिपामादिपिच्छादिभ्य: शनेलच:' इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
6. 'अत इनिठनौ' इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
7. दण्डी इस रूप को सिद्ध कीजिए।
8. 'वाचो ग्मिनि:' इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
9. सुखी इस रूप को सिद्ध कीजिए।
10. 'आलजाटचौ बहुभाषिणि' इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
11. 'सुखादिभ्यश्च' इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
12. 'अहंशुभमोर्युस्' इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
13. 'अस्मायामेधास्रजो विनि:' इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
14. 'मादुपधायाश्च मतोर्वोऽयवादिभ्य:' इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
15. 'तसौ मत्वर्थे' इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

29.1

1. तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् यह सूत्र है।
2. तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् इस सूत्र से मतुप्-प्रत्यय होता है।
3. काल विवक्षा है।
4. तद् अस्य अस्ति इत्यर्थे तद् अस्मिन् अस्ति इस अर्थ में रसादिगण में पठित प्रातिपदिक से मतुप्-प्रत्यय होता है।

5. मकार को वकार विधान।
6. भसंज्ञा होती है।

29.2

1. प्राणिस्थवाचक प्रथमान्त अदन्त प्रातिपदिक से तदस्यास्त्यस्मिन् इस अर्थ में विकल्प से तद्धितसंज्ञक लच्-प्रत्यय होता है।
2. विधिसूत्र।
3. शनेलचः।
4. प्रज्ञाश्राद्धार्चाभ्यः णः इस सूत्र से णप्रत्यय।
5. उरच्-प्रत्यय।
6. इतरेतरद्वन्द्व।

29.3

1. रप्रत्यय।
2. मधु अस्य अस्ति यह विग्रह है।
3. केशाद्वोऽन्यतरस्याम् इस सूत्र से वप्रत्यय।
4. इनिठनौ।
5. सप्तमी विभक्ति।
6. इनिठनौ मतुप् च।

29.4

1. अस्मायामेधास्रजो विनिः।
2. वाचो ग्मिनिः इस सूत्र से ग्मिनि-प्रत्यय।
3. कुत्सितं बहु भाषते यः।
4. अच्-प्रत्यय।
5. सुखादिभ्यश्च इस सूत्र से इनि-प्रत्यय।
6. अहम् और शुभम् इन दोनों अव्ययों से तदस्यास्त्यस्मिन् अर्थ में तद्धितसंज्ञक युस्प्रत्यय होता है।

॥ उनतीसवां पाठ समाप्त॥

30

रक्ताद्यर्थक प्रकरण

तद्धित अधिकार में बहुत प्रकार के सूत्र पढ़े गए हैं यह आप जान चुके हैं।उन सूत्रों की अनेक प्रकार के प्रकरणों में व्याख्या है। वह आप लघुसिद्धांतकौमुदी आदि ग्रंथों में देखने के योग्य हैं। यहां तो उनकी व्याख्या के लिए चार पाठ परिकल्पित हैं। पूर्व में दो पाठों में अपत्याधिकार प्रकरणस्थ और मत्वर्थीय प्रकरणस्थ सूत्रों का परिचय प्राप्त किया है। अवशिष्ट प्रकरणस्थ सूत्र के लिए दो पाठ कल्पित हैं। उनमें प्रथम रक्ताद्यर्थक प्रकरण नामक पाठ में अर्थात् इस (तृतीय) पाठ में रक्ताद्यर्थक प्रकरण से यदधिकार प्रकरण तक आलोचना विद्यमान है। तद्धिताः, समर्थानां प्रथम द्वितीय, प्रत्ययः, परश्च तद्धितप्रत्यय विधायक सूत्रों में अधिकार किया जाता है।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप सक्षम होंगे :

- सरलता से रक्ताद्यर्थक प्रत्ययों को जान पाने में;
- रक्ताद्यर्थक प्रकरण के सूत्रों के अर्थों को जान पाने में;
- लौकिक अलौकिक विग्रहों को जान पाने में;
- रक्ताद्यर्थक प्रकरण के सूत्रों के उदाहरणों को जान पाने में;
- तद्धितप्रत्यय के प्रयोग विषय में सहजता से जान पाने में;
- सर्वोपरि तद्धितान्त पद का प्रयोग कहाँ और कैसे करना चाहिए यह जान पाने में।

30.1 तेन रक्तं रागात्॥ (४.२.१)

सूत्रार्थ - रज्यते अनेन इस अर्थ में तृतीयान्त रङ्गवाचक समर्थ प्रातिपदिक से परे तद्धितसंज्ञक अण् प्रत्यय होता है।

सूत्रव्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस सूत्र में तीन पद हैं। तेन यह तृतीयान्त का अनुकरण करने वाला लुप्त पञ्चम्यन्त है। अर्थात् कषायेण युक्तम् इत्यादि में कषायेण इत्यादि का अनुकरण तेन इसके द्वारा किया जाता है। रक्तम् यह प्रथमैकवचनान्त है, रागात् यह पञ्चम्येकवचनान्त है। प्राग्दीव्यतोऽण् इससे प्राग् यह अनुवर्तित होता है। इस सूत्र में प्रथमोच्चारित सुबन्त पद तेन यह तृतीयान्त है। अतः समर्थ पदों में जो तृतीयान्त पद होता है, वह ही इस अर्थ में विधीयमान प्रत्यय की प्रकृति होगी। रागात् यह प्रातिपदिक होने से इस विशेष्य का विशेषण है। रज्यते अनेन इति रागः अर्थात् जिस द्रव्य से रञ्जन(रंग) होता है, वह राग कहलाता है। यथा नीला, पीला, कषाय आदि रञ्जक द्रव्य राग कहलाता है, इस प्रकार सूत्र अर्थ हुआ -समर्थों के मध्य में जो प्रथम तृतीयान्त समर्थ रागवाची प्रातिपदिक है उससे रक्त इस अर्थ में अण् आदि हो यह सूत्रार्थ सिद्ध होता है।

1. **विशेष** - पूर्व अपत्याधिकार प्रकरण में आपने समर्थ विभक्ति षष्टि होती है यह देखा है। रक्तार्थ में तृतीया विभक्ति समर्थ होती है, यह तो अभी जाना हैं। समर्थ विभक्तियों के निर्देश के लिए सूत्रकार प्रायः उन-उन सूत्रों में उस शब्द को प्रयुक्त करता है। यथा प्रथमा के लिए सः, सा, तद्। द्विताया के लिए तम्। तृतीया के लिए तेन। चतुर्थी के लिए तस्मै। पञ्चमी के लिए तस्मात्। षष्ठी के लिए तस्य। सप्तमी के लिए तस्मिन्। सूत्रनिर्दिष्ट विभक्ति के अनुसार प्रातिपदिक में भी वह वह विभक्ति अर्थात् सु-अम्-टा-ङे-ङसि-ङस्-ङि यह विभक्ति होती है। और आवश्यक होने पर द्विवचन अथवा बहुवचन प्रातिपदिक से प्रयोग कर के लौकिक अलौकिक विग्रह आदि करना चाहिए। तत्पश्चात् प्रातिपदिक से तद्धितप्रत्यय विहित होने पर कृत्तद्धितसमासाश्च इस से प्रातिपदिकसंज्ञा होने पर सुपो धातुप्रातिपदिकयोः इस से अन्तर्वर्ती विभक्ति का लोप होता है। तत्पश्चात् आदिवृद्धि प्राप्त है चेत् होती है। तत्पश्चात् भसंज्ञक वर्ण का लोप होता है। पुनः एकेदशविकृतन्याय से पूर्व में किया गया प्रातिपदिकत्व अक्षुण्ण होता है यह मानकर स्वादि विभक्ति होती है। तत्पश्चात् एकवचन विवक्षा में सुप्रत्यय होने पर प्रथमान्तरूप दर्शाया गया है। प्रत्ययों में प्रायः कोई अनुबन्ध होता है। और उसका आदि वृद्धि आदि प्रयोजन भी होता है। पुनः प्रत्यय के स्थान पर कभी आदेश भी विधान किया है यह सब ध्यान योग्य है।

   उदाहरणम् - कषायेण रक्तं वस्त्रं काषायणम्। कषायेण रक्तम् इस अर्थ में कषाय टा इस रागवाचक तृतीयान्त सुबन्त से प्रकृत सूत्र से अण्प्रत्यय और अनुबन्धलोप होने पर कषाय टा अ यह होने पर समुदाय की तद्धितान्त होने के कारण कृत्तद्धितसमासाश्च इस सूत्र से प्रातिपदिकसंज्ञा होने पर सुपो धातुप्रातिपदिकयोः इस सूत्र से सुप् (टा-विभक्ति) का लोप होकर कषाय अ यह होने पर अणः णित्त्वात् तद्धितेष्वचामादेः इस सूत्र से आदि वृद्धि होने पर काषाय अ यह हुआ। तत्पश्चात् यचि भम् इस सूत्र से भसंज्ञक होने से यस्येति च इस से उसका (भसंज्ञक) लोप होने पर काषाय् अ इस स्थिति में एकदेशविकृत न्याय से प्रातिपदिक

टिप्पणियाँ

होने के कारण सु-विभक्ति में (वस्त्रम् इस के विशेष्यानुसार) नपुंसकलिङ्ग होने से सु को अम् आदेश और पूर्वरूपैकादेश अकार होने पर काषायम् यह रूप सिद्ध होता है। पुंल्लिङ्ग में काषायः, स्त्रीलिङ्ग में काषायी यह रूप होता है। इस प्रकार ही माञ्जिष्ठम्, माञ्जिष्ठः, माञ्जिष्ठी इत्यादि रूप सिद्ध होते हैं।

30.2 नक्षत्रेण युक्तः कालः॥ (४.२.३)

सूत्रार्थ – नक्षत्रवाचक तृतीयान्त समर्थ प्रातिपदिक से तेन युक्तम् इस अर्थ में तद्धितसंज्ञक अण्प्रत्यय होता है नक्षत्रयुक्तकालार्थ गम्यमान होने पर।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र है। इस सूत्र में तीन पद है। नक्षत्रेण यह तृतीयान्तानुकरण लुप्तपञ्चम्यन्त पद है। अर्थात् पुष्येण युक्तः इत्यादि में पुष्येण इत्यादि का अनुकरण नक्षत्रेण इस के द्वारा किया जाता है। युक्तः, कालः यह दोनों भी प्रथमैकवचनान्त है। प्राग्दीव्यतोऽण् इस सूत्र से अण् यह अनुवर्तित होता है। तेन रक्तं रागात् यहाँ से तेन यह पद अनुवर्तित होता है।, और वह लुप्तपञ्चम्यन्त तृतीयान्त का अनुकरण है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः, समर्थानां प्रथम द्वितीय ये सब अधिकार करते हैं। प्रत्ययः इसका विशेषण है तद्धितः, परः यह। अतः सूत्र से जो प्रत्यय विधान किया जाता है, वह तद्धितसंज्ञक और पर होता है। तद्धितप्रत्यय प्रातिपदिक से विधान किया जाता है यह स्मरण रखना चाहिए। प्रातिपदिक का विशेषण समर्थं यह है। सूत्र में नक्षत्र शब्द से नक्षत्र युक्त चन्द्रमा का बोध होता है। इस प्रकार नक्षत्र वाचक तृतीयान्त समर्थ प्रातिपदिक से तेन युक्तम् इस अर्थ में तद्धितसंज्ञक अण्प्रत्यय बाद में होता है, नक्षत्रयुक्तकाल अर्थ गम्यमान होने पर।यह सूत्रार्थ सिद्ध होता है।

उदाहरणम् – पुष्येण युक्तम् अहः, पौषम् अहः। पुष्येण युक्तः कालः इस अर्थ में पुष्य टा इस तृतीयान्त नक्षत्रवाचक सुबन्त से प्रकृतसूत्र से अण् प्रत्यय, प्रातिपदिकसंज्ञा, सुप् का लोप, आदिवृद्धि, भसंज्ञा होने पर यस्येति च इस सूत्र से अकारलोप होने पर पौष्य् अ इस स्थिति में तिष्यपुष्ययोर्नक्षत्राणि यलोप इति वाच्यम् इस से यकारलोप होने पर अहः। विशेष्य के अनुसार नपुंसकलिङ्ग में स्वादिकार्य होने पर पौषम् यह रूप सिद्ध होता है।स्त्रीलिङ्ग में पौषी रात्रिः यह प्रयोग है।

30.3 दृष्टं साम॥ (४.२.७)

सूत्रार्थः – दृष्टं साम अर्थात् ज्ञानरूपतया प्राप्तं साम इस अर्थ में तृतीयान्त समर्थ प्रातिपदिक से तद्धितसंज्ञक अण्प्रत्यय होता है।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र है।इस सूत्र में दो पद है। दृष्टं साम यह दोनों भी प्रथमैकवचनान्त पद है। तेन रक्तं रागात् यहाँ से तेन यह पद अनुवर्तित होता है। और वह तृतीयान्त का अनुकरण लुप्तपञ्चम्यन्त पद है। प्राग्दीव्यतोऽण् इस से अण् यह अनुवर्तित होता है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः, समर्थानां प्रथम द्वितीय इति एते अधिक्रियन्ते। तेन पूर्व में कहा गया सूत्रार्थ सिद्ध होता है।

उदाहरणम् – वसिष्ठेन दृष्टं साम वासिष्ठं साम। वसिष्ठेन दृष्टमिति लौकिक विग्रह होने पर वसिष्ठ टा इस तृतीयान्त सुबन्त से दृष्टं साम इस प्रकृतसूत्र से अण् प्रत्यय, तद्धितान्त होने से प्रातिपदिकसंज्ञा, सुप् लोप, आदिवृद्धि, भसंज्ञक अकार का लोप होने पर वासिष्ठ इस स्थिति में एकदेशविकृतन्याय से प्रातिपदिक होने के कारण स्वादि कार्य होकर वासिष्ठम् यह सिद्ध होता है। साम इस विशेष्य के अनुसार नपुंसकलिङ्ग में यह प्रयोग है। इस प्रकार ही विश्वामित्रेण दृष्टं वैश्वामित्रं साम इत्यादि रूप सिद्ध होता है।

30.4 सास्य देवता॥ (४.२.२४)

सूत्रार्थ – देवता विशेष वाचक प्रथमान्त समर्थ प्रातिपदिक से अस्य इस अर्थ में तद्धित अण् प्रत्यय हो।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र है। सूत्र में तीन पद हैं। सा यह प्रथमान्त का अनुकरण लुप्तपञ्चम्यन्त है, अस्य यह षष्ठी एवचनान्त है, देवता यह प्रथमा एकवचनान्त है। प्राग्दीव्यतोऽण् इस सूत्र से अण् यह अनुवर्तित होता है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः, समर्थानां प्रथम द्वितीय ये अधिकार करते हैं। यज्ञादि में जिसको उद्देश्य करके हवि प्रदान की जाती है, वह देवता है। अथवा मन्त्रादि में जिसकी स्तुति अथवा प्रतिपादन होता है, वह देवता कहलाता है। इस प्रकार सा अस्य देवता अर्थ में देवतावाचक प्रथमान्त समर्थ प्रातिपदिक से अण्प्रत्यय होता है।

उदाहरणम्– इन्द्रो देवता अस्येति ऐन्द्रं हविः। इन्द्रो देवता अस्य यह लौकिक विग्रह करने पर इन्द्र सु इस प्रथमान्त सुबन्त से सास्य देवता इस के योग से अण् प्रत्यय, सुब्लोप आदिवृद्धि, ऐकारादेश, भसंज्ञक अकार का लोप होने पर ऐन्द्र्अ इस स्थिति में वर्णसम्मेलन होने पर ऐन्द्र यह हुआ। तत्पश्चात् हविः इस विशेष्य के नपुंसकलिङ्ग अनुसार यहाँ भी नपुंसकलिङ्ग होने से सुप्रत्यय होने पर सु को अम् आदेश होकर पूर्वरूपैकादेश होने पर ऐन्द्रम् यह नपुंसकपद का प्रयोग है।

इस प्रकार ही पशुपतिः देवता अस्य इस अर्थ में पाशुपतम् इत्यादि पद प्रयोग है।

30.5 ग्रामजनबन्धुभ्यस्तल्॥ (४.२.४३)

सूत्रार्थः – षष्ठ्यन्त समर्थ ग्राम प्रातिपदिक जन प्रातिपदिक और बन्धु प्रातिपदिक से समूह अर्थ में तद्धितसंज्ञक तल्प्रत्यय होता है।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में दो पद है। ग्रामजनबन्धुभ्यः यह पञ्चमी बहुवचनान्त है, तल् यह प्रथमा एकवचनान्त है। ग्रामश्च जनश्च बन्धुश्च तेषामितरेतरयोगद्वन्द्वो ग्रामजनबन्धवः तेभ्यः ग्रामजनबन्धुभ्यः। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः, समर्थानां प्रथम द्वितीय इति एते अधिक्रियन्ते। तस्य समूहः इसका अनुवर्तन होता है। इस प्रकार पूर्वोक्त सूत्रार्थ सिद्ध होता है। तल् का लकार इत्संज्ञक है अतः त मात्र शेष रहता है। लिङ्गानुशासनात् तलन्तं स्त्रियाम् इस सूत्र से सू तल्प्रत्ययान्त शब्द का स्त्रीलिङ्ग में प्रयोग होता है। अतः तल्प्रत्यय से परे स्त्रीबोधक टाप् प्रत्यय होता है,यह जानना चाहिए।

टिप्पणियाँ

उदाहरणम् – जनानां समूहः जनता। जनानां समूहः इस लौकिक विग्रह में जन आम् इति षष्ठयन्त सुबन्त से प्रकृतसूत्र से तल्प्रत्यय, अनुबन्धलोप,प्रातिपदिकसंज्ञा, सुप् का लोप होने पर जनत इस स्थिति में तलन्त होने स स्त्रीलिङ्ग में अजाद्यतष्टाप् इस सूत्र से टाप्, अनुबन्धलोप, सवर्णदीर्घ होने पर जनता यह हुआ। तत्पश्चात् सु प्रत्यय होकर सु का हल्ङ्यादिलोप होने पर जनता यह रूप सिद्ध हुआ। इस प्रकार ही ग्रामाणां समूहः इति ग्रामता, बन्धूनां समूहः बन्धुता इत्यादि सिद्ध होते है।

पाठगत प्रश्न 30.1

1. तेन रक्तं रागात् इस का क्या अर्थ है?
2. काषायी इत्यत्र कौन सा तद्धितप्रत्यय है?
3. वासिष्ठम् शब्द का क्या अर्थ है?
4. पौषम् यहाँ कौन सा तद्धितप्रत्यय है?
5. जनता यहाँ कौन सा तद्धितप्रत्यय है?
6. जनता शब्द का क्या अर्थ है?
7. ऐन्द्रम् यहाँ अण्प्रत्यय किससे होता है ?

30.6 तदधीते तद्वेद॥ (४.२.५९)

सूत्रार्थः – तद् अधीते अथवा तद् जानाति इस अर्थ में द्वितीयान्त समर्थ प्रातिपदिक से अण्प्रत्यय होता है।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र है। इस सूत्र में चार पद है। तद् यह द्वितीयान्त अनुकरण लुप्तपञ्चम्यन्त पद है, अधीते यह तिङन्त क्रियापद है। तद् इति द्वितीयान्त अनुकरण लुप्तपञ्चम्यन्त है, वेद यह तिङन्त क्रियापद है। प्राग्दीव्यतोऽण् इस से अण् यह अनुवर्तित होता है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः, समर्थानां प्रथमाद्वा ये एते अधिक्रियन्ते। प्रातिपदिकात् यह विशेष्य है अतः उसके साथ अन्वयार्थ द्वितीयान्त तद्शब्द का पञ्चम्यन्त के रूप से विपरिणाम किया जाता है। तद् शब्द से समर्थविभक्ति द्वितीया का बोध होता है। इस प्रकार पूर्वोक्त सूत्रार्थ सिद्ध होता है। यहाँ जो अध्येता है वह ज्ञाता भी हो यह नियम नहीं है अन्यथा तदधीते वेद यह सूत्र का स्वरूप होता। सूत्र का आशय तब – जो पढ़ता है अथवा जो जानता है उसके समान कर्मीभूत शब्द से प्रत्यय होता है। तत्पश्चात् पठितुः अथवा ज्ञातुः बोध होता है।

उदाहरणम् – व्याक्रियन्ते व्युत्पाद्यन्ते अनेन शब्दा इति व्याकरणम्। व्याकरणम् अधीते वेद वा इस लौकिक विग्रह में व्याकरण अम् इस द्वितीयान्त सुबन्त से प्रकृत सूत्र से अण्, प्रातिपदिकसंज्ञा,

सुप् का लोप होकर व्याकरण अ यह हुआ। ततः तद्धितेष्वचामादेः इस सूत्र से वृद्धि प्राप्त होने पर न य्वाभ्यां पदान्ताभ्यां पूर्वौ तु ताभ्यामैच् इस सूत्र से निषेध होने पर यकार से पूर्व ऐकार आगम होने पर व् ऐ याकरण अ इस स्थिति में भसंज्ञक अकार का लोप होने कर वर्णसम्मेलन होने पर वैयाकरण यह हुआ। तत्पश्चात् सुप्रत्यय,रुत्व,विसर्गादि कार्य होने पर वैयाकरणः यह रूप सिद्ध होता है। इस प्रकार छन्दोऽधीते वेद वा छान्दसः इत्यादि रूप सिद्ध होता है।

30.7 क्रमादिभ्यो वुन्॥ (४.२.६१)

सूत्रार्थः – क्रमादिगण में पठित द्वितीयान्त समर्थ प्रातिपदिकों से अधीते अथवा जानाति इस अर्थ में तद्धितसंज्ञक वुन् प्रत्यय होता है।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र है। इस सूत्र में दो पद हैं। क्रमः आदिर्येषां ते क्रमादयः यह तद्गुणसंविज्ञान बहुव्रीहिसमास है, तेभ्यः क्रमादिभ्यः यह पञ्चमी बहुवचनान्त है, वुन् यह प्रथमा एकवचनान्त विधीयमान है। प्राग्दीव्यतोऽण् इस सूत्र से अण् यह अनुवर्तित हुआ है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः, समर्थानां प्रथमाद्वा ये अधिक्रियन्ते। तदधीते तद्वेद यह सूत्र भी अनुवर्तित होता है इस प्रकार उक्तार्थ सम्पादित होता है। वुन् का नकार इत्संज्ञक है, उससे वु यह ही त शेष रहता है। नितः प्रयोजनं ञ्निन्त्यादिर्नित्यम् इस सूत्र से आदि उदात्त का विधान है। युवोरनाकौ इस सूत्र से वु इसका अक यह आदेशो होता है। क्रमादिगण में क्रम, पद, शिक्षा, मीमांसा ये शब्द पढ़े गए हैं।

उदाहरणम् – क्रमकः। क्रमम् अधीते क्रमं वेद वा इति लौकिक विग्रह में क्रम अम् इस द्वितीयान्त सुबन्त से क्रमादिभ्यो वुन् इस सूत्र से वुन् प्रत्यय, अनुबन्धलोप, उसके स्थान पर युवोरनाकौ इस सूत्र से अक आदेश होने पर क्रम अक इस स्थिति में भसंज्ञा होकर यस्येति च इस सूत्र से मकारोत्तरवर्ती अकार का लोप, वर्णसम्मेलन, स्वादि कार्य करने पर क्रमकः यह सिद्ध होता है। इस प्रकार पदम् अधीते पदं वेद वा इस अर्थ में पदकः, शिक्षाम् अधीते शिक्षां वेद वा इस अर्थ में शिक्षकः, मीमांसाम् अधीते मीमांसां वेद वा इस अर्थ में मीमांसकः यह रूप सिद्ध होता है।

30.8 तदस्मिन्नस्तीति देशे तन्नाम्नि॥ (४.२.६७)

सूत्रार्थः – प्रकृतिप्रत्ययाभ्यां यदि देशस्य नाम सम्पद्यते तर्हि स अस्मिन् देशे अस्ति इत्यर्थे प्रथमान्तात् समर्थप्रातिपदिकात् अण्प्रत्ययो भवति।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र है। तस्य नाम तन्नाम, तस्मिन् तन्नाम्नि यह सप्तमी एकवचनान्त है। तद् प्रथमान्त का अनुकरण लुप्तपञ्चम्यन्त है। अस्मिन्, देशे यह दोनों भी सप्तमी एकवचनान्त है, अस्ति क्रिया पद है, इति अव्ययपद है, अतः यह सूत्र अनेक पदों वाला है। प्राग्दीव्यतोऽण् इस से अण् अनुवर्तित होता है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः, समर्थानां प्रथम द्वितीय इति एते अधिक्रियन्ते। और इस प्रकार पहले कहा गया अर्थ ही सिद्ध होता है। प्रथम तत् पद प्रथमा विभक्ति का सूचक है। द्वितीय तत् पद प्रत्ययान्त का सूचक है। इति शब्द विवक्षार्थक है। सूत्र का तात्पर्य तावत् जिस शब्द से अण्प्रत्यय होता है वह अण्प्रत्ययान्त शब्द किसी भी देश की संज्ञा

टिप्पणियाँ

हो। इस प्रकार से अस्मिन् देशे अस्ति इस अर्थ में प्रथमान्त समर्थप्रातिपदिक से तद्धितसंज्ञक अण्प्रत्यय होता है। यदि वह प्रत्ययान्त शब्द किसी भी प्रसिद्ध देश का नाम होता है। यह सूत्र मतुप् प्रत्यय का अपवाद है।

उदाहरणम् – उदुम्बराः सन्ति अस्मिन् देशे इस लौकिक विग्रह में उदुम्बर जस् इति प्रथमान्त समर्थ सुबन्त से तदस्मिन्नस्तीति देशे तन्नाम्नि इस सूत्र से अण्प्रत्यय, प्रातिपदिकसंज्ञा, सुप् का लोप होने पर तद्धितेष्वचामादेः इस सूत्र से आदि अच् को वृद्धि औकार आदेश होने और भसंज्ञक अकार का लोप होने पर औदुम्बर् अ इस स्थिति में स्वादि कार्य और वर्णसम्मेलन होने पर औदुम्बरः यह सिद्ध होता है। यह शब्द स्थान विशेष की संज्ञा है। इस प्रकार ही पर्वताः सन्ति अस्मिन् देशे इति पार्वतः देशः इत्यादि रूप सिद्ध होते हैं।

विशेष – पहले कहा सूत्र चातुरार्थिक प्रकरण में है। चार अर्थ हैं, इस कारण चातुरार्थिक प्रकरण कहा जाता है। और वे कौन से हैं–

1. वह इसमें है यह ही देश – इसके विषय में तो कहा ही गया है।
2. उससे निर्मित यह ही नगरी – तेन निर्वृत्तम् (४.२.६८) यह सूत्र है। इसका उदाहरण है– कुशुम्बेन निर्वृत्ता कौशाम्बी।
3. उसका निवास यह ही देश – तस्य निवासः (४.२.६९) इसका योग है। इसका उदाहरण है– शिबीनां निवासो देशः शैबः।
4. जो उससे दूर नहीं है, यह ही देश – अदूरभवश्च (४.२.७०) यह शास्त्र है। अस्योदाहरणम्– विदिशाया अदूरभवं नगरं वैदिशम्।

30.9 लुपि युक्तवद्व्यक्तिवचने॥ (१.२.५१)

सूत्रार्थ – प्रत्यय का लोप होने पर शब्द की प्रकृति के समान ही लिङ्ग और वचन होते हैं।

सूत्रव्याख्या –यह सूत्र अतिदेश सूत्र है। युक्तेन तुल्यं युक्तवत्। व्यक्तिश्च वचनं च तयोरितरेतरयोगद्वन्द्वः व्यक्तिवचने। लुपि यह सप्तमी एकवचनान्त, युक्तवत् यह अव्यय, व्यक्तिवचने यह प्रथमान्त।यह तीन पदों का सूत्र है। इस सूत्र में युक्त शब्द का प्रकृति अर्थ है, व्यक्ति शब्द का लिङ्ग अर्थ है, वचन शब्द का संख्या अर्थ है। सूत्र का आशय– जिसकी प्रकृति से प्रत्यय विहित होता है, उस प्रत्यय का लोप होने पर भी उसकी प्रकृति के अनुसार लिङ्ग और वचन होते हैं, उसके विशेष्य के अनुसार नहीं।

उदाहरणम् – पञ्चालों का निवास जनपद पञ्चालाः। यहाँ जनपद विशेष्य है, प्रकृति है पञ्चालाः, यह प्रथमा बहुवचनान्त और पुंल्लिङ्ग है। पञ्चाल आम् यह लौकिक विग्रह करने पर निवासार्थ और जनपद अर्थ में अण्प्रत्यय का विधान होने पर जनपदे लुप् इस सूत्र से उसका लोप, प्रातिपदिकसंज्ञा, सुब्लुक, प्रकृत सूत्र से युक्तवद्भाव अर्थात् प्रकृतिवद्भाव होता है। उससे जनपदः इस विशेष्य के अनुसार लिङ्ग और वचन नहीं होता है, अपितु पञ्चाल इस प्रकृति के अनुसार होता है। उस कारण ही पञ्चालाः यह रूप सिद्ध होता है। इस प्रकार ही कुरवः, अङ्गाः, वङ्गाः कलिङ्गाः इत्यादि सिद्ध होते हैं।

30.10 राष्ट्रावारपाराद्घखौ॥ (४.२.९३)

सूत्रार्थ – अपत्य अर्थ से लेकर चतुर्थी तक के अर्थों से भिन्न अन्य अर्थ शेष है, उस अर्थ में अर्थात् जात आदि अर्थ में राष्ट्र शब्द और अवारपार शब्द से क्रमशः घप्रत्यय और खप्रत्यय होता है।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में दो पद है। राष्ट्रञ्च अवारपारञ्च तयोः समाहारद्वन्द्वः राष्ट्रावारपारम्, तस्मात् राष्ट्रावारपारात् यह पञ्चमी एकवचनान्त है। घश्च खश्च तयोरितरेतरयोगद्वन्द्वो घखौ यह प्रथमा द्विवचनान्त है। शेषे इत्यस्याधिकारः अस्ति। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः, समर्थानां प्रथमाद्वा इति एते अधिक्रियन्ते। यथासंख्यमनुदेशः समानाम् इस परिभाषा से क्रमशः राष्ट्रशब्द से घ प्रत्यय और अवारपार शब्द से ख प्रत्यय होता है। यहाँ ध्यान देने योग्य है कि शैषिकप्रकरणस्थ सूत्रों के द्वारा कहीं प्रकृति का अथवा प्रत्यय का विधान होता है, किसी भी अर्थ का विधान नहीं होता है। जैसै राष्ट्रावारपाराद्घखौ यहाँ प्रकृति और प्रत्यय कहे गए हैं, अर्थ तो अनुक्त है। कहीं पर अर्थ ही उक्त है, प्रकृति और प्रत्यय नहीं। जैसे तत्र भवः, तत्र जातः, तत आगतः इत्यादि अर्थ ही उक्त है न कि प्रकृति और प्रत्यय। अतः वहाँ दोनों सूत्रों के मेलन से ही एकवाक्यता सम्पादित होती है, उससे प्रकृति, प्रत्यय और अर्थों का बोध होता है इस प्रकार तत्र जातः इस अर्थविधायक सूत्र के साथ राष्ट्रावारपाराद्घखौ इस प्रत्यय विधायक सूत्र की एकवाक्यता होने पर सप्तम्यन्त राष्ट्रशब्द से और सप्तम्यन्त अवारपार शब्द से जात अर्थ में क्रमशः तद्धितसंज्ञक घ प्रत्यय और तद्धितसंज्ञक खप्रत्यय होता है।

उदाहरणम् – राष्ट्रे जातादिः यह लौकिक विग्रह होने पर, राष्ट्र ङि इस सप्तम्यन्त प्रातिपदिक से प्रकृत सूत्र से घ प्रत्यय होने पर प्रातिपदिक संज्ञा, सुप् का लोप होने पर राष्ट्र घ यह हुआ। तत्पश्चात् आयनेयीनीयियः फढखछघां प्रत्ययादीनाम् इस सूत्र से घ् इसके स्थान पर इयादेश होने पर, भसंज्ञक अकार का लोप होने पर, राष्ट्र इय इस स्थिति में वर्णसम्मेलन होने पर राष्ट्रिय इस शब्द से स्वादिकार्य होने पर राष्ट्रियः यह रूप सिद्ध होता है।

अवारं च पारं च अवारपारम् इति समाहारद्वन्द्वः। अवारपारे जातादिः इस अर्थ में अवारपार ङि यह लौकिक विग्रह होने पर प्रकृत सूत्र से ख प्रत्यय होने पर प्रातिपदिक संज्ञा,सुब्लुक्, आयनेयादि सूत्र से ईन आदेश, णत्व, स्वादिकार्य होने पर अवारपारीणः यह रूप सिद्ध होता है।

पाठगत प्रश्न 30.2

1. राष्ट्रियः यहाँ कौन सा तद्धित प्रत्यय है?
2. वैयाकरणः इस शब्द का क्या अर्थ है?
3. लुपि युक्तवद्व्यक्तिवचने यह सूत्र अतिदेशसूत्र है अथवा विधिसूत्र?
4. शिक्षक शब्द का क्या अर्थ है?

टिप्पणियाँ

5. मीमांसक शब्द का क्या अर्थ है?
6. तदस्मिन्नस्तीति देशे तन्नाम्नि इस सूत्र से कौन सा तद्धित प्रत्यय विधान किया जाता है?
7. वङ्गाः इसका क्या अर्थ है?

30.11 वृद्धाच्छः॥ (४.२.११४)

सूत्रार्थः – वृद्धसंज्ञक समर्थ प्रातिपदिकों से शैषिक अर्थ में तद्धित छ प्रत्यय होता है।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र है। इस सूत्र में दो पद हैं। वृद्धात् यह पञ्चमी एकवचनान्त है, छः यह प्रथमा एकवचनान्त है। किसकी वृद्ध संज्ञा होती है, यह पूछने पर यह कहा जाता है – वृद्धिर्यस्याचामादिस्तद्वृद्धम् इस सूत्र से जिस शब्द में अचों के मध्य में प्रथम अच् वृद्धिसंज्ञक (आ, ऐ, औ) होता है, वह शब्द वृद्धिसंज्ञक होता है। इस प्रकार अनुवृत्त्यादि कार्य होने पर पूर्वोक्त सूत्रार्थ सिद्ध होता है।

उदाहरणम् – शालायां भव यह लौकिक विग्रह होने पर शाला ङि इस अलौकिक विग्रह में वृद्धिर्यस्याचामादिस्तद्वृद्धम् इस सूत्र से शाला का आदि अच् के वृद्धिसंज्ञक होने से वृद्धसंज्ञा होती है। तत्पश्चात् तत्र भवः, तत्र जातः इत्यादि शैषिक अर्थों में शाला ङि इस सप्तम्यन्त समर्थ प्रातिपदिक से वृद्धाच्छ इसके योग से छ् प्रत्यय होने पर आयनेयादि सूत्र से छ् इसके स्थान पर ईय् आदेश होकर भसंज्ञक आकार का लोप, वर्ण सम्मेलन और स्वादिकार्य होने पर शालीयः यह सिद्ध होता है। इस प्रकार ही मालायां जातादि इस अर्थ में मालीयः इत्यादि सिद्ध होता है।

30.12 युष्मदस्मदोरन्यतरस्यां खञ्च॥ (४.३.१)

सूत्रार्थः – युष्मद् और अस्मद् शब्द से विकल्प से खञ् प्रत्यय, छ प्रत्यय और अण् प्रत्यय होता है।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र है। इस सूत्र में तीन पद हैं। युष्मत् च अस्मत् च तयोरितरेतरयोगद्वन्द्वे युष्मदस्मदौ, तयोः युष्मदस्मदोः यह पञ्चम्यर्थ में षष्ठी, अन्यतरस्याम् यह सप्तमी एकवचनान्त, खञ् प्रथमा एकवचनान्त हैं। च यह अव्ययपद है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः, समर्थानां प्रथमाद्वा, शेषे इति एते अधिक्रियन्ते। चकार से गर्तोत्तरपदाच्छः इस छः प्रत्यय का समुच्चय किया जाता है। सूत्र में अन्यतरस्यां के ग्रहण से प्राग्दीव्यतीयः सामान्यतया प्राप्तो ऽण् संगृह्यते। यहाँ अस्मद्-युष्मद् यह दो प्रकृतिद है, किन्तु खञ्, छः, अण् ये तीन प्रत्यय हैं। इस प्रकार दोनों प्रकृतियों से तीन प्रत्ययों का विधान होता है प्रत्ययत्रयं। अतः यहाँ यथासंख्यमनुदेशः समानाम् यह परिभाषा प्रवर्तित नहीं होती है, यह स्मरण रखना चाहिए।

उदाहरणम् – युवयोः युष्माकं वा अयं यह लौकिक विग्रह होने पर युष्मद् ओस् अथवा युष्मद् आम् इस अलौकिक विग्रह में युष्मदस्मदोरन्यतरस्यां खञ् च इस के योग से छ प्रत्यय, ईयादेश, प्रातिपदिकसंज्ञा, सुब्लुक, स्वादिकार्य होने पर युष्मदीयः सिद्ध होता है।

छ प्रत्यय के अभाव में और खञ् प्रत्यय होने पर आयनेयादि सूत्र से ईन आदेश होने पर युष्मद् ईन इस स्थिति में तस्मिन्नणि च युष्माकास्माकौ इस सूत्र से युष्मद् इसके स्थान पर युष्माक यह आदेश होने पर तद्धितेष्वचामादेः इस सूत्र से आदिवृद्धि होकर यौष्माक ईन यह हुआ। तत्पश्चात् भसंज्ञक अकार का लोप होने पर अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि इस सूत्र से नकार को णकार होकर स्वादिकार्य होने पर यौष्माकीणः यह रूप सिद्ध होता है।

पुनः खञ् प्रत्यय का अभाव होने पर शेषे इस त के योग से अण् प्रत्यय होकर युष्मद् अ इस स्थिति में तस्मिन्नणि च युष्माकास्माकौ इस शास्त्र से युष्मद् इसके स्थान पर युष्माक यह आदेश, आदिवृद्धि, भसंज्ञक अकार का लोप, स्वादिकार्य होने पर यौष्माकः यह रूप सिद्ध होता है। इस प्रकार हम यहाँ तीन रूप प्राप्त करते हैं-

1. युष्मदीयः।
2. यौष्माकीणः।
3. यौष्माकः।

इस प्रकार ही आवयोः अयम् अथवा अस्माकम् अयम् इस अर्थ में छ प्रत्यय होने पर अस्मदीयः यह रूप, खञ् प्रत्यय होने पर अस्मद् इसके स्थान पर अस्माक यह आदेश होने पर आदिवृद्धि करने पर आस्माकीनः यह रूप, छ-खञ्प्रत्यय से अतिरिक्त स्थल में अण् होने, अस्माक आदेश होने पर आस्माकः यह रूप। इस तरह तीन रूप सिद्ध होते हैं।

अभी अण् और खञ् परे रहते एकत्व विशिष्ट अस्मद् और युष्मद् शब्द के स्थान पर आदेश विधान करने के लिए यह सूत्र आरम्भ करते हैं -

30.13 तवकममकावेकवचने॥ (४.३.६२)

सूत्रार्थ - एकार्थ वाचक युष्मद् और अस्मद् शब्द को क्रमशः तवक और ममक आदेश हो, खञ् और अण् परे रहते।

सूत्रव्याख्या - यह विधि सूत्र दो पदों का है। तवकममकौ एकवचने यह सूत्रगत पदच्छेद है। तवकममकौ यह प्रथमा द्विवचनान्त है। एकवचने यह प्रथमा एकवचनान्त है। तस्मिन्नणि च युष्माकास्माकौ इस सूत्र से अणि, तस्मिन् इन दोनों की अनुवृत्ति होती है। तस्मिन् इससे युष्मदस्मदोरन्यतरस्यां खञ्च इस पूर्वसूत्र से खञ् इसका परामर्श होता है। युष्मदस्मदोरन्यतरस्यां खञ्च यहाँ से युष्मदस्मदोः की अनुवृत्ति भी होती है। एकस्य वचनम् (उक्तिः) यह षष्ठीतत्पुरुषे एकवचनम्, तस्मिन् एकवचने। तवकश्च ममकश्च तवकममकौ इति इतरेतरयोद्वन्द्वः। एवञ्च तस्मिन् अर्थात् खञ्प्रत्यये परे तथा अण्प्रत्यये परे एकत्वसंख्याकथने प्रयुक्तयोः युष्मद्-अस्मद्-शब्दयोः स्थाने यथासंख्यं तवक-ममक-आदेशौ भवतः इति सूत्रार्थः।

विशेष - तवक और ममक आदेश अनेकाल् होता है। अतः अनेकाल्शित्सर्वस्य इस सूत्र से वे दोनों सर्वादेश होते हैं।

टिप्पणियाँ

उदाहरण – खञ् परे रहते उदाहरण – तव अयम् इति तावकीन:। युष्मद् ङस् यह अलौकिक विग्रह करने पर युष्मदस्मदोरन्यतरस्यां खञ्च इस सूत्र से तस्येदम् इस शैषिकार्थ में खञ्, प्रातिपदिकसंज्ञा, सुब्लुक, प्रकृतसूत्र से युष्मद् शब्द के स्थान पर तवक यह सर्वादेश होने पर तवक ख यह हुआ। तत्पश्चात् आयनेयीनीयिय: फढखछघां प्रत्ययादीनाम् इस सूत्र से ख के स्थान पर ईन आदेशे, आदिवृद्धि, भसंज्ञक अकार का लोप और स्वादिकार्य होने पर तावकीन: यह रूप सिद्ध होता है।

खञ् अभावपक्ष में तो शेषे इससे अण् होने पर तवकममकावेकवचने इस सूत्र से तवक आदेश होने पर आदिवृद्धि, भसंज्ञक अकार का लोप और स्वादिकार्य होने पर तावक: यह रूप सिद्ध होता है।

इस प्रकार से ही मम अयम् इस विग्रह में मामकीन:, मामक: इत्यत्र प्रक्रिया ज्ञेय।

एकार्थवाचक युष्मद् शब्द से और एकार्थवाचक से अस्मद् शब्द से तवकममकावेकवचने इस प्रकृतसूत्र से पक्ष में छ प्रत्यय, छ के स्थान पर ईय आदेश होकर युष्मद् ईय इस स्थति में यह सूत्र आरभ्भ करते हैं।

30.14 प्रत्ययोत्तरपदयोश्च॥ (७.२.९८)

सूत्रार्थ – एकार्थ के वाचक युष्मद् और अस्मद् शब्द के मपर्यन्त भाग को त्व और म आदेश हो प्रत्यय और उत्तरपद परे रहते।

सूत्रव्याख्या – इस विधिसूत्र में दो पद हैं। प्रत्ययोत्तरपदयो: च यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। प्रत्ययश्च उत्तरपदं च तयो: इतरेतरयोगद्वन्द्वे प्रत्ययोत्तरपदे, तयो: प्रत्ययोत्तरपदयो: यह सप्तमी द्विवचनान्त है। च यह अव्यय है। इस सूत्र में त्वमावेकवचने यहाँ से त्वमौ एकवचने इन दोनों की और युष्मदस्मदोरनादेशे यहाँ से युष्मदस्मदो: इसकी अनुवृत्ति होती है। मपर्यन्तस्य यह धिक्रियते। समास का चर अर्थात् अन्तिम पद उत्तरपद कहा जाता है। इस प्रकार सूत्रार्थ – एकवचन विषयक युष्मद् और अस्मद् शब्द से मपर्यन्त के स्थान पर त्व और म आदेश होता है, प्रत्यय अथवा उत्तरपद परे रहते। यथासंख्यमनुदेश: समानाम् इस परिभाषा के योग से युष्मद् शब्द के मपर्यन्त के स्थान पर अर्थात् युष्म् इ स्थाने त्व यह आदेश होता है, अस्मद् शब्द के मपर्यन्त के स्थान पर अर्थात् अस्म इस के स्थान पर म यह आदेश होता है, यह सूत्र का तात्पर्य है।

उदाहरण – त्वदीय:, युष्मदीय:। उत्तरपद रहने पर त तो त्वत्पुत्र:, मत्पुत्र:।

सूत्रार्थसमन्वय – तव अयम् यह लौकिक विग्रह होने पर युष्मद् ङस् इस अलौकिक विग्रह में युष्मदस्मदोरन्यतरस्यां खञ्च इस सूत्र से पाक्षिक छ प्रत्यय होने पर छ के स्थान पर ईय आदेश। तत्पश्चात् प्रत्यय पर है इस कारण से प्रत्ययोत्तरपदयोश्च इस सूत्र से युष्मद् शब्द के मपर्यन्त के स्थान पर अर्थात् युष्म् यहाँ त्व आदेश होने पर त्व अद् ईय यह हुआ। तत्पश्चात् अतो गुणे इससे पररूप एकादेश होने पर, वर्णसम्मेलन और स्वादिकार्य होने पर त्वदीय: यह रूप सिद्ध होता है। इस प्रकार ही मम अयम् यह विग्रह होने पर मदीय: यह रूप सिद्ध होता है। इस प्रकार ही तव

अयम् यह विग्रह होने पर युष्मदीयः, यौष्माकीणः, यौष्माकः, तावकीनः, तावकः, त्वदीयः ये छः रूप होते हैं। मम अयम् इस विग्रह में भी छः रूप होते हैं।और वे हैं- अस्मदीयः, आस्माकीनः, आस्माकः, मामकीनः, मामकः, मदीयः।

इस विषय में तालिका को देखो-

खञ् प्रत्यय होने पर	अण् प्रत्यय होने पर	छप्रत्यये
एकवचन में-	**एकवचन में-**	**एकवचन में-**
तवायं तावकीनः।	तवायं तावकः।	तवायं त्वदीयः।
ममायं मामकीनः।	ममायं मामकः।	ममायं मदीयः।
द्विवचन में-	**द्विवचन में-**	**द्विवचन में-**
युवयोरयम् यौष्माकीणः।	युवयोरयम् यौष्माकः।	युवयोरयम् युष्मदीयः।
आवयोरयम् आस्माकीनः।	आवयोरयम् आस्माकः।	आवयोरयम् अस्मदीयः।
बहुवचन में-	**बहुवचन में-**	**बहुवचन में-**
युष्माकमयं यौष्माकीणः।	युष्माकमयं यौष्माकः।	युष्माकमयं युष्मदीयः।
अस्माकमयम् आस्माकीनः।	अस्माकमयम् आस्माकः।	अस्माकमयम् अस्मदीयः।

तव पुत्रः इस अर्थ में युष्मद् ङस् पुत्र सु यह अलौकिक विग्रह होने पर षष्ठी इस सूत्र से तत्पुरुष समास में कृत्तद्धितसमासाश्च इस सूत्र से सुप् का लोप होने पर युष्मद् पुत्र यह होता है। तत्पश्चात् पुत्र शब्द उत्तरपद है इस कारण से प्रत्ययोत्तरपदयोश्च इस प्रकृत सूत्र से युष्म् इसके स्थान पर त्व आदेश होने पर त्व अद् इस स्थिति में अतो गुणे इससे पररूप एकादेश होने पर दकार का खरि च इस सूत्र से चर्त्व होकर स्वादिकार्य होने पर त्वत्पुत्रः यह रूप सिद्ध होता है। इस प्रकार ही मम पुत्रः इस अर्थ में मत्पुत्रः यह रूप होता है।

30.15 ग्रामाद्यखञौ॥ (४.२.९४)

सूत्रार्थ - ग्राम शब्द से शेष अर्थ में तद्धित प्रत्यय य और खञ् होते है।

सूत्रव्याख्या - ग्रामात् (५/१), घखौ (१/२) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः, समर्थानां प्रथमाद्वा इति एते अधिक्रियन्ते। इस प्रकार समर्थ ग्राम प्रातिपदिक से शैषिक अर्थ में तद्धितसंज्ञक य और खञ् प्रत्यय पर होते हैं यह सूत्रार्थ है। खञ् का ञकार इत्संज्ञक है। उसका खमात्र शेष रहता है।

उदाहरण- ग्राम्यः, ग्रामीणः।

टिप्पणियाँ

सूत्रार्थ समन्वय – ग्रामे जातो भवो वा यह लौकिक विग्रह होने पर ग्राम ङि यह अलौकिक विग्रह होने पर प्रकृत सूत्र से य प्रत्यय होने पर प्रातिपदिकसंज्ञा, सुप् का लोप होने पर ग्राम य यह होता है। तत्पश्चात् भसंज्ञा, अकार लोप और स्वादिकार्य होने पर ग्राम्यम् यह रूप होता है।

खञ् प्रत्यय होने पर तो अनुबन्धलोप, प्रातिपदिकसंज्ञा, सुब्लुक होने पर ग्राम ख यह होता है, आयनेयादि सूत्र से खकार के स्थान पर ईन आदेश होने, भसंज्ञादि कार्य होने पर ग्रामीणः यह रूप भी होता है, इस तरह रूपद्वय सिद्ध होते हैं।

30.16 आत्मन्विश्वजन भोगोत्तरपदात्खः॥ (५.१.९)

सूत्रार्थ– आत्मन् शब्द, विश्वजन शब्द और भोगोत्तरपद शब्द से हितार्थ में ख प्रत्यय होता है।

सूत्रव्याख्या – इस विधिसूत्र में दो पद है। आत्मन्विश्वजन भोगोत्तरपदात् खः यह सूत्रगत पदच्छेद है। विश्वे जनाः विश्वजनाः (कर्मधारय समास), भोगः उत्तरपदं यस्य स भोगोत्तरपदः। आत्मा च विश्वजनाश्च भोगोत्तरपदञ्च तेषां समाहारद्वन्द्वः- आत्मन्विश्वजनभोगोत्तरपदम्, तस्मात्। आत्मन्विश्वजनभोगोत्तरपदात् इति पञ्चम्येकवचनान्तम्। खः यह प्रथमा एकवचनान्त है, तस्मै हितम् इसकी अनुवृत्ति होती है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः, समर्थानां प्रथमाद्वा, इति एते अधिक्रियन्ते। एवञ्च तस्मै=चतुर्थ्यन्तात् आत्मन्-विश्वजन-भोगोत्तरपदप्रातिपदिकात् हितम् इत्यर्थे तद्धितसंज्ञकः खप्रत्ययो भवति इति सूत्रार्थः। यह सूत्र औत्सर्गिक छप्रत्यय का अपवाद भूत है।

उदाहरण – आत्मनीनम्, विश्वजनीनम्, मातृभोगीणः।

सूत्रार्थसमन्वय – इस प्रकार आत्मने हितम् इस अर्थ में आत्मन् ङे इस चतुर्थ्यन्त प्रातिपदिक से प्रकृत सूत्र से ख प्रत्यय, प्रातिपदिकसंज्ञा, सुब्लुक होने पर आत्मन् ख यह होता है। तत्पश्चात् खकार के स्थान पर ईन आदेश होने पर आत्मन् ईन् इस स्थिति में नस्तद्धिते इस सूत्र से टिसंज्ञक अन् का लोप प्राप्त होने पर आत्माध्वानौ खे इस सूत्र से प्रकृतिभाव होने पर लोप नहीं होता है। तत्पश्चात् स्वादिकार्य होने पर आत्मनीनम् यह रूप सिद्ध होता है।

इस प्रकार ही विश्वजनीनम् यह रूप रूपं सिद्ध होता है।

मातृभोगाय हितम् यहाँ तो मातृ शब्द से परे भो शब्द है। अतः मातृभोग शब्द भोगोत्तर शब्द है। उस कारण ही मातृभोग ङे इस अलौकिक विग्रह में प्रकृत सूत्र से ख प्रत्यय, प्रातिपदिकसंज्ञा, सुब्लुक, खकार के स्थान पर ईन आदेश, भसंज्ञक अकार का लोप, नकार का णत्व और स्वादिकार्य होने पर मातृभोगीणः यह रूप सिद्ध होता है।

30.17 सायञ्चिरम्प्राह्णेप्रगेऽव्ययेभ्यष्ट्युट्युलौ तुट् च॥ (४.३.२३)

सूत्रार्थः – सायम् इत्यादि चारों अव्ययों और कालवाचक अव्ययों से ट्यु और ट्युल होते हैं, और उनको तुट् आगम हो।

सूत्रव्याख्या – इस विधिसूत्र में चार पद हैं। सायञ्चिरम्प्राह्णेप्रगेऽव्ययेभ्यः (५/३), ट्युट्युलौ (१/२) तुट् (१/१) च यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। सायञ्च चिरञ्च प्राह्णे च प्रगे च अव्ययञ्च इनका इतरेतरयोगद्वन्द्व होने पर सायञ्चिरम्प्राह्णेप्रगेऽव्ययानि, तेभ्यः सायञ्चिरम्प्राह्णेप्रगेऽव्ययेभ्यः। ट्युश्च ट्युल् च इनका इतरेतरयोगद्वन्द्व होने पर ट्युट्युलौ। तुट् यह प्रथमा एकवचनान्त है। च यह अव्यय है। इस सूत्र में कालाट्ठञ् यहाँ से वचन विपरिणाम से कालेभ्यः इसकी अनुवृत्ति होती है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः, समर्थानां प्रथमाद्वा, शेषे इति एते अधिक्रियन्ते। एवञ्च सूत्रार्थस्तावत् – सायम्, चिरम्, प्राह्णे और प्रगे इन कालवाचक शब्दों से तथा कालवाचक अव्ययों से तद्धितसंज्ञक ट्य और ट्युल प्रत्यय होते हैं, उन प्रत्ययों को तु ट् आगम भी होता है। यहाँ सायम्, चिरम्, प्राह्णे, प्रगे ये सब अव्यय नहीं है, अन्यथा अव्ययत्व होने से ही सिद्ध होने पर पुनः पृथक् उल्लेख व्यर्थ होता। उन दोनों प्रत्ययों का टकार और लकार इत्संज्ञक हैं। अतः यु यह शेष रहता है, अतः दोनों प्रत्ययों की समान रूपता दिखाई देती है, फिर भी स्वर में भेद है यह ध्यान योग्य है। तुडागम में उकार और टकार इत्संज्ञक हैं, त्– यह ही शेष रहता है। यु इसके स्थान पर युवोरनाकौ इस सूत्र से अन–यह आदेश होता है। टित्करण का प्रयोजन –स्त्रीत्व विवक्षा में टिड्ढाणञ् इत्यादि सूत्र से ङीप्प्रसक्ति। तेन सायन्तनं कृत्यम्, सायन्तनी वेला। यहाँ ध्यान देना चाहिए – प्रकृत सूत्र से सायम् और चिर शब्द का मान्तत्व है किन्तु प्राह्णे और प्रगे शब्द का एदन्तत्व निपात होता है।

उदाहरणम– सायन्तम्। चिरन्तनम्। प्राह्णेतनम्। प्रगेतनम्।

सूत्रार्थसमन्वय – साये भवः इस अर्थ में सप्तम्यन्त घञन्त सायशब्द से तत्र भवः इस शैषिक अर्थ में प्रकृत सूत्र से ट्यु प्रत्यय होने पर अथवा ट्युल् प्रत्यय होने पर प्रातिपदिकसंज्ञा, सुब्लुक, यु इसके स्थान पर अन आदेश, तुडागम, सायशब्द का मान्तत्व निपातन होने पर स्वादिष्वसर्वनामस्थाने इस सूत्र से पद संज्ञा होने पर मकार का अनुस्वार, अनुस्वार का विकल्प से परसवर्ण होने और स्वादिकार्य होने पर सायन्तनः, सायंतनः इति रूपद्वय सिद्ध होते हैं।

चिरे भवः इस अर्थ में चिरन्तनम्। इस अर्थ में ही तो चिरपरुत्परारिभ्यस्त्नो वक्तव्यः इस वार्तिक से त्न प्रत्यय होने और स्वादिकार्य होने पर चिरत्नम् यह रूप होता है।

प्राह्णे भवो जातो वा इस अर्थ में प्राह्णेतनम् यह रूप होता है।

प्रगे भवो जातो वा इस अर्थ में प्रगेतनः यह रूप है। प्रगेतनो विहारः (Morning walk) यह प्रयोग है।

कालवाचक का उदाहरण

दोषा भवं दोषातनम्। यहाँ रात्रिवाचक दोषा शब्द से तत्र भवः इस शैषिक अर्थ में प्रकृत सूत्र से ट्यु प्रत्यय अथवा ट्युल् प्रत्यय होने पर दोषातनम् यह रूप सिद्ध होता है।

टिप्पणियाँ

इस प्रकार ही-

1. दिवा भवं दिवातनम् (दिन में होने वाला)।
2. श्वो भवं श्वस्तनम् (आगामी कल में होने वाला)।
3. ह्यो भवं ह्यस्तनम् (गतकल में होने वाला)।
4. अद्यो भवम् अद्यतनम् (आज होने वाला)।
5. पुरा भवं पुरातनम् (पूर्वकाल में होने वाला)।
6. सदा भवः सदातनः (हमेशा होने वाला)।
7. सना भवः सनातनः (सदा होने वाला)।
8. अधुना भवः अधुनातनः (अब होने वाला)।
9. इदानीं भवः इदानीन्तनः (अब होने वाला)।
10. प्राग्भवः प्राक्तनः (पहले होने वाला)।
11. प्रातर्भवः प्रातस्तनः (प्रातः होने वाला)।
12. ऐषमो भवम् ऐषमस्तनम् (इस वर्ष होने वाला)।

30.18 जिह्वामूलाङ्गुलेश्छः॥ (४.३.६२)

सूत्रार्थ - जिह्वामूल शब्द और अङ्गुल शब्द से तत्र भवः इस अर्थ में छ प्रत्यय होता है।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में दो पद है। जिह्वाया मूलं जिह्वामूलम्, जिह्वामूलञ्च अङ्गुलिश्च तयोः समाहारद्वन्द्वो जिह्वामूलाङ्गुलिः, सौत्रं पुंस्त्वं तस्माद् जिह्वामूलाङ्गुलेः यह पञ्चमी एकवचनान्त है। छः यह प्रथमा एकवचनान्त है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः, समर्थानां प्रथमाद्वा, शेषे इति एते अधिक्रियन्ते। इस प्रकार पूर्वोक्त अर्थ सिद्ध होता है। जिह्वामूलम् और अङ्गुलिः ये दोनों शब्द अवयव वाचक हैं इस कारण से शरीरावयवाच्च इस सूत्र से यत् प्रत्यय प्राप्त होने पर, उसको बांधकर छ प्रत्यय होता है।

उदाहरणम् - जिह्वामूले भवम् यह लौकिक विग्रह होने पर जिह्वामूल ङि इस अलौकिक विग्रह में प्रकृतसूत्र से छ प्रत्यय होने पर आयनेयादि सूत्र से ईयादेश, प्रातिपदिकसंज्ञा, सुब्लुक, भसंज्ञा, अकारलोप, स्वादिकार्य होने पर जिह्वामूलीयम् यह रूप सिद्ध होता है। इस प्रकार पूर्वप्रक्रिया के अनुसार ही अङ्गुलीयम् यह रूप सिद्ध होता है।

30.19 गोश्च पुरीषे॥ (४.३.१४५)

सूत्रार्थ - पुरीष अर्थ में अर्थात् मल अर्थ में गो प्रातिपदिक से मयट् प्रत्यय होता है।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र है। यह सूत्र तीन पदों वाला है। गोः पञ्चमी एकवचनान्त और च यह अव्ययपद है, पुरीषे यह सप्तमी एकवचनान्त है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः, समर्थानां प्रथमाद्वा, शेषे इति एते अधिक्रियन्ते। तस्य विकार यह सम्पूर्ण सूत्र अनुवर्तित होता है। मयड् वैतयोर्भाषायामभक्ष्याच्छादनयोः यहाँ से मयट् अनुवर्तित होता है। इस प्रकार उक्त सूत्रार्थ सिद्ध होता है। यह सूत्र गोपयसोर्यत् इस सूत्र का बांधक है। यद्यपि गो का मल गो का अवयव नहीं है, अथवा न ही उसका विकार फिर भी सम्बन्ध सामान्य को लेकर ऐसा कहा गया है।

उदाहरणम् – गोः पुरीषं गोमयम्। गोः विकारः यह लौकिक विग्रह होने पर गो ङस् इस अलौकिक विग्रह में प्रकृतसूत्र से मयट्प्रत्यय, अनुबन्धलोप होने पर गो मय इस स्थिति में प्रातिपदिकसंज्ञादि कार्य होने पर गोमयम् यह रूप सिद्ध होता है।

30.20 रक्षति (४.४.३३)॥

सूत्रार्थ – रक्षति इस अर्थ में द्वितीयान्त समर्थ प्रातिपदिक से तद्धित औत्सर्गिक ठक् प्रत्यय होता है।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र है। एक पद वाला सूत्र है। रक्षति यह अर्थबोधक क्रियापद है। तत् प्रत्यनुपूर्वमीपलोमकूलम् यहाँ से तत् इस द्वितीयान्त पद की अनुवृत्ति होती है। प्राग्वहतेष्ठक् यहाँ से ठक् प्रत्यय अनुवर्तित होता है। प्रत्ययः परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः, समर्थानां प्रथमाद्वा, इति एते अधिक्रियन्ते। उससे पूर्वोक्त सूत्रार्थ सिद्ध होता है।

उदाहरणम् – समाजं रक्षति इति सामाजिकः। समाजं रक्षति यह लौकिक विग्रह होने पर समाज अम् इस अलौकिक विग्रह में रक्षति इस सूत्र से ठक्प्रत्यय, अनुबन्धलोप होने पर ठस्येकः इस सूत्र से ठ के स्थान पर इक यह आदेश होने पर समाज इक इस स्थिति में ठक् के कित्त्व होने से किति च इस सूत्र से आदिवृद्धि, भसंज्ञक अकार का लोप होने पर और स्वादिकार्य होने पर सामाजिकः यह रूप सिद्ध होता है।

30.21 नौवयो धर्मविषमूल मूलसीतातुलाभ्यस्तार्य तुल्यप्राप्यवध्यानाम्य समसमित सम्मितेषु॥ (४.४.९१)

सूत्रार्थः – नौ, वयस्, धर्म, विष, मूल, मूल, सीता, तुला इन शब्दों से पर क्रमशः योग्य, तुल्य, प्राप्य, वध्य, प्राप्यलाभ, सम, एकीकरण, तोलन अर्थों में म यत् प्रत्ययो होता है।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र है। यह दो पदों वाला सूत्र है। नौश्च वयश्च धर्मश्च विषञ्च मूलञ्च मूलञ्च सीता च तुला च इनका इतरेतरयोगद्वन्द्व है– नौवयोधर्मविषमूलमूलसीतातुलास्ताभ्यः नौवयोधर्म विषमूलमूलसीतातुलाभ्यः यह पञ्चमी बहुवचनान्त है। तार्यञ्च तुल्यञ्च प्राप्यञ्च वध्यञ्च आनाम्यञ्च समश्च समितञ्च सम्मितञ्च इनका इतरेतरयोगद्वन्द्व है– तार्यतुल्यप्राप्यवध्यानाम्य समसमितसम्मितानि तेषु तार्यतुल्यप्राप्यवध्यानाम्यसमसमितसम्मितेषु यह सप्तमी बहुवचनान्त है।

प्राग्घिताद्यत् यहाँ से यत् अनुवर्तित होता है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः, समर्थानां प्रथमाद्वा ये अधिकार सूत्र करते हैं। इस प्रकार पूर्वोक्त सूत्रार्थ सिद्ध होता है।

उदाहरण – अभी क्रमशः उदाहरण आलोचित किए जाते हैं–

1. **नाव्यम्**– नावा तार्यम् यह लौकिक विग्रह होने पर नौ टा इस अलौकिक विग्रह में प्रकृत सूत्र से तार्य अर्थ में यत् प्रत्यय, अनुबन्धलोप, प्रातिपदिकसंज्ञा, सुब्लुक होने पर नौ य इस स्थिति में वान्तो यि प्रत्यये इस सूत्र से आव् आदेश होकर विभक्त्यादिकार्य होने पर नाव्यम् यह रूप सिद्ध होता है।

2. **वयस्यः**– वयसा तुल्यम् इस अर्थ में वयस् टा यह अलौकिक विग्रह होने पर प्रकृत सूत्र से यत् प्रत्यय होने पर प्रातिपदिकसंज्ञादि कार्य होने पर वयस्यः यह रूप सिद्ध होता है।

3. **धर्म्यम्** – धर्मेण प्राप्यम् धर्म्यम् (धर्म से प्राप्त करने योग्य)।

4. **विष्यः** – विषेण वध्यः (विष से मारने योग्य)।

5. **मूल्यम्** – मूलेन (पूँजी) आनाम्यम् (मूल से लाने योग्य)।

6. **मूल्यः** – मूलेन समः मूल्यः(मूल के समान)।

7. **सीत्यम्** – सीतया समितं सीत्यम् (सीता के समान)।

8. **तुल्यम्** – तुलया सम्मितं तुल्यम् (तुला के समान)

इस प्रकार इस सूत्र के आठ उदाहरण प्रदर्शित किये गए हैं।

पाठगत प्रश्न 30.3

1. नौवयोधर्मादि सूत्र को पूरा कीजिए।
2. सामाजिकः शब्द का क्या अर्थ है?
3. गोः पुरीषम् इस अर्थ में क्या रूप होता है?
4. जिह्वामूलीयम् यहाँ कौन सा प्रत्यय है और किस सूत्र से होता है?
5. युवयोः युष्माकं वा अयम् इस अर्थ में कितने रूप होते हैं और वे कौन से हैं?
6. वृद्धसंज्ञा किससे होती है?
7. वृद्धसंज्ञा का एक फल लिखिए।
8. शालीयः यहाँ कौन सा तद्धित प्रत्यय है?

पाठ का सार

तद्धित प्रकरण के इस तृतीय पाठ में अण्, तल्, वुन्, घः, खः, छः, खञ्, मयट्, यत् इत्यादि तद्धित प्रत्यय आलोचित किए गए हैं। इनमें कदाचित् एक ही प्रत्यय भिन्न अर्थों में होता है जैसे अण् प्रत्यय कभी तेन युक्तम् इस अर्थ में, और कभी तेन दृष्टम् इस अर्थ में अथवा कभी प्रकृतिप्रत्यय से देश के नाम में गम्यमान होने पर होता है। किन्तु कहीं तद्धित पद के लुप्तस्थल पर प्रकृतिवद् वचन किया जाता है, जैसे लुपि युक्तवद्व्यक्तिवचने यह अतिदेशसूत्र भी आलोचित किया गया है। ऊपर सभी लोकव्यवहार उपयोगी शब्द आलोचित किए गए हैं, उनको आप व्यवहार में प्रयोग कर सकते हैं।

पाठांत प्रश्न

1. नौवयोधर्मादि सूत्र को पूरा करके व्याख्या कीजिए।
2. जिह्वामूलाङ्गुलेश्छः इस सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
3. युष्मदस्मदोरन्यतरस्यां खञ्च इस सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
4. युवयोः युष्माकं वा अयम् इस अर्थ में तद्धित प्रत्यय प्रयोग होने पर कितने रूप होते हैं, और उनको प्रक्रिया सहित निरूपण कीजिए।
5. लुपि युक्तवद्व्यक्तिवचने इस अतिदेशसूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
6. तदस्मिन्नस्तीति देशे तन्नाम्नि सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
7. क्रमादिभ्यो वुन् सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
8. तदधीते तद्वेद सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
9. ग्रामजनबन्धुभ्यस्तल् सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

30.1

1. रज्यते अनेन इस अर्थ में तृतीयान्त रङ्गवाचक समर्थ प्रातिपदिक से अण्प्रत्यय होता है।
2. अण्।
3. वसिष्ठेन दृष्टम्।
4. अण्।

टिप्पणियाँ

5. तल्।
6. जनानां समूहः।
7. सास्य देवता।

30.2

1. घप्रत्यय।
2. व्याकरणम् अधीते वेद वा।
3. अतिदेश सूत्र।
4. शिक्षाम् अधीते शिक्षां वेद वा।
5. मीमांसाम् अधीते मीमांसां वेद वा।
6. अण्।
7. वङ्गानां निवासो जनपदः वङ्गाः।

30.3

1. नौवयोधर्मविषमूलमूलसीतातुलाभ्यस्तार्यतुल्यप्राप्यवध्यानाम्यसमसमितसम्मितेषु।
2. रूपत्रय। युष्मदीयः, यौष्माकीनः, यौष्माकः।
3. वृद्धिर्यस्याचामादिस्तद्वृद्धम् इससे।
4. समाजं रक्षति।
5. गोमयम्।
6. छप्रत्ययः, जिह्वामूलाङ्गुलेश्छः इसके योग से।
7. वृद्धाच्छः इससे छप्रत्यय का विधान।
8. छप्रत्यय का विधान होता है।

॥ तीसवां पाठ समाप्त॥

31

ठञधिकारादि प्रकरण

समग्र तद्धितप्रकरण को लेकर ये चार पाठ कल्पित किए गए है। अभी उनमें से अन्तिम पाठ यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है। इस चतुर्थ पाठ में ठञधिकार प्रकरण से स्वार्थिक प्रकरण तक आलोचना की जा रही है। इस तुर्ये पाठे ये तावत् अस्मद्व्यवहृताः शब्दा वर्तन्ते ते एव मुख्यतया आलोच्यन्ते यथा संस्कृतभाषया अस्माकं लोकव्यवहारः सुष्ठु स्यात्। तत्र तत्र प्रसिद्धानि तद्धितान्त रूपाणि प्रदर्शितानि सन्ति। यथा – च्विप्रत्ययान्तरूपं, तयप्प्रत्ययान्तरूपं, वतुप्-प्रत्ययान्तरूपं, तरप्प्रत्ययान्तरूपं, तमप्-प्रत्ययान्तरूपमित्येवं विविधानि रूपाणि। एवञ्च अणञौ, त्वतलौ, इमनिच्, ष्यञ्, वतुप्, तयप्, तमप्, तरप्, च्वि इत्यादयः प्रत्यया मुख्यतया अत्र आलोच्यन्ते। अग्रे एतेषां स्पष्टम् आलोचनं भविष्यति। तद्धितप्रत्ययः प्रातिपदिकात् भवति इति भवन्तः पूर्वं ज्ञातवन्तः। किन्तु कदाचित् तिङन्तादपि भवति यथा पचतितमाम्। तद्धितप्रत्ययविधायकसूत्रेषु प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः, समर्थानां प्रथमाद्वा इत्येते अधिक्रियन्ते इति स्मर्तव्यम्।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप सक्षम होंगे :

- सरलता से ठञादि प्रत्ययों के प्रयोग का ज्ञान जान पाने में;
- ठञधिकार प्रकरण आदि के सूत्रों के अर्थ का ज्ञान जान पाने में;
- लौकिक और अलौकिक विग्रहों का परिचय जान पाने में;
- ठञधिकार प्रकरण आदि के सूत्रों और उदाहरणों को जान पाने में;
- तद्धित प्रत्यय के प्रयोग विषय में सहज रूप से जान पाने में;
- सर्वोपरि तद्धितान्त पद का प्रयोग कहाँ और कैसे करना चाहिए यह जान पाने में।

टिप्पणियाँ

31.1 तस्येश्वरः॥ (५.१.४२)

सूत्रार्थः – सर्वभूमि और पृथिवी शब्दों से अण् और अञ् होते हैं।

सूत्रव्याख्या – इस विधिसूत्र में दो पद है। तस्य (५/२), ईश्वरः (१/१) यह सूत्रगत पदच्छेद है। सूत्र में तस्य यह षष्ठ्यन्तानुकरण लुप्तपञ्चमीकम है। सर्वभूमिपृथिवीभ्यामणञौ यह सूत्र अनुवर्तित होता है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः, समर्थानां प्रथम द्वितीय ये अधिकार करते हैं। सर्वा भूमिः सर्वभूमिः, कर्मधारय होने पर पूर्वपद का पुंवद्भाव, सर्वभूमिश्च पृथिवी च सर्वभूमिपृथिव्यौ, ताभ्यां सर्वभूमिपृथिवीभ्याम्, इतरेतरयोगद्वन्द्वः। यथासंख्यमनुदेशः समानाम् यह परिभाषा प्रवर्तित होती है। इस प्रकार तस्य= षष्ठ्यन्त सर्वभूमि और पृथिवी प्रातिपदिकों से ईश्वर अर्थ में (स्वामी अर्थ में) यथासंख्य तद्धितसंज्ञक अण् और अञ् प्रत्यय पर में होते हैं,यह सूत्रार्थ सिद्ध होता है। इस प्रकार सर्वभूमि शब्द से अण्, और पृथिवी शब्द से अञ् होता है यह जानना चाहिए।अण् का णकार और अञ् का ञकार इत् होता है। इस कारण दोनों स्थान पर अकार ही शेष रहता है। किन्तु दोनों का स्वर में भेद है। यथा णित् का फल अन्त उदात्त स्वर का विधान है। ञित् का फल तो उदात्तादि स्वर का विधान है।

उदाहरण – सार्वभौमः। सर्वभूमेः ईश्वरः यह लौकिक विग्रह होने पर सर्वभूमि ङस् इस षष्ठ्यन्त प्रातिपदिक से तस्येश्वर इस के योग से अण् प्रत्यय होने पर, तद्धितान्त होने से कृत्तद्धितसमासाश्च इस सूत्र से प्रातिपदिकसंज्ञा होने, सुपो धातुप्रातिपदिकयोः इसके योग से सुब्लुक होने, तद्धितेष्वचामादेः इस सूत्र से आदिवृद्धि की प्राप्ति होने पर, अनुशतिकादि में सर्वभूमि शब्द का पाठ होने से उस वृद्धि को बांधकर अनुशतिकादीनाञ्च इस सूत्र से उभयपद में वृद्धि होने पर सार्वभौम अ इस स्थिति में यचि भम् इस सूत्र से मकारोत्तरवर्ती अकार की भसंज्ञा होने पर यस्येति च इस सूत्र से उस अकार का लोप होने पर सार्वभौम् अ इस स्थिति में एकदेशविकृतन्याय से प्रातिपदिक होने के कारण स्वादिकार्य होने परसार्वभौमः यह रूप सिद्ध होता है।

इस प्रकार ही पृथिव्याः ईश्वरः इस अर्थ में प्रकृत सूत्र से अञ् प्रत्यय होने पर तद्धितेष्वचामादेः इस सूत्र से आदिवृद्धि और स्वादिकार्य करने पर पार्थिवः यह रूप सिद्ध होता है।

किन्तु तत्र विदित इति च इसके योग से तत्र विदित इस अर्थ में सर्वभूमि और पृथिवी शब्दों से अण् और अञ् होते हैं यह कहा गया है तेन सर्वभूमौ विदित इस अर्थ में उस सूत्र से अण् होने पर सार्वभौमः यह रूप सिद्ध होता है। पृथिव्यां विदित इत्यर्थे अञि पार्थिवः इति रूपं यह सिद्ध होता है।

31.2 तस्य भावस्त्वतलौ॥ (४.१.११९)

सूत्रार्थः – षष्ठ्यन्त समर्थ प्रातिपदिक से भावार्थ में त्व और तल् तद्धित संज्ञक प्रत्यय परे में हो।

सूत्रव्याख्या – इस विधिसूत्र में तीन पद है। इस सूत्र में तस्य (५/१), भावः (१/१), त्वतलौ (१/२) यह सूत्रगत पदच्छेद है। सूत्र में तस्य यह षष्ठ्यन्तानुकरण लुप्तपञ्चमी है। त्वश्च तल्

च तयोरितरेतरयोगद्वन्द्वस्त्वतलौ। भावः प्रथमा एकवचनान्त है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः, समर्थानां प्रथमाद्वा ये अधिकार करते हैं। प्रकृतिजन्य बोध होने पर प्रकारः भाव यह कहा जाता है। अर्थात् प्रकृति में विशेषण रूप से भासित होता है,वह ही भाव शब्द से नहीं कहा जाता है। जैसे गोरूप प्रकृति में गोत्वरूप विशेषण भासित होता है, वह ही भाव कहा जाता है। इस प्रकार सामान्य रूप से हम कह सकते हैं कि जो किसी भी शब्द का प्रवृत्ति निमित्त ही भाव कहलाता है। यथा घट में घटत्व, पुस्तक में पुस्तकत्व। भाव विषय में अधिक ज्ञात करने के लिए लघुसिद्धान्तकौमुदी में इस सूत्र को देखो।

उदाहरणम् – गोर्भावः यह लौकिक विग्रह करने पर गो ङस् इस षष्ठ्यन्त प्रातिपदिक से तस्य भावस्त्वतलौ इस शास्त्र से त्वप्रत्यय होने पर प्रातिपदिक संज्ञा, सुब्लुक होने पर गोत्व इस स्थिति में सुविभक्तौ त्वान्तं नपुंसकम् इस योग से त्वप्रत्ययान्त का नपुंसकत्व है, इस कारण से सु को अम् आदेश, पूर्वरूपैकादेश होने पर गोत्वम् यह रूप सिद्ध होता है। किन्तु जब तल् प्रत्यय का विधान होता है, तब तो लकार के इत्संज्ञक होने से तलन्तं स्त्रियाम् इस के योग से तलन्त का स्त्रीलिङ्गकत्व होने से अजाद्यतष्टाप् इस सूत्र से टाप् प्रत्यय, अनुबन्धलोप, अकः सवर्णे दीर्घः इस से सवर्ण दीर्घ होने पर और सु का हल्ङ्यादिलोप होने पर गोता यह रमा के समान रूप सिद्ध होता है। इस प्रकार गोता यह रूप सिद्ध होता है। इस तरह गोत्वं गोता ये दो रूप होते हैं।

31.3 पृथ्वादिभ्य इमनिज्वा॥ (५.१.१२२)

सूत्रार्थ – पृथ्वादिगण में पठित षष्ठ्यन्त समर्थ प्रातिपदिक से भाव अर्थ में तद्धितसंज्ञक इमनिच् प्रत्यय पर में विकल्प से होता है।

सूत्रव्याख्या – इस विधि सूत्र में तीन पद हैं। पृथ्वादिभ्यः (५/३), इमनिच् (१/१) वा (अव्ययम्) ये सूत्रगत पदों का विच्छेद है। पृथुः आदिर्येषां ते पृथ्वादयः तेभ्यः पृथ्वादिभ्यः यह तद्गुणसंविज्ञान बहुव्रीहि समास है। पृथ्वादि एक गण है। और वह गणपाठ में स्थित है। तस्य भावस्त्वतलौ यहाँ से तस्य, भावः इन दोनों की अनुवृत्ति होती है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः, समर्थानां प्रथमाद्वा ये अधिकार करते हैं। इस प्रकार तस्य=षष्ठ्यन्त पृथ्वादि प्रातिपदिक से भाव अर्थ में तद्धितसंज्ञक इमनिच् प्रत्यय विकल्प से होता है यह सूत्रार्थ है। सूत्र में वा का कथन अणादि के समावेश के लिए है। इमनिच् का द्वितीय इकार और चकार इत्संज्ञक हैं। अतः इमन् मात्र ही शेष रहता है। चकार अनुबन्ध स्वर के लिए हैं। इमनिच् प्रत्ययान्त शब्द संस्कृत में पुंलिङ्ग होता है।

उदाहरण – पृथोर्भावः यह लौकिक विग्रह होने पर, पृथु ङस् इस षष्ठ्यन्त प्रातिपदिक से पृथ्वादिभ्य इमनिज्वा इस सूत्र से विकल्प से इमनिच् प्रत्यय, अनुबन्धलोप, प्रातिपदिक संज्ञा, सुब्लुक होने पर पृथु इमन् इस स्थिति में र ऋतो हलादेर्लघोः इस सूत्र से ऋकार के स्थान पर र आदेश होने पर प् र इमन् इस स्थिति में टेः इस सूत्र से टिसंज्ञक के उकार का लोप होने पर, प्रथ् इमन् इ होने पर, सुप्रत्यय, उपधादीर्घ, हल्ङ्यादिलोप और नकार का लोप होने पर प्रथिमा यह रूप सिद्ध होता है। और राजन् शब्द के समान रूप होते हैं – प्रथिमानौ प्रथिमानः। किन्तु जब इमनिच् नहीं होता

टिप्पणियाँ

है, तब इगन्ताच्च लघुपूर्वात् इस सूत्र से अण् प्रत्यय होने पर पृथु अ इस स्थिति में ओर्गुणः इससे गुण ओकार होने पर उस स्थान में अवादेश होने और स्वादिकार्य होने पर पार्थवम् यह रूप सिद्ध होता है। किन्तु आ च त्वात् यहाँ से त्व और तल् अधिकृत होने से वे दोनों भी होते हैं,उससे पृथुत्वम्, पृथुता यह दो रूप होते हैं। इस प्रकार प्रथिमा, पार्थवं, पृथुता, पृथुत्वम् ये चार रूप सिद्ध होते हैं।

31.4 गुणवचनब्राह्मणणादिभ्यः कर्मणि च॥ (५.१.१२४)

सूत्रार्थ- षष्ठ्यन्त समर्थ गुणवाचक प्रातिपदिक से और ब्राह्मणादि गण में पठित षष्ठ्यन्त समर्थ प्रातिपदिक से भावार्थ और कर्मार्थ में तद्धित संज्ञक ष्यञ् प्रत्यय पर में होता है।

सूत्रव्याख्या - इस विधिसूत्र में तीन पद हैं। गुणवचनब्राह्मणादिभ्यः (५/३), कर्मणि (७/१) च यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। गुणं प्रोक्तवन्तः इति गुणवचनाः। ब्राह्मणः आदिर्येषां ते ब्राह्मणादयः इस प्रकार तद्गुणसंविज्ञान बहुव्रीहिसमास है। गुणवचनाश्च ब्राह्मणादयश्च तेषामितरेतरयोगद्वन्द्वो गुणवचनब्राह्मणादयः तेभ्यः गुणवचनब्राह्मणादिभ्यः। तस्य भावस्त्वतलौ यहाँ से तस्य, भावः इत्न दोनों पदों की, किञ्च वर्णदृढादिभ्यः ष्यञ् यहाँ से ष्यञ् इस पद की अनुवृत्ति होती है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः, समर्थानां प्रथमाद्वा ये सूत्र अधिकार करते हैं। इस प्रकार तस्य= षष्ठ्यन्त गुणवचन ब्राह्मणादि प्रातिपदिकों से कर्म और भाव में तद्धितसंज्ञक ष्यञ् प्रत्यय पर होता है यह सूत्रार्थ सिद्ध होता है। ष्यञ् के षकार की षः प्रत्ययस्य इस सूत्र से इत्संज्ञा होती है,यह ध्यान रखना चाहिए चकारा से भाव में भी ष्यञ् होता है, यह चकारपद का प्रयोजन है। ब्राह्मणादिगण आकृतिगण है। कर्मपद से कार्य की क्रिया का बोध होता है। गुणवचन शब्द वह ही होता है, जो आदि में गुणार्थ में प्रवृत्त होता है। तत्पश्चात् गुण और गुणी के अभेद उपचार से मतुप् का लोप होता है अथवा तद्गुणयुक्तद्रव्य का वाचक होता है। पूर्व सूत्रों से भावार्थ में ही प्रत्यय का विधान किया गया है। यहाँ तो कर्मार्थ में भी प्रत्यय विधान के लिए यह सूत्र शुरू किया गया है।

उदाहरण- जडस्य भावः कर्म वा यह लौकिक विग्रह होने पर जड़ ङस् इस षष्ठ्यन्त गुणवचन प्रातिपदिक से गुणवचनब्राह्मणादिभ्यः कर्मणि च इस सूत्र से ष्यञ् प्रत्यय होने पर, अनुबन्धलोप, प्रातिपदिकसंज्ञा, सुब्लुक, आदिवृद्धि, भसंज्ञक अकार का लोप, स्वादिकार्य होने पर जाड्यम् यह रूप सिद्ध होता है। तत्पश्चात् त्व और तल् प्रत्यय करने पर जडत्वम्, जडता ये रूप बनते हैं। किन्तु केवल भावार्थ में दृढादि हने से इमनिच् होने पर जडिमा यह रूप सिद्ध होता है।

इस प्रकार ब्राह्मणस्य भावः कर्म वा (अर्थ में) ब्राह्मण्यम्, ब्राह्मणत्वम्, ब्राह्मणता और चोरस्य भावः कर्म वा (अर्थ में) चौर्यम्, चौर्यत्वम्, चौर्यता इत्यादि रूप सिद्ध होते हैं।

31.5 तेन वित्तश्चुञ्चुप्चणपौ॥ (५.२.२६)

सूत्रार्थ - तृतीयान्त समर्थ प्रातिपदिक से वित्त अर्थ में चुञ्चुप्-चणपौ प्रत्यय पर होते हैं।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में तीन पद है। तेन, वित्तः, चुञ्चुप्चणपौ यह सूत्रगत पदच्छेद है। चुञ्चुप् च चणप् च तयोरितरेतरयोगद्वन्द्वः चुञ्चुप्चणपौ इति प्रथमा द्विवचनान्त है। तेन

यह तृतीया एकवचनान्त है। वित्तः यह सप्तमी अर्थ में प्रथमान्त है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः, समर्थानां प्रथमाद्वा ये सूत्र अधिकार करते हैं। उन दोनों चुञ्चुप् और चणपो प्रत्ययों के आदि चकार का चुटू इस सूत्र से इत्संज्ञा प्राप्ति इति पृच्छायामुच्यते भाष्यकार यहाँ य्चुञ्चुप्-य्चणपौ यह यकार प्रश्लेष पाठ पढते हैं। अतः आद्य चकार का अभाव होने से दोष नहीं हैं। चुञ्चुप् और चणप् इन दोनों स्थानों पर पकार की इत्संज्ञा होती है। इस प्रकार तृतीयान्त समर्थ प्रातिपदिक से प्रतीत, ज्ञात, प्रसिद्ध अर्थों में चुञ्चुप् और चणप् प्रत्यय पर होते हैं यह सूत्रार्थ है।

उदाहरणम् - विद्याचुञ्चुः, विद्याचणः। विद्यया वित्तो इति लौकिक विग्रह होने पर विद्या टा इस अलौकिक विग्रह में प्रकृत सूत्र से चुञ्चुप्प्रत्यय, अनुबन्धलोप, प्रातिपदिकादि कार्य होने पर विद्याचुञ्चुः यह रूप सिद्ध होता है। चणप्प्रत्यय पक्ष में तु विद्याचणः यह रूप सिद्ध होता है।

31.6 किमिदम्भ्यां वो घः॥ (४.२.४०)

सूत्रार्थ - परिमाण अर्थ वर्तमान समर्थ किम्-इदम्भ्या पर्ररतिपदिकाभ्यां प्रथमान्त तदस्य परिमाणमस्तीत्यर्थे वतुप्-प्रत्ययो भवति वतुपः वकारस्य स्थाने च घकारादेशो भवति।

सूत्रव्याख्या - इस विधि सूत्र में तीन पद हैं। किमिदम्भ्याम् (५/२), वः (६/१), घः (१/१) यह सूत्रगत पदच्छेद है। किम् च इदं च उनका इतरेतरयोगद्वन्द्व होने पर किमिदमौ ताभ्याम् किमिदम्भ्याम्। यत्तदेतेभ्यः परिमाणे वतुप् यहाँ से परिमाणे और वतुप् इन दोनों की, तदस्य सञ्जातं तारकादिभ्य इतच् यहाँ से तदस्य इसकी अनुवृत्ति होती है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः, समर्थानां प्रथमाद्वा ये अधिकार करते हैं। और उक्तार्थ सिद्ध होता है।

उदाहरण - किं परिमाणमस्य इति लौकिक विग्रह होने पर किम् सु अलौकिक विग्रह होने पर किमिदम्भ्यां वो घः इस सूत्र से वतुप्-प्रत्यय होने पर वकार का स्थान पर घ्-आदेश होने पर, प्रातिपदिक संज्ञा, सुब्लुक होने पर किम् घ् अत् इस स्थिति में घ् इसके स्थान पर आयनेयादि सूत्र से इयादेश होने पर किम् इयत् इस स्थिति में इदंकिमोरीश्की इस सूत्र से किम् इसके स्थान पर कि - यह आदेश होता है। उससे कि इयत् इस स्थिति में सु विभक्ति उपधादीर्घ, नुमागम, हलङ्यादिलोप, संयोगान्तलोप होने पर कियान् यह रूप सिद्ध होता है।

पाठगत प्रश्न 31.1

1. सर्वभूमेः निमित्तमित्यर्थे निष्पन्नस्य सार्वभौमः इति पदे कः प्रत्ययोऽस्ति।
2. कियान् यहाँ कौन सा प्रत्यय है?
3. गोर्भावः इस अर्थ में कितने रूप होते है और वे कौन से है?
4. विद्याचुञ्चुः यहाँ कौन सा प्रत्यय है?

टिप्पणियाँ

5. विद्याचण: यहाँ चणप्रत्यय विधायक सूत्र कौन सा है?

6. जाड्यम् यहाँ कौन सा प्रत्यय है?

7. गुणवचनब्राह्मणादिभ्य: कर्मणि च इस सूत्र से क्या विधान किया जाता है?

8. पृथ्वादिभ्य इमनिज्वा इस सूत्र से कौन सा प्रत्यय होता है?

9. पृथोर्भाव: यह विग्रह होने पर कौन सा पद होता है?

10. तलन्त का स्त्रीलिङ्गक किस सूत्र से होता है?

31.7 किमोऽत्॥ (५.३.१२)

सूत्रार्थ – सप्तम्यन्त किम्शब्द से विकल्प से अत् प्रत्यय होता है, पक्ष में त्रल् भी होता है।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र है। किम: पञ्चमी एकवचनान्त है, अत् यह प्रथमा एकवचनान्त है। सप्तम्यास्त्रल् यहाँ से सप्तम्या: इसकी अनुवृत्ति होती है। और उस प्रातिपदिक इत्यस्य विशेषणमस्ति। अत: तदन्त विधि में सप्तम्यन्त यह अर्थ प्राप्त होता है। प्रत्यय:, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात, तद्धिता: ये अधिकार करते हैं। तथा च सप्तम्यन्त किम्-प्रातिपदिक से स्वार्थ में तद्धितसंज्ञक: अत्प्रत्यय विकल्प से होता है यह सूत्रार्थ सम्पादित होता है।। वा ह छन्दसि यहाँ से वा पद का अनुकर्षण होता है। अत: तकार इत् होता है। इस कारण अ यह ही शेष रहता है। तित्स्वरितम् इस सूत्र से स्वरित स्वर अर्थ के लिए तकारानुबन्ध किया गया है,यह जानने योग्य है।

उदाहरण – क्व, कुत्र। कस्मिन् यह लौकिक विग्रह करने पर किम् ङि इस सप्तम्यन्त प्रातिपदिक से सप्तम्यास्त्रल् इस के योग से त्रल् प्राप्त होने पर उसको बांधकर किमोऽत् इस शास्त्र से अत्प्रत्यय होने पर, अनुबन्धलोप, किम् अ इस स्थिति में क्वाति इस के योग से किम् शब्द के स्थान पर क्व यह आदेश होने पर क्व अ इस स्थिति में भसंज्ञक अकार का लोप होने पर क्व् अ इस स्थिति में सुप्रत्यय और अव्यय होने से विभक्ति का लोप होने पर क्व यह रूप सिद्ध होता है।

31.8 यत्तदेतेभ्य: परिमाणे वतुप्॥ (५.२.३९)

सूत्रार्थ – तत्परिमाणमस्य इस अर्थ में परिमाण में वर्तमान प्रथमान्त यत्, तत् और एतद् से तद्धितसंज्ञक वतुप् प्रत्यय: हो।

सूत्र व्याख्या – इस विधिसूत्र में तीन पद हैं। यत्तदेतेभ्य: (५/३), परिमाणे (७/१), वतुप् (१/१) यह सूत्रगत पदच्छेद है। यत् च तत् च एतत् च इति इनका इतरेतरयोगद्वन्द्व होने पर यत्तदेतद:, तेभ्य: यत्तदेतेभ्य:। तदस्य सञ्जातं तारकादिभ्य इतच् (५.२.३६) यहाँ से तदस्य इस पद की अनुवृत्ति होती है। प्रत्यय:, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिता: इति ये अधिकार करते हैं। तेन तत्= प्रथमान्त यत्तदेत् प्रातिपदिकों से तत्परिमाण के अर्थ में तद्धितसंज्ञक वतुप् प्रत्यय पर होता है यह सूत्रार्थ सिद्ध होता है। वतुप् का पकार इत्संज्ञक है और उकार उच्चारण के लिए है, अत: वत् मात्र शेष रहता

है। यह ध्यान में रखने योग्य है कि वतिप्रत्ययान्त शब्द वत्प्रत्ययान्त शब्द से भिन्न है। वतिप्रत्ययान्तशब्द अव्यय होता है। किन्तु वतुप्-प्रत्ययान्त शब्द तीनों लिङ्गों में भी होता है।

उदाहरण- यावान्, तावान्, एतावान्।

सूत्रार्थ समन्वय - यत् परिमाणम् अस्य यह लौकिक विग्रह होने पर यत् सु इस प्रथमान्त यत्प्रातिपदिक से प्रकृत सूत्र से वतुप्-प्रत्यय, अनुबन्धलोप, प्रातिपदिकसंज्ञा, सुब्लुक होने पर यत् वत् यह होता है। तत्पश्चात् आ सर्वनाम्नः इस सूत्र से तकार के स्थान पर आकार आदेश होने पर और सवर्णदीर्घ होने पर सुप्रत्यय होकर यावत् स् यह स्थिति उत्पन्न हुई। तत्पश्चात् उगित्त्व होने से उगिदचां सर्वनामस्थानेऽधातोः इस सूत्र से नुमागम होने पर अत्वसन्तस्य चाधातोः इतस सूत्र से उपधा के दीर्घ होने पर यावान् त् स् इस स्थिति में सकार का हल्ङ्यादि लोप, तकार का संयोगान्त लोप होने पर यावान् यह रूप सिद्ध होता हैं। स्त्रीत्वविवक्षा में तो उगिदचाम् इससे ङीप्प्रत्यय होने पर यावती यह, नपुसंकलिङ्ग में तो स्वमोर्नपुंसकात् इतस सूत्र से सु का लोप होने पर यावत् यह।इस प्रकार तीन रूप होते हैं। इस प्रकार ही तत् परिमाणमस्य इस अर्थ में तावान्, तावती, तावत् यहाँ और एतत् परिमाणमस्य इस अर्थ में एतावान्, एतावती, एतावत् यहाँ समान प्रक्रिया जानने योग्य है। तत्पश्चात् इस अर्थ में ही किम् और इदम् शब्दों से प्रकारान्तर से वतुप्-प्रत्यय होता है, यह दिखाने के लिए यह सूत्र आरम्भ करते है-

31.9 किमिदम्भ्यां वो घः॥ (५.२.४४)

सूत्रार्थ - किम् और इदम् शब्दों से वतुप् प्रत्यय हो, वकार को घ आदेश हो।

सूत्रव्याख्या - इस विधि सूत्र में तीन पद हैं। किमिदम्भ्याम् (५/२), वः (६/१), घः (१/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। यत्तदेतेभ्यः परिमाणे वतुप् (५.२.३९) यहाँ से परिमाणे, वतुप् इन दोनों पदों की अनुवृत्ति होती है। तदस्य सञ्जातं तारकादिभ्य इतच् (५.२.३६) यहाँ से तदस्य इस की अनुवृत्ति होती है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः ये अधिकार सूत्र आते हैं। तथा तत्परिमाणमस्य अस्ति इस अर्थ में परिमाण होने पर विद्यमान प्रथमान्त किम् और इदम् प्रातिपदिकों से तद्धितसंज्ञक वतुप्-प्रत्यय होता है, किन्तु वकार के स्थान पर घ आदेश होता है यह सूत्रार्थ फलित होता है।

उदाहरणम् - कियान्। इयान्।

सूत्रार्थसमन्वय- किम् परिमाणम् अस्य - कियान् (क्या है परिमाण इसका अर्थात् कितना, how much)। अत्र परिमाण अर्थ में वर्तमान किम् सु इस प्रथमान्त से प्रकृत सूत्र से तत् परिमाणम् अस्य अस्ति इस अर्थ में वतुप्-प्रत्यय, अनुबन्धलोप, और वतुप् के वकार को घ आदेश होने पर किम् घत् यह होता है। तत्पश्चात् आयनेयीनीयियः फढखछघां प्रत्ययादीनाम् इस सूत्र से घकार के स्थान पर इय्-आदेश होने से किम् इय् अत् इस स्थिति में अग्रिम सूत्र को आरम्भ करते हैं-

टिप्पणियाँ

31.10 इदंकिमोरीश्की॥ (६.३.८९)

सूत्रार्थ - दृग्, दृश और वतुप् परे रहते इदम् को ईश्, किम् को की आदेश हो।

सूत्रव्याख्या - इस विधिसूत्र में दो पद है। इदंकिमोः (६/२), ईश्की (लुप्तप्रथमा द्विवचनान्त) सूत्रगत पदों का विच्छेद है। दृग्दृशवतुषु (६.३.८९) यह सूत्रम अनुवर्तित होता है। ईश् च की च ईश्की, इतरेतरयोगद्वन्द्व होने पर सौत्रत्वाद्वि विभक्ति का लोप। अथवा ईश् की यह दो पद बोध्य होने पर यथासंख्यमनुदेशः समानाम् यह परिभाषा उपस्थित होती है। ईश् का शकार शित् है। अतः शित्त्व होने से अनेकाल्शित्सर्वस्य इस परिभाषा से इदम् के स्थान पर ईश् यह सर्वादेश होता है। इस प्रकार की यह अनेकाल् है। उस कारण से उस परिभाषा से ही किम् के स्थान पर की यह सर्वादेश होता है। और तब सूत्रार्थ होगा- दग्, दृश् और वतुप् परे रहते इदम् शब्द के स्थान पर ईश् आदेश होता है, और किम् शब्द के स्थान पर की आदेश होता है।

उदाहरण - कियान्।

सूत्रार्थसमन्वय - इस प्रकार किम् इयत् इस स्थिति में एकदेशविकृतमनन्यवत् इस न्याय से वतुप्-प्रत्यय पर होने से इदंकिमोरीश्की इस सूत्र के योग से किम् के स्थान पर की यह सर्वादेश होने पर की इयत् यह होता है। तत्पश्चात् यस्येति च इस सूत्र से भसंज्ञक ईकार का लोप होने पर कियत् यह निष्पादित होता है। तत्पश्चात् पुंस्त्व विवक्षा में सुप्रत्यय, उपधादीर्घ, नुमागम, हल्ङ्यादिलोप, और संयोगान्तलोप होने पर कियान् यह रूप सिद्ध होता है। स्त्रीत्व विवक्षा में तो उगितश्च इससे ङीप् होने पर कियती यह रूप, नपुंसकलिङ्ग में तो स्वमोर्नपुंसकात् इससे सु का लोप होकर कियत् यह रूप सिद्ध होता है।

इस प्रकार ही इदं परिमाणमस्य इस अर्थ में इयान् (पुं), इयती (स्त्री.), इयत् (नपुं.)। यहाँ विशेष ज्ञात करने योग्य है - प्रकृत सूत्र से इदम् शब्द के स्थान पर ईश् आदेश होने पर ई इयत् इस स्थिति में यस्येति च इस सूत्र से भसंज्ञक ईकार का लोप होने पर प्रत्यय मात्र ही शेष रहता है। अतः इयान् इत्यादि में प्रकृति का लेश भी नहीं रहता है।

अब अवयवपरक संख्यावाचक शब्द से अवयवी के बोध के लिए तयप्-प्रत्यय का विधान करने के लिए यह सूत्र आरम्भ करते है-

31.11 संख्याया अवयवे तयप्॥ (५.२.४२)

सूत्रार्थ - अवयव में वर्त्तमान संख्यावाचक प्रथमान्त प्रातिपदिक से अस्य इस अर्थ में तद्धित प्रत्यय तयप् होता है।

सूत्र व्याख्या - इस विधिसूत्र में तीन पद है।संख्यायाः (५/१), अवयवे (७/१), तयप् (१/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। तदस्य सञ्जातं तारकादिभ्य इतच् (५.२.३६) यहाँ से तदस्य इस पदद्वय की अनुवृत्ति होती है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः ये अधिकार सूत्र आते हैं, इस प्रकार अवयव अर्थ में वर्तमान प्रथमान्त संख्यावाचक प्रातिपदिक से अवयवः अस्य अस्ति

इस अर्थ में तद्धितसंज्ञक तयप् प्रत्यय परे होता है, यह सूत्रार्थ है। तयप् का पकार इत्संज्ञक है, अतः तय मात्र शेष रहता है। अनुदात्तौ सुप्पितौ इस सूत्र से अनुदात्त स्वर के लिए तयप् होने पर पित्करण है।

उदाहरण- पञ्चतयम्।

सूत्रार्थ समन्वय - पञ्च अवयवा अस्य सन्ति - पञ्चतयम् (पांच अवयव हैं इस के, अर्थात् पाञ्च अवयवों वाला अवयवी)। यहाँ अवयव अर्थ में वर्तमान पञ्चन् जस् इस संख्या वाचक प्रथमान्त प्रातिपदिक से अवयवाः सन्ति इस अर्थ में प्रकृत सूत्र से तयप् होने पर, अनुबन्धलोप, तद्धितान्त होने के कारण प्रातिपदिकसंज्ञा, सुब्लुक होने पर पञ्चन् तय यह होता है। तत्पश्चात् स्वादिष्वसर्वनामस्थाने इस सूत्र से पद संज्ञा होने पर न लोपः प्रातिपदिकान्तस्य इस सूत्र से नकार का लोप, नपुंसकलिङ्ग में विभक्ति कार्य होने पर पञ्चतयम् यह रूप सिद्ध होता है। स्त्रीत्वविवक्षा में तो टिड्ढाणञ् इत्यादि सूत्र से ङीप् होकर भसंज्ञक अकार का लोप होने पर पञ्चतयी यह रूप सिद्ध होता है। तयप्-प्रत्ययान्त शब्द का धर्मप्रधान निर्देश होने पर साधारणतः नपुंसकलिङ्ग और स्त्रीलिङ्ग में प्रयोग होता है। जैसे- वृत्तीनां पञ्चतयम्, वृत्तीनां पञ्चतयी। धर्मी प्रधान निर्देश होने पर तो विशेष्य के अनुसार लिङ्ग होता है, उससे तीनों लिङ्ग होते हैं। यथा त्रयाः त्रये वा लोकाः, त्रय्यः स्थितयः, त्रयाणि जगन्ति।

एवमेव चत्वारः अवयवाः अस्य - चतुष्टयम्।

षट् अवयवाः अस्य - षट्तयम्।

सप्त अवयवाः अस्य - सप्ततयम्।

अष्टौ अवयवाः अस्य - अष्टतयम्।

नव अवयवाः अस्य - नवतयम्।

वहाँ द्वि-त्रि शब्दों से विहित तयप् के स्थान पर विकल्प से अयच्-विधान के लिए सूत्र आरम्भ करते हैं-

31.12 द्वित्रिभ्यां तयस्यायज्वा॥ (५.२.४३)

सूत्रार्थ - द्वि और त्रि शब्द से परे तयप् के स्थान में अयच् आदेश हो विकल्प से।

सूत्रव्याख्या - इस विधिसूत्र में चार पद हैं। द्वित्रिभ्याम् (५/२), तयस्य (६/१), अयच् (१/१) वा (अव्ययम्) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। द्विश्च त्रिश्च तयोः इतरेतरयोगद्वन्द्वे द्वित्रौ, ताभ्यां द्वित्रिभ्याम्। इस प्रकार द्वि और त्रि प्रातिपदिकों से विहित तयप् के स्थान पर विकल्प से अयज् आदेश होता है, यह सूत्र का अर्थ सिद्ध होता है। अयच् का चकार इत्संज्ञक है। अयचः चित्करणं चितः (६.१.१५७) इस के योग से अन्तोदात्त स्वर के लिए है, यह जानना चाहिए। अयच् यह अनेकाल् है। अतः अनेकाल्शित्सर्वस्य इस सूत्र से तय इस के सम्पूर्ण स्थान पर अयच् यह सर्वादेश होता है।

टिप्पणियाँ

उदाहरण – द्वयम्, द्वितयम्। त्रयम्, त्रितयम्।

सूत्रार्थ समन्वय – द्वौ अवयवौ अस्य – द्वयं द्वितयं वा (दो अवयव हैं इस के अर्थात् दो अवयवों वाला अवयवी)। यहाँ द्वि औ इस प्रथमान्त प्रातिपदिक से अवयवाः अस्य सन्ति इस अर्थ में संख्याया अवयवे तयप् इस सूत्र से तयप् प्रत्यय होने पर तयप् में अनुबन्धलोप होने पर सुपो धातुप्रातिपदिकयोः इस से सुब्लुक होने पर द्वि तय यह होता है। तत्पश्चात् द्वित्रिभ्यां तयस्यायज्वा इस प्रकृत सूत्र से तय के स्थान पर विकल्प से अयज् आदेश होने पर, अनुबन्धलोप होने पर द्वि अय इस स्थिति में भसंज्ञक अकार का लोप होने पर द्व अय यह होता है। तत्पश्चात् विभक्ति कार्य होने पर द्वयम् यह रूप होता है। अयच् के अभाव में तयप् होने पर तो द्वितयम् यह रूप होता है।

इस प्रकार ही त्रयः अवयवाः अस्य इस अर्थ में त्रयं अथवा त्रितयं यह रूप होता है।

कभी तयप् के स्थान पर नित्य अयच् आदेश होता है। यथा उभौ अवयवौ अस्य इस अर्थ में उभयम् यह रूप होता है। यहाँ तो उभादुदात्तो नित्यम् इससे तयप् के स्थान पर नित्य ही अयज् आदेश होता है।

31.13 अतिशायने तमबिष्ठनौ।। (५.३.५५)

सूत्रार्थ – अतिशय विशिष्टार्थ में वर्तमान प्रथमान्त पद से स्वार्थ में तमप् और इष्ठन्-ये दोनों होते हैं।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र है। दों पदों का सूत्र है। तमप् च इष्ठन् च तमबिष्ठनौ यह प्रथमा एकवचनान्त विधीयमान प्रत्यय है। अतिशायने यह सप्तमी एकवचनान्त है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः ये अधिकार करते हैं। अतिशायन शब्द का प्रकर्ष अर्थ है, तमप् का पकार और इष्ठन् का नकार इत्संज्ञक होते हैं। अतः तम, इष्ठ ये ही शेष रहते हैं। तमप् का पकार अनुबन्ध अनुदात्तौ सुप्पितौ इससे अनुदात्त स्वर के लिए है। इष्ठन् का नकारानुबन्ध ञ्नित्यादिर्नित्यम् इससे उदात्त स्वर के लिए है। इस प्रकार प्रकर्ष विशिष्टार्थ में वर्तमान प्रातिपदिक से तद्धितसंज्ञक तमप् और इष्ठन् प्रत्यय परे में होते हैं, यह सूत्र का अर्थ है। तमप्-प्रत्यय प्रत्येक प्रातिपदिक से होता है, किन्तु इष्ठन् प्रत्यय गुणवाचक से ही होता है यह पार्थक्य सम्यक् रूप से जानना चाहिए।

उदाहरण – अयम् एषाम् अतिशयने लघुः यह लौकिक विग्रह होने पर अतिशय विशिष्टार्थ में वर्तमान लघु सु इस प्रथमान्त प्रातिपदिक से अतिशायने तमबिष्ठनौ इस सूत्र के योग से तमप्-प्रत्यय होने पर, अनुबन्धलोप, प्रातिपदिकसंज्ञादि कार्य होने पर लघुतमः यह रूप सिद्ध होता है। इष्ठन्प्रत्यय होने पर तो लघु इष्ठ इस स्थिति में टेः इस सूत्र से टिसंज्ञक उकार का लोप होने पर लघ् इष्ठ इस स्थिति में वर्णसम्मेलन और प्रातिपदिकादि कार्य होने पर लघिष्ठः यह रूप सिद्ध होता है। तमप्-प्रत्यय होने पर तो लघुतमः यह रूप होता है।

अयम् एषाम् अतिशयेन आढ्यः यहाँ तो आढ्यशब्द लघुशब्द के समान गुणवाचक नहीं है। अतः इष्ठन्प्रत्यय नहीं, अपितु तमप्-प्रत्यय ही होता है। इस कारण आढ्यतमः यह रूप होता है इति जानीत। बहुत में एक के अतिशय बोधन के लिए यह सूत्र आरंभ किया गया है। दो में से एक के अतिशय बोधन के लिए तो अग्रिम सूत्र आरंभ किया जाता है-

31.14 द्विवचनविभज्योपपदे तरबीयसुनौ॥ (५.३.५७)

सूत्रार्थ – दो में एक के अतिशय अर्थ में विभक्तव्य ओर उपपद सुप्तिङन्त से तरप् और ईयसुन् प्रत्यय होते हैं।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में दो पद है। उच्यते इति वचनं, द्वयोर्वचनं द्विवचनम्। विभक्तुं योग्यं विभज्यं, द्विवचनं च विभज्यं च उनका समाहारद्वन्द्व द्विवचनविभज्यम्। द्विवचनविभज्यं च तद् उपपदम्– द्विवचनविभज्योपपदमिति कर्मधारयः, तस्मिन् इति द्विवचनविभज्योपपदे यह सप्तमी एकवचनान्त है। तरप् च ईयसुन् च इति तयोरितरेयोगद्वन्द्वो तरबियसुनौ यह प्रथमा द्विवचनान्त विधीयमान प्रत्यय है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः ये सूत्र अधिकार करते हैं। यहाँ द्विवचनम् यह पारिभाषिक शब्द नहीं है, अपितु दो पदार्थों का प्रतिपादक है, यह अर्थ है। इस प्रकार द्विवचन अथवा विभक्तव्य उपपद में होने पर उत्कर्ष विशिष्टार्थ में वर्तमान सुबन्त और तिङन्तों से तरप् और ईयसुनौ प्रत्यय होते हैं यह सूत्र का अर्थ है। तरप् का पकारानुबन्ध अनुदात्तौ सुप्पितौ इससे अनुदात्त स्वर के लिए है। यहां सुबन्त और तिङन्त यह प्रकृति द्वय है। द्विवचन और विभज्य यह उपपद द्वय है। तथा तरप् और ईयसुन् प्रत्ययद्वय है। यहाँ पारिभाषिक उपपद नहीं है, अपितु समीप में उच्चारित पद उपपद है, यह ही अन्वर्थ स्वीकार किया जाता है। यह सूत्र अतिशायने तमबिष्ठनौ तिङश्च इस सूत्र का अपवादभूत है। अजादी गुणवचनादेव इस नियम के अनुसार ईयसुन्प्रत्यय गुणवाचक प्रातिपदिक से ही होता है, तिङन्त से नहीं। यह नियम है, इसका ध्यान रखना चाहिए।

उदाहरण – द्विवचन उपपद सुबन्त का उदाहरण – अयम् अनयोः लघुः-लघुतरः, लघीयान्।

अयम् अनयोः अतिशयेन लघुः यह लौकिक विग्रह है। यहाँ अनयोः यह पदार्थ द्वय का प्रतिपादक पद है, समीप में उच्चारित किया गया है। तत्पश्चात् अतिशय विशिष्टार्थ में वर्तमान लघु सु इस सुबन्त से स्वार्थ में द्विवचनविभज्योपपदे तरबीयसुनौ इस सूत्र से तरप्प्रत्यय होने पर, अनुबन्धलोप, प्रातिपदिकंज्ञादि कार्य होने पर लघुतरः यह रूप सिध्यति सिद्ध होता है। जब तो ईयसुन्प्रत्यय होता है तब अनुबन्धलोप होने पर टेः इस सूत्र से टिसंज्ञक उकार का लोप होने पर लघीयस् इस स्थिति में सुप्रत्यय होने पर उगिदचां सर्वनामस्थानेऽधातोः इस सूत्र से नुमागम होने पर लघीयन्स् स् इस स्थिति में सान्महतः संयोगस्य इस सूत्र से दीर्घ होने पर लघीयान्स् स् इस स्थिति में सु के सकार का हल्ङ्यादिलोप होने पर प्रकृति के सकार का संयोगान्तस्य इस से लोप होने पर लघीयान् यह रूप सिद्ध होता है। इस रीति से पटुतराः इत्यादि रूप भी सिद्ध होता है।

द्विवचन उपपद होने पर तिङन्त का उदाहरण – इयम् अनयोः अतिशयेन पचति इति पचतितराम्।

विभक्तव्य उपपद होने पर सुबन्त का उदाहरण– माथुराः पाटलिपुत्रकेभ्यः आढ्यतराः। यहाँ पाटलिपुत्रकेभ्यः यह विभज्य उपपद है।

31.15 प्रकृत्यैकाच्॥ (६.४.१६३)

सूत्रार्थ – इष्ठादि प्रत्यय परे रहते एकाच् शब्द को प्रकृति भाव हो।

टिप्पणियाँ

सूत्रव्याख्या - यह विधि सूत्रम् है। इस सूत्र में पद द्वय है। प्रकृत्या यह तृतीया एकवचनान्त है। एकः अच् यस्य तद् एकाच्, बहुव्रीहिसमास है। एकाच् यह प्रथमा एकवचनान्त है। तुरिष्ठेमेयः सु इत्यतः इष्ठेमेयस्सु इसकी अनुवृत्ति होती है। भस्य, अङ्गस्य ये दोनों अधिकार करते हैं। और विभक्ति विपरिणाम से अङ्गं भम् यह अर्थ होता है। इस प्रकार एकाच् भसंज्ञक अङ्ग को प्रकृति भाव हो, इष्ठन्, इमनिच् तथा ईयसुन् प्रत्यय परे रहते। अपने रूप में स्थित रहने को ही प्रकृतिभाव कहा जाता है। टेः इति सूत्र से टिलोप प्राप्त होने पर उसके अभाव का बोध कराने के लिए इसकी प्रवृत्ति होती है।

उदाहरणम्- श्रेष्ठः, श्रेयान्। अयमेषाम् अतिशयेन प्रशस्य यह लौकिक विग्रह होने पर प्रशस्य सु इस अलौकिक विग्रह में अतिशायने तमबिष्ठनौ इस के योग से इष्ठन्प्रत्यय होने पर प्रातिपदिक संज्ञा, सुब्लुक होने पर प्रशस्य इष्ठ इस स्थिति में प्रशस्य श्रः इसके योग से प्रशस्य शब्द के स्थान पर श्र यह आदेश होने पर श्र इष्ठ जायते। तत्पश्चात् प्रकृति का एकाच् वाली होने से टेः इसके योग से टि लोप प्राप्त होने पर उसको बांधकर प्रकृत्यैकाच् इस सूत्र से प्रकृतिभाव होने पर आद्गुणः इससे गुणैकादेश होने पर श्रेष्ठ यह होता है। तत्पश्चात् स्वादिकार्य होने पर श्रेष्ठः यह रूप होता है। पुनः द्विवचनविभज्योपपदे तरबीयसुनौ इस सूत्र से ईयसुन्प्रत्यय होने पर प्रशस्य श्रः इससे श्र आदेश होने पर प्रकृतिवद्भाव होकर गुणैकादेश और स्वादिकार्य होने पर श्रेयान् यह रूप भी होता है।

अयम् एषाम् अतिशयेन प्रशस्यः इस अर्थ में प्रशस्य सु यह अलौकिक विग्रह होने पर अतिशायने तमबिष्ठनौ इस सूत्र से इष्ठन्प्रत्यय, अनुबन्धलोप, प्रातिपदिकसंज्ञा, सुब्लुक होने पर प्रशस्य इष्ठ इस स्थिति में यह सूत्र आरम्भ करते है-

31.16 ज्य च॥ (५.३.६१)

सूत्रार्थः- प्रशस्य को ज्य आदेश हो इष्ठन् और ईयसुन् परे रहते।

सूत्रव्याख्या - इस विधि सूत्र में दो पद ज्य यह लुप्त प्रथम पद है। च यह अव्यय पद है। प्रशस्यस्य श्रः यहाँ से प्रशस्यस्य इसकी और अजादी गुणवचनादेव यहाँ से विभक्तिविपरिणाम होने पर अजादौ इसकी अनुवृत्ति होती है। प्रत्ययः इसका अधिकार है। और उसका विभक्तिवचन विपरिणाम होने से प्रत्ययय़ोः यह अर्थ है। इस प्रकार अजादि प्रत्ययों से परे अर्थात् इष्ठन् और ईयसुन् प्रत्यय परे रहते प्रशस्य के स्थान पर ज्य यह आदेश होता है, यह सूत्रार्थ है।

उदाहरण - ज्येष्ठः।

सूत्रार्थसमन्वय - इस प्रकार अयम् एषाम् अतिशयेन प्रशस्य इस अर्थ में प्रशस्य इष्ठ यह होने पर अजादि इष्ठन्प्रत्यय पर है इस कारण से प्रकृत सूत्र से ज्य आदेश, भसंज्ञक अकार का लोप प्राप्त होने पर प्रकृत्यैकाच् इस सूत्र से प्रकृतिवद्भाव होने और स्वादिकार्य होने पर ज्येष्ठः यह रूप होता है।

अयम् एषाम् अतिशयने प्रशस्यः इस अर्थ में तो द्विवचनविभज्योपपदे तरबीयसुनौ इसके पक्ष में ईयसुन् होने पर, अनुबन्धलोप, प्रातिपदिकसंज्ञा, सुब्लुक होने पर प्रशस्य ईयस् यह होता है। तत्पश्चात् ज्य च इस सूत्र से ज्यादेश होने पर ज्य ईयस् इस स्थिति में भसंज्ञक आकार का लोप प्राप्त होने पर उसको बांधकर प्रकृत्यैकाच् इस सूत्र से प्रकृतिभाव होने पर लोप नहीं होता है। तत्पश्चात् ज्यादादीयसः इस सूत्र से ईकार के स्थान पर आकारादेश होने से ज्या आयस् इस स्थिति में अकः सवर्णे दीर्घः इस सूत्र से दीर्घ होकर ज्यायस् यह होता है। तत्पश्चात् स्वादिकार्य होने पर ज्येयान् यह रूप होता है।

31.17 कु तिहोः॥ (७.२.१०४)

सूत्रार्थ – तकारादि प्रत्यय, हकारादि प्रत्यय परे रहते किम्-शब्दस् के स्थान पर कु यह सर्वादेश होता है।

सूत्रव्याख्या – तिश्च ह् च दोनों का इतरयोगद्वन्द्व होने पर तिहौ तयोः इति तिहोः यह सप्तमी द्विवचनान्त है।यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में पदद्वय है। अष्टन आ विभक्तौ यहाँ से विभक्तौ, किमः कः यहाँ से किमः इसकी अनुवृत्ति होती है। यस्मिन्विधिस्तदादावल्ग्रहणे इस परिभाषा से तदादि विधि से तकारादि-थकारादि यह ही अर्थ होता है।यह सूत्र किमः कः इस सूत्र का अपवाद है, इस प्रकार सूत्रार्थ सिद्ध होता है।

उदाहरण – कुतः, कस्मात्। कस्मात् यह लौकिक विग्रह होने पर किम् ङसि इस अलौकिक विग्रह में पञ्चम्यास्तसिल् इस सूत्र से तसिल्प्रत्यय, अनुबन्धलोप, प्रातिपदिक संज्ञा, सुब्लुक होने पर किम् तस् इस स्थिति में प्राग्दिशो विभक्तिः इस सूत्र से विभक्ति संज्ञा होने पर किमः कः इस सूत्र से क आदेश प्राप्त होने पर उसको बांधकर कु तिहोः इस सूत्र से कु यह सर्वादेश होने पर कुतस् यह होता है। तत्पश्चात् सुविभक्ति होने पर और अव्ययत्व होने से अव्ययादाप्सुप इससे सु का लोप होने पर शेष के सकार का रुत्व विसर्ग करने पर कुतः यह रूप सिद्ध होता है। 'तसिल्' विकल्प से होता है अतः पक्ष में कस्मात् यह भी सही है। इस प्रकार ही यतः,यस्मात्। ततः, तस्मात्। इतः, अस्मात्। अतः, अस्मात्। अमुतः, अमुष्मात्। बहुतः, बहुभ्यः इत्यादि रूप सिद्ध होते हैं।

31.18 कृभ्वस्तियोगे संपद्यकर्तरि च्विः॥ (५.४.५०)

सूत्रार्थ – विकारात्मतां प्राप्नुवत्यां प्रकृतौ वर्तमानाद् विकारशब्दात् स्वार्थे च्विर्वा स्यात् करोत्यादिभिर्योगे।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में सूत्रे तीन पद हैं। कृश्च भूश्च अस्तिश्च तेषामितरेतर योगद्वन्द्वः कृभ्वस्तयः। तेषां कृभ्वस्तीनाम्, तेषां योगः कृभ्वस्तियोगः तस्मिन्, कृभ्वस्तियोगे यह सप्तमी एकवचनान्त है। सम्पदनं सम्पद्यः तस्य कर्ता, सम्पद्यकर्ता, तस्मिन् सम्पद्यकर्तरि यह भी सप्तमी एकवचनान्त है, च्विः यह प्रथमा एकवचनान्त विधीयमान प्रत्यय है। प्रत्ययः, परश्च, ङ्याप्प्रातिपदिकात्, तद्धिताः ये अधिकार करते हैं। अभूततद्भावे वक्तव्यम् यह वार्तिक यहाँ आश्रय है। अभूतस्य=कार्यरूप से अपरिणत का तद्भाव – उस कार्यरूप से भाव अभूत तद्भाव यह कहा

टिप्पणियाँ

जाता है। इस प्रकार अभूततद्भाव गम्य होने पर जो कर्ता रूप प्रातिपदिक बनता है, उस प्रातिपदिक से स्वार्थ में विकल्प से च्विप्रत्यय होता है, यदि कृ, अस्, भू इनमें से किसी एक के साथ उस प्रातिपदिक का योग होता है। च्वि यहाँ चकार चुटू इस सूत्र से इत्संज्ञक है, और वकार वेरपृक्तस्य इस सूत्र से इत्संज्ञक है, इकार उपदेशेऽजनुनासिक इत् इससे इत्संज्ञक है। अतः च्वि यहाँ कुछ भी शेष नहीं रहता है। अतः यह सर्वापहारलोप कहलाता है। च्विप्रत्ययान्त की ऊर्यादिच्विडाचश्च इस सूत्र से निपातसंज्ञा होने पर स्वरादिनिपातमव्ययम् इससे अव्ययसंज्ञक होता है यह मन में सम्यक रूप से धारण करना चाहिए।

उदाहरणम्- अकृष्णः कृष्णः सम्पद्यते, तं करोति इति कृष्णीकरोति। यहाँ अभूततद्भाव स्पष्ट ही है। सम्पद्यते इसके कर्तृद्वय है - अकृष्णः और कृष्णः। अत्र विकारवाचक कृष्ण शब्द को वक्ता प्रमुखता से कर्तृत्व रूप में कहना चाहता है। किन्तु उसका कृ धातु के साथ भी योग है, क्योंकि यह कृ धातु कर्म भी है। यहाँ अकृष्णः शब्द प्रकृति और कृष्णः शब्द विकार है। कार्यकारण में अभेद विवक्षा होने पर कृष्णशब्दः प्रकृति अकृष्ण में भी विद्यमान है। इस प्रकार विकारवाचक कृष्ण अम् इस प्रातिपदिक से अभूततद्भावे वक्तव्यम् इस वार्तिक के सहयोग से कृभ्वस्तियोगे सम्पद्यकर्तरि च्विः इस सूत्र से च्वि प्रत्यय, उसका सर्वापहारलोप होने पर प्रातिपदिकसंज्ञा, सुब्लुक होने पर कृष्ण करोति इस स्थिति में अग्रिम यह सूत्र आरम्भ करते हैं -

31.19 अस्य च्वौ॥ (७.४.३२)

सूत्रार्थ - अवर्ण को ईकारत् च्वि प्रत्यय परे रहते।

सूत्रव्याख्या - यह विधि सूत्रम् है। यह दो पदों का सूत्र है। अस्य यह षष्ठी एकवचनान्त है। च्वौ यह सप्तमी एकवचनान्त है। ई घ्राध्मोः यहाँ से ई यह अनुवर्तित होता है। अङ्गस्य इसका अधिकार आता है।और उसका विशेषण अस्य यह है। अतः विशेषणत्व होने से तदन्त विधि में अवर्णान्त अङ्ग का यह अर्थ होता है।इस प्रकार च्विप्रत्यय परे रहते अवर्णान्त के स्थान पर ईकारादेश होता है, यह सूत्रार्थ है। अलोऽन्त्यस्य इस परिभाषा की उपस्थिति है। उससे अन्त्य अल् के स्थान पर अर्थात् अवर्ण के स्थान पर ही ईकारादेश होता है। च्वि प्रत्यय का लोप होने पर भी प्रत्ययलोपे प्रत्ययलक्षणम् इस परिभाषा से ईकारादेश सिद्ध होता है।

उदाहरण - इस प्रकार कृष्ण करोति इस स्थिति में अस्य च्वौ इस सूत्र से णकारोत्तरवर्ती अकार के स्थान पर ईकारादेश होने पर कृष्णी यह रूप सिद्ध होता है। भवति योग होने पर तो कृष्णीभवति यह रूप सिद्ध होता है। इस प्रकार अब्रह्म ब्रह्म भवति इस अर्थ में ब्रह्मीभवति यह रूप होता है।

अशुचिः शुचिर्भवति इस अर्थ में तो कृभ्वस्तियोगे सम्पद्यकर्तरि च्विः इस के योग से च्विप्रत्यय होने पर उसका लोप होने पर प्रातिपदिकसंज्ञा और सुब्लुक होने पर शुचि भवति इस स्थिति में अग्रिम सूत्र आरम्भ करते हैं -

31.20 च्वौ च॥ (७.४.२६)

सूत्रार्थ – च्वि परे रहते परे पूर्व का दीर्घ होता है।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र है। यह द्विपद सूत्र है। च्वौ यह सप्तमी एकवचनान्त है, च यह अव्ययपद है। अङ्गस्य यह अधिकार करता है। अचः यह अङ्ग इस विशेष्य का विशेषण है। अतः येन विधिना तदन्तस्य इस सूत्र से तदन्तविधि में अजन्त अङ्ग का यह अर्थ होता है। अकृत्सार्वधातुकयोर्दीर्घः यहाँ से दीर्घः इसकी अनुवृत्ति होती है। इस प्रकार सूत्रार्थ है – च्विप्रत्यय परे रहते अजन्त अङ्ग के स्थान पर दीर्घादेश होता है। अलोऽन्त्यस्य इस परिभाषा से अन्त्य अल् के=अच् के ही स्थान पर दीर्घादेश होता है।

उदाहरण – इस प्रकार शुचि भवति इस स्थिति में च्वौ च इस सूत्र से इकार का दीर्घ ईकार होने पर शुचीभवति यह रूप सिद्ध होता है।

पाठगत प्रश्न 31.2

1. अशुचिः शुचिर्भवति इस लौकिक विग्रह में च्विप्रत्यय होने पर क्या रूप होता है?
2. कृष्णीकरोति यहां अकार का ईत्त्व किस सूत्र से होता है?
3. शुचीभवति यहाँ दीर्घ किस से होता है?
4. च्विप्रत्यय विधायक सूत्र कौन सा है?
5. कस्मात् इस अर्थ में तद्धितान्त शब्द कौन सा है?
6. किम् शब्द के स्थान पर कु यह आदेश किससे होता है?
7. अयमेषाम् अतिशयेन प्रशस्य इस लौकिक विग्रह में तद्धितान्त शब्द कौन सा है?
8. प्रकृत्यैकाच् यह सूत्र क्या विधिसूत्र है अथवा अतिदेशसूत्र है?
9. तरप्प्रत्यय विधायक सूत्र लिखिए।
10. तमप्-प्रत्यय विधायकसूत्र लिखिए।

पाठ का सार

तद्धित प्रत्यय सम्बन्धी इस अन्तिम पाठ में प्रायः हमारे द्वारा व्यवहृत शब्दों की आलोचना विद्यमान हैं जिससे हमारे लोकव्यवहार के समय में शब्द प्रयोग करने के लिए समर्थ होंगे। अण्, अञ्, त्व, तल्, इमनिच्, ष्यञ्, चुञ्चुप्, चणप्, तरप्, तमप्, ईयसुन्, और च्वि इन मुख्यों प्रत्ययों के विषय में यहाँ आलोचना विहित है। पृथोर्भावः इस अर्थ में कितने रूप होते हैं इस विषय में स्पष्ट व्याख्यान

किया गया है। और विशेष रूप उस उस स्थान पर सूत्र सहित प्रदर्शित किए गए हैं। कृभ्वस्तियोगे संपद्यकर्तरि च्वि: इस च्विप्रत्यय विधायक सूत्र की उदाहरण सहित व्याख्या की गई है। और वहाँ अकृष्ण: कृष्ण: सम्पद्यते इस अर्थ में कृष्णीभवति रूप सिद्ध होता है, उस विषय में यहां भली-भाँति व्याख्या की गई है, जिससे अन्य रूप भी सिद्ध करने में समर्थ हो सकते हैं। इस प्रकार यह तद्धित प्रकरण का अंतिम पाठ समाप्त होता है।

पाठांत प्रश्न

1. सार्वभौम शब्द की रूप सिद्धि कीजिए।
2. तस्य भावस्त्वतलौ इस सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
3. पृथोर्भाव: इस अर्थ में कितने रूप होते हैं और उनकी रूपसिद्धि कीजिए।
4. तरप् और तमप्-प्रत्यय के विषय में टिप्पणी लिखिए।
5. कृभ्वस्तियोगे संपद्यकर्तरि च्वि: इति सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
6. गुणवचनब्राह्मणादिभ्य: कर्मणि च इस सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
7. सर्वभूमिपृथिवीभ्यामणञौ इस सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
8. तस्येश्वर: इस सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

31.1

1. अण्
2. वतुप्
3. गोता, गोत्वम् यह रूपद्वय
4. चुञ्चुप्
5. तेन वित्तश्चुञ्चुप्चणपौ
6. ष्यञ्
7. ष्यञ्प्रत्यय:

8. इमनिच्

9. प्रथिमा

10. तलन्तं स्त्रियाम्

31.2

1. शुचीभवति

2. अस्य च्वौ

3. च्वौ च

4. कृभ्वस्तियोगे संपद्यकर्तरि च्विः

5. कुतः

6. कु तिहोः

7. श्रेष्ठः, श्रेयान्

8. विधिसूत्रम्

9. द्विवचनविभज्योपपदे तरबीयसुनौ

10. अतिशायने तमबिष्ठनौ

॥ इक्कतीसवां पाठ समाप्त॥

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान

उच्चतर माध्यमिक पाठ्यक्रम
संस्कृत व्याकरण (३४६)

औचित्य

भावों का आदान-प्रदान ही भाषा कहलाती है। भाषा की उन्नति समाज की उन्नति का संकेत करती है। समाज अपने उन्नत विविध भावों को प्रकट करने के लिए भाषा का व्यवहार करता है। यदि भाषा में त्रुटि हो तो भाव के प्रकट होने में कठिनता होती है। तब भाषा विद्वान और भाषा व्यवहार कर्ता भाषा में परिवर्तन करते हैं। भाषा की उपयोगिता को बढ़ाते हैं। क्रमशः भाषा के परिवर्तन के नियम उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार भाषा के नियमों का संकलन ही व्याकरण कहलाता है। सभी देशों में अलग-अलग भाषाएं हैं। सभी राज्यों में भी अलग-अलग भाषाएं हैं। इसीलिए अन्य के साथ भावों को आदान प्रदान करना दुष्कर होता है। एक भाषा में विद्यमान उत्तम वांग्मय आदि अन्य भाषाओं को बोलने वाले लोगों के लिए वंचित रहती है। यही सबसे बड़ा अंतर है। इसीलिए किसी महान और पवित्र भाषा का ग्रहण करना चाहिए जिसकी सभी भाषाएं संतति के रूप में विद्यमान हों। संस्कृत ही वह भाषा है। यही भाषा समस्या की एक मेव समाधान है। संस्कृत भाषा का व्याकरण सुदृढ़ है। नए शब्दों के निर्माण का सामर्थ्य भी है। यदि हम संस्कृत जानते हैं तो 10000 वर्ष पुराने ग्रंथों को हम सब आज भी पढ़ने और समझने में सक्षम हो सकते हैं। यदि हम सभी संस्कृत में लेखन कार्य करें तो हमारे द्वारा निर्मित साहित्य हजारों वर्षों के बादभी लोग पढ़ सकते हैं। इसलिए इस संसार में संस्कृत ही सर्वश्रेष्ठ भाषा है। संस्कृत शिक्षा से और संस्कृत शब्दों के उच्चारण मात्र से मानव जाति गौरवान्वित और शक्तिभृत होती है। भारत में जो भी संस्कृत जानता है उसके वक्तव्य के समय उसे रोककर कोई भी नहीं बोल सकता। धर्म रहस्य काव्य रहस्य और दर्शन रहस्य इस भाषा से निबद्ध है। जो भाषा को जानता है उसके समक्ष ज्ञान का भंडार खुला रखा रहता है। इतना ही नहीं स्वामी विवेकानंद ने कहा है- **''मैं कहता हूँ आपकी अवस्था की उन्नति का साधन एकमात्र संस्कृत भाषा का ज्ञान ही है''**। समाज में जाति भेद का नाश भी संस्कृत अध्ययन से ही होगा। न केवल सवर्ण के लिए अपितु सभी के लिए संस्कृत अत्यंत उपकारक है।

जगत में प्रायः सभी भाषाएं संस्कृत भाषा से ही उत्पन्न हुई हैं। सभी की मूल भाषा यही भाषा है। भारत के प्राचीन इतिहास का अध्ययन भी भारतीय और विदेशी विद्वान करना चाहते हैं। परंतु संस्कृत भाषा के ज्ञान के बिना वे पंगुवत हैं।

भाषा राज्य निर्माण काल में राज्य भेदों का कारण बनी। देश में विभाजन का कारण प्रादेशिक भाषाएं की थी। परंतु संस्कृत भाषा राष्ट्र को एक करने का कारण है। बौद्धों जैनियों और हिंदुओं के मूलग्रंथ अनेक दार्शनिक ग्रंथ और काव्य इसी भाषा में लिखित हैं। इसलिए इस भाषा को केवल किसी एक धर्म की भाषा बोलना यह अज्ञानता को दर्शाता है।

''काणादं पाणिनीयं च सर्वशास्त्रोपकारकम्'' यह प्राचीन उठती है अर्थात आन्वीक्षकी विद्या (न्यायशास्त्र), पाणिनीय व्याकरण अन्य सभी शास्त्रों का उपकारक है। अतः संस्कृत में जिस किसी भी शाखा को पढ़ने की इच्छा हो उसके लिए न्याय और व्याकरण का थोड़ा बहुत ज्ञान आवश्यक है। इसलिए संस्कृत जिज्ञासुओं के लिए व्याकरण की अत्यंत उपयोगिता को देखते हुए, यह व्याकरण पाठ्यविषय के रूप में निर्धारित किया गया है। महर्षि पतंजलि कहते हैं की **''संस्कृत व्याकरण के ज्ञान के साथ यदि संस्कृत भाषा का प्रयोग किया जाता है तो प्रयोग कर्त्ता पुण्य प्राप्त करता है''**। यह भी व्याकरण अध्ययन का लाभ है। अतः व्याकरण का अध्ययन करना चाहिए।

भाषा के द्वारा भावों के आदान-प्रदान के समय कुछ भी त्रुटि होती है तो विघ्न या समस्या उत्पन्न हो सकती है। शत्रु मित्र बन सकते हैं और मित्र शत्रु बन सकते हैं। इसलिए भाषा साधारण रूप से हमारे लिए गुरुत्व के समान है। इसलिए कहा गया है-

यद्यपि बहुनाधीषे तथापि पठ पुत्र व्याकरणम्।
स्वजनः श्वजनो माभूत् सकलं शकलं सकृत् शकृत्॥

अर्थात- पुत्र, यद्यपि तुम बहुत ना पढो, तथापि व्याकरण पढो इसलिए कि स्वजन (अपने लोग) का श्वजन (कुत्ते) ना हो, सकल (सब) का शकल (टुकडें) ना हो, और सकृत् (एकबार) का शकृत् (मल) ना हो।

इसलिए भी व्याकरण का अध्ययन करें।

अधिकारी

- यह पाठ्य विषय संपूर्ण रूप से संस्कृत तथा हिन्दी भाषा में लिखा हुआ है। इसलिए इस पाठ का अधिकारी कौन होगा यह प्रश्न निश्चित रूप से उत्पन्न होता है।
- यहां पर वह छात्र अधिकारी है जो -
- काव्य कोषों को पढ़ चुका हो और व्याकरण शास्त्र को जानना चाहता हूं।
- सरल संस्कृत, संस्कृत साहित्य के सरल गद्यांश को और पद्यांश को पढ़ और समझ सके।
- सरल संस्कृत को समझ सके।
- अपने भावों को संस्कृत भाषा में लिखकर प्रकट कर सके।
- संस्कृत व्याकरण का जिज्ञासु बन सकें।

प्रयोजन (सामान्य)

- उच्चतर माध्यमिक स्तर पर पाणिनीय व्याकरण का पाठ्य रूप से योजना के कुछ उद्देश्य यहां नीचे दिए जाते हैं।
- न्याय शास्त्र और व्याकरण शास्त्र सभी शास्त्रों के अध्ययन में अति उपकारक हैं। अतः व्याकरण ज्ञान छात्र को हो यह हमारा लक्ष्य है।
- जगत में प्रसिद्ध पाणिनीय व्याकरण के कुछ सामान्य प्रकरण का ज्ञान छात्र को दसवीं कक्षा में हुआ। बचे हुए भाग का ज्ञान भी छात्रों को हो। 12वीं कक्षा में व्याप्त यह विषय है।
- संस्कृत व्याकरण के अध्ययन में समर्थ छात्र अन्य भाषाओं के भी तुलनात्मक अध्ययन में प्रवर्तित हो सके।
- संस्कृत भाषा के जिज्ञासुओं की जिज्ञासा को शांत करने में अध्येता समर्थ हो।
- छात्र संस्कृत और संस्कृति की रक्षा के लिए व्याकरण ज्ञान से समर्थ होने पर प्रयत्नशील और श्रद्धाशील हो।
- छात्र भारत की अति प्राचीन भारतीय ज्ञान संपदा, वैज्ञानिकता और सर्वजन उपकार की महिमा को गर्व के साथ संसार में प्रसारित करें।
- संस्कृत व्याकरण के सामान्य ज्ञान में वृद्धि होगी जिससे दार्शनिक ग्रंथों के सरल अंशों को पढ़कर छात्र उन अंशों का अर्थ ज्ञात कर पाने में सक्षम होंगे वे स्वयं ही मौखिक और लिखित अभिव्यक्ति करने में समर्थ होंगे।

- संस्कृत व्याकरण को पढ़कर छात्र महाविद्यालय स्तर पर और विश्वविद्यालय स्तर पर चल रहे पाठ्यक्रम में अध्ययन के लिए अवसर को प्राप्त करने में समर्थ होंगे।
- भाषा शास्त्र के चिंतन में शक्त बनेंगे।

प्रयोजन (विशिष्ट)

व्याकरण में प्रवेश के लिए सामर्थ्य

- छात्र महर्षि पाणिनि द्वारा रचित सुविख्यात ग्रंथ अष्टाध्यायी के अध्ययन में समर्थ होंगे।
- व्याकरण 12 वर्षों तक पढ़ते हैं। यह अति विशाल और विस्तृत है। इस विषय को पढ़कर पाणिनीय व्याकरण में प्रवेश करें।
- व्याकरण का अध्ययन सोपान क्रम से होता है। जब तक यह पाठ्य विषय पढ़ेंगे तब तक अन्यत्र व्याकरण नहीं पढ़ सकते हैं अत: यह विषय अनिवार्य है।
- सूत्रों की रचना कैसे की गई है इस का स्पष्ट ज्ञान हो।
- पढ़े गए सामग्री पर आश्रित प्रश्नों का उत्तर देने में योग्य होंगे।

सूक्त व्याख्या में सामर्थ्य

- समास के विविध सूत्रों को जाने।
- व्याकरण के बहुत से पारिभाषिक शब्दों को जाने।
- अधिकार और अनुवृत्ति पद योजना कैसे होती है इसको जानेंगे।
- सूत्रों के अर्थ करने में अन्य सूत्रों की उपयोगिता को समझें।
- सूत्र में विद्यमान पदों का परस्पर अनवर करने में सक्षम हों।
- सूत्र की व्याख्या करने में समर्थ हो।

सूत्र प्रयोग में सामर्थ्य

- सूत्र लक्षण कहलाता है। सूत्र जिसका संस्कार करता है वह लक्ष्य कहलाते हैं। कौन सा सूत्र किस लक्षण का संस्कार करता है इसे जान कर छात्र लक्ष्य संस्कार करने में सक्षम होंगे।
- लक्ष्य संस्कार के समय में सूत्रों के परस्पर विरोध के समाधान में समर्थ होगा।
- सभी साधु रूप और साधु वाक्य सूत्र प्रयोग के अनुसार निष्पादित करने में सक्षम होगा।

साधु शब्द प्रयोग का सामर्थ्य

- सूत्रों के व्यवहार से साधु शब्द के निष्पादन व्यवहार को निसंकोच करने में योग्य होगा।

- स्वयं संस्कृत भाषा के प्रयोग काल में अपने भाषा दोषों को जान कर व्याकरण की सहायता से दोष को दूर कर के शुद्ध भाषा प्रयोग में समर्थ होगा।
- अन्य प्रयुक्त अपर भाषा का संशोधन करने में समर्थ होगा।

पाठ्य सामग्री

पाठ्यक्रम के साथ निम्नलिखित सामग्री समायोजित होगी -

- दो मुद्रित पुस्तकें।
- एक शिक्षक अंकित -मूल्यांकन प्रपत्र दिया जायेगा। इसके साथ छात्रों के द्वारा एक परियोजना कार्य भी (प्रोजेक्ट) करना है।
- दर्शन का शिक्षण प्रायोगिक रूप से भी होगा। परन्तु प्रायोगिक परीक्षा कोई भी नहीं है।
- पाठ निर्माण करने में संपर्क कक्षाओं में अध्यापन काल में छात्रों के जीवन कौशल का अच्छी प्रकार से विकास हो ऐसा ध्यान होना चाहिए। इससे उनमें अपने आप युक्ति समन्वित चिन्तन शक्ति का विकास होगा।
- मुक्त विद्यालय में प्रवेश के बाद इस पाठ्यक्रम को विद्यार्थी एक वर्ष से प्रारंभ कर अधिक से अधिक पांच वर्षों में पूर्ण कर सकते हैं।

अङ्क मूल्यांकन विधि और परीक्षा योजना

- पत्र के (१००) सौ अंक हैं। परीक्षा का समय तीन घंटे होगा। इस पत्र का स्वरूप लिखित ही है (जैमवतल)। प्रायोगिक रूप से (Practical) कुछ भी नहीं है। रचनात्मक (Formative) योगात्मक (Summative) दो प्रकार से मूल्यांकन होगा।
- **रचनात्मक मूल्याकन** - बीस अंकों (२०) का शिक्षक अंकित कार्य का (TMA) एक पत्र है। इस का मूल्यांकन अध्ययन केन्द्र (Study Centre) में हो। इस कार्य के अंक अंकपत्रिका (Marks Sheet) में अलग से उल्लेख होगा।
- **योगात्मक मूल्याकन** - वर्ष में दो बार (मार्च मास में और अक्टूबर मास में) बाह्य परीक्षा होगी। वहाँ परीक्षा में समुचित मूल्यांकन होगा।
- प्रश्नपत्र में ज्ञान (Knowledge) अवगम (Understanding) अभिव्यक्ति (Application skill) और अवलम्ब युक्त अनुपात से प्रश्न पूछे जायेंगे।
- परीक्षाओं में अतिलघुत्तरात्मक - लघुत्तरात्मक निबन्धात्मक - प्रश्नों का भी समावेश होगा।
- दर्शन प्रस्थान परिचय, नास्तिक दर्शन, आस्तिक दर्शन, अद्वैत वेदांत इत्यादि ये मुख्य विषय होंगे। अन्य स्थानों पर प्रसक्त अनुप्रसक्त भी कुछ विषय को जानना चाहिए।
- उत्तीर्णता का परिमाप (Condition) - तैतीस प्रतिशत (३३%) अंक उत्तीर्णता के लिए (मानदंड) है।
- संस्थान की परीक्षा में उत्तर लेखन भाषा - संस्कृत (अनिवार्य) या हिन्दी

अध्ययन योजना

- निर्देश भाषा (Medium of instruction) - संस्कृत।
- स्वाध्याय काल अवधि (Self Study Hours) - २४० घंटे
- कम से कम तीस (३०) संपर्क कक्षा (Personal Contact Programme & PCP) अध्ययन केंद्र में होगी।
- भारांश - सैद्धांतिक (Theory) शत प्रतिशत। प्रायोगिक (Practical) - नहीं है।

अंक विभाजन

आगे की सारणी में देखना चाहिए।

पाठ्य विषय का उद्देश्य (पाठ्य विषय के बिंदु)

उच्चतर माध्यमिक कक्षा हेतु संस्कृत व्याकरण की पुस्तक में निम्न विषय सम्मिलित हैं। जिनका विवरण नीचे दिया गया है।

संपूर्ण पाठ्य विषय के तीन भाग किए गए हैं प्रत्येक भाग में कुछ पाठ, स्वाध्याय के लिए कितने घंटे, सैद्धांतिक परीक्षा में कितने अंश, प्रायोगिक परीक्षा में कितने अंश, और प्रत्येक अध्याय में अंक विभाजन विषय यहां दिए गए हैं।

अध्याय १: समास और स्त्री प्रत्यय (पाठ १-११)

अध्याय का औचित्य

जैसे प्रकृति और प्रत्यय के मिलन से शब्द बनता है वैसे ही दो पदों के मेल से समास बनता है। समास करना हो तो कौन सा पद पहले और कौन सा बाद में प्रयुक्त होगा यह विवेक जरूरी है। परंतु अच्छे शब्दों के निर्माण हेतु समास की कुछ अपनी प्रक्रियाएं हैं वे प्रक्रियाएं यहां पर ससूत्र प्रतिपादित हैं। समास के ज्ञान के बिना समास का अर्थ स्पष्ट नहीं होता है। अत: संस्कृत जानने वाले को थोड़ा समास ज्ञान जरूरी है। अत: विस्तारपूर्वक इस विभाग में प्रक्रियाएं स्थापित की जाएंगी।

संस्कृत भाषा में स्त्रीलिंग शब्द हैं। वह लिंग शब्द का या अर्थ का यह विचार प्रस्तुत किया जाएगा। विभिन्न शब्दों का स्त्री प्रत्यय के योग से किस तरह का रूप होता है यह ससूत्र यहां दर्शाया जाएगा। इस प्रकरण के ज्ञान से स्त्रीलिंग शब्दों की निर्माण प्रक्रिया स्पष्ट होगी।

अध्याय 2: तिङन्त प्रकरण (पाठ १२-२३)

अध्याय का औचित्य

साधु शब्द का निर्माण और व्यवहार व्याकरण का मुख्य लक्ष्य है। सुबन्त और तिङन्त भेद से पद दो प्रकार के होते हैं। तिङन्त भी परस्मैपद और आत्मनेपद के भेद से दो प्रकार का है। धातु विकरण भेद से दस गणों में विभक्त हैं। अत: इस विभाग में धातु की तिङ् प्रत्यय के योग से पद सिद्धि की प्रक्रिया सूत्र व्याख्या के अनुसार दर्शायी जाएगी। यहां भ्वादि प्रकरण प्रमुख है। जिसके ज्ञान से अन्य प्रकरणों का ज्ञान जल्द हो सकेगा वह प्रकरण यहां विस्तारपूर्वक वर्णित है। क्रियापद के निर्माण की व्याकरणात्मक प्रक्रिया इसका प्रमुख विषय है। संस्कृत में क्रियापद की सृष्टि कैसे होती है यह आकर्षक विषय यहां पर वर्णित है।

अध्याय ३: णिजन्तादि और तद्धित प्रत्यय (पाठ २४-३१)

अध्याय का औचित्य

तिङन्त प्रकरण का ही अंशभूत यह विभाग है। प्रयोजक धातु का निर्माण, इच्छार्थक धातु का निर्माण ही इस प्रकरण की विशिष्टता है। धातु उपसर्ग के योग से विशिष्ट अर्थों को बताने के लिए कभी परस्मैपद तो कभी आत्मनेपद में होती है। इस प्रकरण में वह भी भाग है। संस्कृत में कर्तरी प्रयोग, कर्मणि प्रयोग और भाव प्रयोग ये तीन प्रकार के प्रयोग होते हैं। वैसा ही प्रयोग करना हो तो धातु का रूप कैसे सिद्ध करना है यह ससूत्र यहां पर उत्पादित किया जाएगा।

तद्धितांत शब्द ही सुबन्त पद की दूसरी प्रकृति है। उसका निष्पादन भी प्रातिपदिक और तद्धित प्रत्यय के योग से ही होता है। तद्धित प्रत्यय विविध प्रकार के हैं। अतः क्रमपूर्वक उसके ज्ञान के लिए यह विभाग सहायता करेगा। प्रातिपदिक से तद्धित प्रत्यय कैसे होगा यह ज्ञान ससूत्र यहां वर्णित किया जाएगा। यहां निर्मित तद्धितांत शब्द सुबन्त प्रकरण में व्यवहार में लिया जाता है।

पाठ्य विषय का उद्देश्य (पाठ्य विषय के बिन्दु)

उच्चतर माध्यमिक कक्षा हेतु संस्कृत व्याकरण की पुस्तक में निम्न विषय सम्मिलित है-

क्र.सं.		मुख्यबिन्दु	स्वाध्याय के लिए समय	भारांश (अङ्का)
१	अध्याय - १	समासः स्त्रीप्रत्ययाः च	७८	३६
	पाठ - १	केवलसमास, अव्ययीभावसमास		
	पाठ - २	तत्पुरुषसमास - द्वितीयादितत्पुरुषसमास		
	पाठ - ३	तत्पुरुषसमास - तद्धितार्थादितत्पुरुषसमास		
	पाठ - ४	तत्पुरुषसमास - कुगतिप्रादिसमास, उपपदसमास		
	पाठ - ५	बहुब्रीहिसमास - व्यधिकरणबहुब्रीहि, समान्तप्रत्यय		
	पाठ - ६	बहुब्रीहिसमास - समासान्तप्रत्यय, निपातव्यवस्थादि		
	पाठ - ७	द्वन्द्वसमास - पूर्वपरनिपात विशेषकार्य एकशेषः		
	पाठ - ८	प्रकीर्ण समासप्रकरण		
		स्त्रीप्रत्ययः		
	पाठ - ९	स्त्रीप्रत्यय - चाप् टाप् डाप् प्रत्यय		
	पाठ - १०	स्त्रीप्रत्यय - डाप् डीप् प्रत्यय		
	पाठ - ११	स्त्रीप्रत्यय - डाप् प्रत्यय		
२	अध्याय - २	तिङन्तप्रकरण	१००	४०
	पाठ - १२	भ्वादिप्रकरण में - भू धातु के लट् लकार में रूपसिद्धि-१		
	पाठ - १३	भ्वादिप्रकरण में - भू धातु की लट् लकार मे रूपसिद्धि -२		

	पाठ – १४	भ्वादिप्रकरण में – भू धातु के लिट् और लुट् लकार में रूपसिद्धि		
	पाठ – १५	भ्वादिप्रकरणे – भूधातु लृटि लोटि च रूपसिद्धि		
	पाठ – १६	भ्वादिप्रकरणे–भूधातु लिङि लुङि लृङि च रूपसिद्धि		
	पाठ – १७	भ्वादिप्रकरणे – लट् लिट् इनके सूत्रशेष		
	पाठ – १८	भ्वादिप्रकरणे – लिट् लकारइ के सूत्रशेष		
	पाठ – १९	भ्वादिप्रकरणे–लिङ् लुङ् इनके सूत्रशेष		
	पाठ – २०	भ्वादिप्रकरण में आत्मनेपदप्रकरण		
	पाठ – २१	अदादि से दिवादिपर्यन्त – अद्, हु, दिव् धातु		
	पाठ – २२	स्वादि से रुधाादिपर्यन्त– सु तुद् रुधा् धातु		
	पाठ – २३	तनादि से चुरादिपर्यन्त– तन् क्र क्री चुर् धातु		
३	**अध्याय – ३**	**णिजन्तादि और तद्धितप्रत्यय**	**६२**	**२४**
	पाठ – २४	णिजन्त प्रकरण		
	पाठ – २५	सन्नन्त प्रकरण		
	पाठ – २६	परस्मैपदात्मनेपद प्रकरण		
	पाठ – २७	भावकर्म प्रकरण		
		तद्धिता		
	पाठ – २८	अपत्याधिकार प्रकरण		
	पाठ – २९	मत्वर्थीय प्रकरण		
	पाठ – ३०	रक्ताद्यर्थक प्रकरण		
	पाठ – ३१	ठञधिकारादि प्रकरण		

प्रश्नपत्र का प्रारूप
(Question Paper Format)

विषय - संस्कृत व्याकरण (३४६) (Sanskrit Vyakarana) **स्तर - उच्चतर माध्यमिक**

परीक्षाकाल अवधि (Time) - तीन घंटे (3 hrs) **पूर्णांक (Full Marks) - १००**

लक्ष्य के अनुसार अंक विभाजन

विषय	अंक	प्रतिशत योग
ज्ञान (Knowledge)	२५	२५%
अवबोध (Understanding)	४५	४५%
अनुप्रयोग कौशल (Application Skill)	३०	३०%
महायोग	**१००**	

प्रश्न प्रकार से अंकों का विभाजन

प्रश्न प्रकार	प्रश्न संख्या	अंक	योग
दीर्घ उत्तर प्रश्न (LA)	५	६	३०
लघुत्तर प्रश्न (SA)	१०	४	४०
सुलघुत्तर प्रश्न (VSA)	१०	२	२०
बहुविकल्पीय प्रश्न (MCQ)	१०	१	१०
महायोग	**३५**		**१००**

पाठ्य विषय विभाग के अनुसार भारांश

विषय घटक	अंक	स्वाध्याय के घंटे
समास और स्त्री प्रत्यय	३६	७८
तिङन्त प्रकरण	४०	१००
णिजन्त आदि तद्धित प्रत्यय	२४	६२
महायोग	**१००**	**२४०**

प्रश्न पत्र का काठिन्य स्तर

प्रश्न स्तर	अंक
कठिन (Difficult)	२५
मध्यम (Medium)	५०
सरल (Easy)	२५

आदर्श प्रश्नपत्र
(Sample Question Paper)

इस प्रश्न में ..... प्रश्न है। ..... और मुद्रित है।

Roll No. अनुक्रमाङ्क	४	५	०	१	५	९	१	८	३	०	०	१

Code No- गढ संख्या	55/SS/A/S
SET स्तबक:	A

संस्कृत व्याकरण
Sankrit Vyakarana
(३४६)

Day and Date of Examination ..... परीक्षा दिन और दिनाङ्क

Signature of two Invigilators निरीक्षक में हस्ताक्षर

१. .....

२. .....

सामान्य निर्देश

1. अनुक्रमाङ्क प्रश्न पत्र के प्रथम पृष्ठ पर अवश्य लिखे।
2. निरक्षण करें की प्रश्न पत्र की क्रम संख्या प्रश्नों की संख्या प्रथमपुट के प्रारम्भ में दी हुई संख्या के समान है या नहीं। प्रश्नक्रम सही है अथवा नही।
3. वस्तुनिष्ठ प्रश्नो के (क), (ख), (ग), (घ) इन विकल्पो में से युक्त उत्तर को चुनकर उत्तरपत्र पर लिखे।
4. सभी प्रश्नो के उत्तर निर्धारित समय में ही लिखें।
5. उत्तर पत्र में आत्म परिचयात्मक लेखन अथवा निर्दिष्ट स्थान को छोडकर अन्य कहीं पर भी अनुक्रमाङ्क लिखना मना है।
6. अपने उत्तरपत्र में प्रश्नपत्र की गूढसंख्या अवश्य लिखे।

संस्कृत व्याकरण (Sankrit Vyakarana)
(३४६)

परीक्षा समय अवधि (Time) तीन घंटे (3 Hrs) **पूर्णांक (Full Marks) - १००**

निर्देश-

1. इस प्रश्नपत्र में [A] भाग १०, [B] भाग १०, [C] भाग १०, [D] ५ इस प्रकार ३५ प्रश्न है।
2. प्रश्न के दक्षिण में ही समीप संख्याओं में (अङ्क × प्रश्न = पूर्णाङ्क) इस प्रकार अङ्कों का निर्देश किया है।
3. सभी प्रश्न अनिवाय हैं।

[A]

नीचे दिये गए प्रश्नों के उचित विकल्प चुनें। **१×१०=१०**

1. लिंग किस का होता है?
   (क) शब्द का (ख) अर्थ का (ग) पद का (घ) अर्थ और पद का
2. ''युवतिः'' इस शब्द में स्त्री प्रत्यय विधायक सूत्र कौन सा है?
   (क) यूनस्तिः (ख) स्त्रियाम् (ग) षिद्गौरादिभ्यश्च (घ) पुंयोगादाख्यायाम्
3. ''वयसिप्रथमे'' इसका उदाहरण क्या है?
   (क) कुमारी (ख) अजा (ग) गौरी (घ) कुन्ता
4. ''बैदी'' इस शब्द में स्त्री प्रत्यय विधायक सूत्र कौन सा है?
   (क) शाङ्र्गरवाद्यञौङिन् (ख) स्त्रियाम् (ग) षिद्गौरादिभ्यश्च (घ) पुंयोगादाख्यायाम्
5. ''क्षीयात्'' यह किस लकार का रूप है?
   (क) विधिलिङ् (ख) लृट् (ग) आशीर्लिङ्ग (घ) लट्
6. ''चिक्षिय'' इस रूपे धातु के बाद कौन सा तिङ् प्रत्यय युक्त है?
   (क) तिप् (ख) सिप् (ग) थस् (घ) थ
7. दिवादिगणीय धातुओं का कौन सा विकरण प्रत्यय होता है?
   (क) शप् (ख) श्यन् (ग) श्नुः (घ) श्नम्
8. ''हुश्नुवोः सार्वधातुके'' यह किसका अपवाद है?
   (क) अचि श्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ (ख) लोपश्चास्यान्यतरस्यांम्वोः
   (ग) उतश्च प्रत्ययादसंयोगपूर्वात् (घ) दश्च

9. धातु को सन्प्रत्यय किस अर्थ में होता है?

(क) भाव अर्थ में (ख) स्वार्थ में (ग) इच्छा अर्थ में (घ) काम अर्थ में

10. ''शैव:'' इसमें कौन सा प्रत्यय है?

(क) अण् (ख) अञ् (ग) कञ् (घ) ठञ्

[B]

नीचे दिये गए प्रश्नों के यथा निर्देश उत्तर लिखें। **२×१०=२०**

1. विग्रह क्या है और वह कितने प्रकार के हैं? १+१=२
2. केवल समास का लक्षण क्या है, उसका एक उदाहरण भी लिखें। १+१=२
3. ''द्वित्रिभ्या ष मूर्ध्न:'' इस सूत्र का क्या अर्थ है, एवं इस सूत्र का उदाहरण क्या है? १+१=२
4. ''निष्ठा'' इस सूत्र का अर्थ लिखें, ''निष्ठा'' यह किस की संज्ञा है और यह किस सूत्र से विहित है? १+१=२
5. द्वंद्व समास विधायक सूत्र लिखें एवं सूत्र का अर्थ और उदाहरण भी लिखें। १+१=२
6. ''जग्लौ'' इस शब्द में कौन सी धातु है, उसका अर्थ क्या है, एवं यह रूप किस लकार में बनता है? १+१=२
7. ''अनुदात्तोपदेश...'' सूत्र को पूरा करें एवं उसका अर्थ लिखें। १+१=२
8. सु धातु के लिटि लकार मध्यम पुरुष बहुवचन में कितने रूप होते हैं, वह कौन कौन से हैं? १+१=२
9. ''अतिष्ठिपत्'' यहां उपधा का इकार आदेश विधायक सूत्र कौन सा है लिखें, एवं सूत्र का अर्थ बताएं। १+१=२
10. ''कन्या'' का क्या आदेश होता है वह आदेश किस सूत्र से होता है? १+१=२

[C]

नीचे दिये गए प्रश्नों के विस्तार से उत्तर के द्वारा समाधान करें। **४×१०=४०**

1. उपकृष्णम् या अधिहरि कोई एक रूप ससूत्र सिद्ध करें।
2. कुमारी या इत्वरी कोई एक रूप ससूत्र सिद्ध करें।
3. कुम्भकार: या महाराज कोई एक समास ससूत्र सिद्ध करें।
4. वृत्ति का स्वरूप लिखकर उसके भेदों को प्रतिपादित करें।
5. बभूव या अकटीत् कोई एक रूप ससूत्र सिद्ध करें।
6. एधामास या एधस्व कोई एक रूप ससूत्र सिद्ध करें।
7. ''हु-झल्भ्योहेर्धि:'' यह या ''लुङसनोर्घस्लृ'' यह किसी एक सूत्र की उदाहरण सहित व्याख्या करें।

8. ''पिपठिषति'' या ''जिगमिषति'' कोई एक रूप सिद्ध करें।

9 ''मीमांसकः'' यह रूप ससूत्र सिद्ध करें।

10. ''गार्ग्यः'' यह रूप ससूत्र सिद्ध करें।

[D]

अधोप्रदत्त पाँचों प्रश्नों के विस्तारपूर्वक उत्तर के द्वारा समाधान करें- ६×५=३०

1. ''तद्धितार्थोत्तरपदसमाहारे च'' इस सूत्र की व्याख्या करें।

2. ''विधिनिमन्त्रणामन्त्रणाधीष्टसंप्रश्नप्रार्थनेषु लिङ्'' इस सूत्र की व्याख्या करें।

3. ''भवति'' या ''एधते'' कोई एक रूप ससूत्र सिद्ध करें।

4. ''असावीत्'' या ''अरुणत्'' कोई एक रूप ससूत्र सिद्ध करें।

5. ''ओः पुयण्ज्यपरे'' यह या ''अर्तिह्वीव्लीरीक्नूयीक्ष्माय्यातांपुङ्णौ'' किसी एक की उदाहरण सहित व्याख्या करें।

उत्तरमाला

[A]

दसों प्रश्नों का युक्त विकल्प- **१×१०=१०**

१. (ख)	२. (क)	३. (क)	४. (क)	५. (ग)
६. (घ)	७. (ख)	८. (क)	९. (ग)	१०. (क)

[B]

दसों प्रश्नों के यथा निर्देश उत्तर- **२×१०=२०**

1. वृत्त्यर्थावबोधक वाक्यं विग्रहः। स द्विविधः। लौकिकोऽलौकिकश्च। परिनिष्ठितत्वात्साधुलौकिकः। प्रयोगानर्होऽसाधुरलौकिकः। इति। १+१=२

2. अव्ययीभावादिविशेषसंज्ञाभिः विनिर्मुक्तः यः समासः स केवलसमासः। तदुदाहरणं हि भूतपूर्वः इति। १+१=२

3. बहुव्रीहिसमासे द्वित्रिभ्यां परस्य मूर्ध्नः समासान्तः तद्धित संज्ञकः षप्रत्ययो भवति। तदुदाहरणं हि द्विमूर्धः इति। १+१=२

4. निष्ठान्तं बहुव्रीहौ पूर्व भवति। निष्ठा इति क्तक्तवतू निष्ठा इति सूत्रेण विहिता तप्रत्ययस्य क्तवतुप्रत्ययस्य च संज्ञा।१+१=२

5. द्वन्द्वसमासविधायकं सूत्रं तावत् चार्थे द्वन्द्वः इति। तस्य अर्थो हि अनेकं सुबन्तं चार्थे वर्तमानं विकल्पेन समस्यते, सच द्वन्द्वसंज्ञको भवति। उदाहरणं च ईषकृष्णौ इति। १+१=२

6. जग्लौ इत्यत्र ग्लै धातुः हर्षक्षय इति तदर्थः। लिटि तिपि इदं रूपम्। १+१=२

7. अनुदात्तोपदेशवनतितनोत्यादीनामनुनासिकलोपो झलि क्ङिति इति सूत्रम्। सूत्रार्थ अनुनासिकान्तानामेषां वनतेश्च लोपः स्यात् झलादौ किति ङिति च परे। १+१=२

8. द्वे रूपे ते च सुषुविढ्वे-सुषुविध्वे। १+१=२

9. तिष्ठतेरित् इति सूत्रम् सूत्रार्थः-उपधाया इदादेशः स्याच्चपरे णौ। १+१=२

10. कन्यायाः कनीन आदेशः भवति। स चादेशः कन्यायाः कनीन च इति सूत्रेण भवति। १+१=२

[C]

दसों प्रश्नों के कुछ विस्तार के साथ उत्तर के द्वारा समाधान- **४×१०=४०**

1. बिन्दु - १.११/१.८ देखें

2. बिन्दु १०.३/१०.६ देखें

3. बिन्दु - ४.५/४.११ देखें

4. बिन्दु ८.१ देखें

5. बिन्दु १४.१/१९.९ देखें

6. बिन्दु २०.४/२०.१० देखें

7. बिन्दु – २१.५/२१.७ देखें

8. बिन्दु – २५.२/२५.८ देखें

9. बिन्दु – ३०.७ देखें

10. बिन्दु २८.६ देखें

[D]

पांचों प्रश्नों का बहुत ही विस्तार के साथ समाधान– **६×५=३०**

1. बिन्दु ३.२ देखें

2. बिन्दु १६.१ देखें

3. बिन्दु १३.६/२०.१ देखें

4. बिन्दु २२.५/२२.११ देखें

5. बिन्दु २४.३/२४.४ देखें